

स्वर्गवासी साधुचरित श्रीमान् डालचन्दजी सिंघी



पान् श्रीचहादुर सिंहजी सिंघीके पुण्यश्लोक पिता

जन्म वि स १९२१ माघ वदि ६ 卐 स्वर्गवास वि स १९८४ पौष मदि ९

दानशील-साहित्यरसिक संस्कृतिप्रिय  
स्व. श्रीबाबू बहादुरसिंहजी सिंघी



अजीमगज कलकत्ता

जन्म ता २८ १ १८८५ ]

[ मृत्यु ता ७ ७ १९४४

# सिंघी जैन ग्रन्थ माला

\*\*\*\*\*[ग्रन्थांक ५०]\*\*\*\*\*

भदन्त गुणप्रभ विरचित

[मूलसर्वास्तिवादीय]

## विनयसूत्र



SINGHI JAIN SERIES

\*\*\*\*\*[NUMBER 50]\*\*\*\*\*

## VINAYASŪTRA

OF

MŪLA SARVĀSTIVĀDIN School of Buddhism

by

BHADANTA GUṆAPRABHA

कलकत्ता निवासी

साधुचरित-श्रेष्ठिवर्य श्रीमद् डालचन्दजी सिंघी पुण्यस्मृतिनिमित्त  
प्रतिष्ठापित एवं प्रकाशित

# सिंघी जैन ग्रन्थमाला

[ जैन आगमिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, वैज्ञानिक, कथात्मक-इत्यादि विविधविषयगुणित  
प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, प्राचीनगूँजर, -राजस्थानी आदि माना भाषानिवद्ध सांप्रजतीय पुरातन  
वाङ्मय तथा नूतन संशोधनात्मक साहित्य प्रकाशनी सर्वप्रथम जैन ग्रन्थमाला ]

प्रतिष्ठाता

श्रीमद्-डालचन्दजी-सिंघीसत्पुत्र

स्व० दानशील-साहित्यरसिक-संस्कृतिप्रिय

श्रीमद् वहादुर सिंहजी सिंघी



प्रधान सम्पादक तथा संचालक

आचार्य जिन विजय मुनि

अधिष्ठाता, सिंघी जैन शास्त्र शिक्षापीठ  
निवृत्त ऑनररी डायरेक्टर

भारतीय विद्या भवन, बम्बई

\*

ऑनररी फाउंडर-डायरेक्टर

राजस्थान ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, जोधपुर ( राजस्थान )

ऑनररी मेंबर - जर्मन ओरिएण्टल सोसाइटी, बर्लिन, भाग्यशंकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट, पुना  
( दक्षिण ), गुजरात साहित्यसभा, अहमदाबाद ( गुजरात ), विवेकानन्द वैदिक  
शोध प्रतिष्ठान, होनियारपुर ( पञ्जाब ) इत्यादि ।

\*

संरक्षक

श्री राजेन्द्र सिंह सिंघी तथा श्री नरेन्द्र सिंह सिंघी

व्यवस्थापक

अधिष्ठाता, सिंघी जैन शास्त्र शिक्षा पीठ

भारतीय विद्या भवन, बम्बई

प्रकाशक - ज. ह. दवे, ऑनररी डायरेक्टर, भारतीय विद्या भवन, बम्बई, नं. ७

मुद्रक - लक्ष्मीबाई नारायण चौधरी, निर्गमसागर प्रेस, २६-२८ चोल्हाट स्ट्रीट, बम्बई २.

भदन्त गुणप्रभ विरचित  
[ मूल सर्वास्तिवादीय ]

# विनयसूत्र



संपादनकर्ता  
त्रिपिटकाचार्य, महापण्डित  
श्री राहुल सांकृत्यायन



प्रकाशनकर्ता

अधिष्ठाता, सिंघी जैन शास्त्र शिक्षा पीठ  
भारतीय विद्याभवन, बम्बई



विक्रमान्द २०१० ]

प्रथमावृत्ति

[ क्रिस्ताब्द १९६१ ]

ग्रन्थांक ५० ]

सर्वाधिकार सुरक्षित

[ मूल्य रु० ८/८० ]

# SINGHI JAIN SERIES

ॐ अद्यावधि मुद्रितग्रन्थ नामावलि ॐ

- |                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   |                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                                   |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| <p>१ मेरुताचार्यरचित प्रबन्धचिन्तामणि<br/>मूल संस्कृत प्रथ</p> <p>२ पुरातनप्रबन्धसमग्र बहुविध ऐतिहासिकपरिपूर्ण<br/>अनेक प्राचीन निरूप स्वयं</p> <p>३ राजशेखरसूरिरचित प्रबन्धश्लोका</p> <p>४ जिनप्रभसूरिरचित विविधतीर्थकथा</p> <p>५ मेघविजयोपाध्यायकृत देवानन्दमहाकाव्य</p> <p>६ यशोविजयोपाध्यायकृत जैनतर्कभाषा</p> <p>७ हेमचन्द्राचार्यकृत प्रमाणमीमांसा</p> <p>८ भट्टावल्लभदेवकृत अक्षरद्वन्द्वप्रथयी</p> <p>९ प्रबन्धचिन्तामणि - हिन्दी भाषांतर</p> <p>१० प्रभाचन्द्रसूरिरचित प्रभावकथरित</p> <p>११ सिद्धिचन्द्रोपाध्यायरचित भानुचन्द्रगणिकरित</p> <p>१२ यशोविजयोपाध्यायविरचित ज्ञानविन्दुप्रकरण</p> <p>१३ हरियोगाचार्यकृत बृहन्कथाकोश</p> <p>१४ जैनपुस्तकप्रशस्तिसमग्र, प्रथम भाग</p> <p>१५ हरिमद्रसूरिविरचित भूर्गुख्यान (प्राकृत)</p> <p>१६ दुर्गदेवकृत रिष्टसमुच्चय (प्राकृत)</p> <p>१७ मेघविजयोपाध्यायकृत दिग्विजयमहाकाव्य</p> <p>१८ कवि अश्वल रत्नमानकृत सन्देशरासक (अपभ्रंश)</p> <p>१९ भर्तृहरिकृत शतकप्रवादि सुभाषितसमग्र</p> <p>२० शान्ताचार्यकृत न्यायावतारवातिक-वृत्ति</p> <p>२१ कवि धादिलक्ष्मिरचित पद्मसिरीचरित (अप०)</p> <p>२२ महेश्वरसूरिकृत नागपचमीबहा (प्रा०)</p> <p>२३ श्रीभद्रबाहुआचार्यकृत भद्रबाहुसहिता</p> <p>२४ जिनेश्वरसूरिकृत कथाकोपप्रकरण (प्रा०)</p> | <p>२५ उदयप्रभसूरिकृत धर्मानुद्दयमहाकाव्य</p> <p>२६ जयसिंहसूरिकृत धर्मापदशमाला (प्रा०)</p> <p>२७ कौकिलविरचित लीलावहई बहा (प्रा०)</p> <p>२८ जिनदत्ताख्यानद्वय (प्रा०)</p> <p>२९ ३० ३१ स्वयंभूविरचित पद्मचरित<br/>भाग १ २ ३ (अप०)</p> <p>३२ सिद्धिचन्द्रकृत काव्यप्रकाशखण्डन</p> <p>३३ दामोदरपण्डित कृत उक्तिच्यक्तिप्रकरण</p> <p>३४ मित्रमित्र विद्वत्त कुमारपाठचरितसमग्र</p> <p>३५ जिनपालोपाध्यायरचित खरतरगण्ड बृहद्गुर्वावलि</p> <p>३६ उद्योतनसूरिकृत कुवलयमाला कथा (प्रा०)</p> <p>३७ गुणपालमुनिरचित जनुचरिय (प्रा०)</p> <p>३८ पूर्वाचार्यविरचित जयपावड-निमित्तशास्त्र (प्रा०)</p> <p>३९ भोजनूपतिरचित झुझारमञ्जरी (संस्कृत कथा)</p> <p>४० धनसारगणीकृत-भर्तृहरिकृततकप्रयटीका</p> <p>४१ कौटिल्यकृत अथशास्त्र सटीक (कतिपयअंश)</p> <p>४२ विश्वसिंहसमग्र विश्वसिंहसमग्र - विश्वसिंहविवेणी<br/>आदि अनेक विश्वसिंहसं सम्मुख</p> <p>४३ महेश्वरकृत नर्मदासुन्दरीकथा (प्रा०)</p> <p>४४ हेमचन्द्राचार्यकृत छन्दोऽनुशासन</p> <p>४५ वस्तुपालगुणवर्णनामक काव्यद्वय<br/>कीर्तिकीर्तुसा तथा सुकृतसकीर्तन -</p> <p>४६ सुकृतकीर्तिकीर्तनीआदि वस्तुपालप्रशस्तिसमग्र</p> <p>४७ विशिषमच्छीय पद्यावलिमसमग्र</p> <p>४८ तयसोमविरचित मन्त्रीकर्मचन्द्रप्रथमप्रबन्ध</p> <p>४९ गुणप्रभाचार्यकृत विनयसूत्र (बौद्धशास्त्र)</p> |
|-----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|

## Shri Bahadur Singh Singhi Memoirs Dr. G. H. Buhler's Life of Hemachandrāchārya Translated from German by Dr Manilal Patel, Ph D

- 1 स्व बाबू धीरहादुरसिंहरी सिंघी रसुतिप्रथ [ भारतीयविद्या भाग ३ ] सन १९४५
- 2 Late Babu Shri Bahadur Singhi Singhi Memorial Volume  
BHARATIYA VIDYA [Volume V] A D 1945
- 3 Literary Circle of Mahamatya Vastupala and its Contribution  
to Sanskrit Literature By Dr Bhogilal J Sandesara,  
M A, Ph D (SJS 33)
- 4-5 Studies in Indian Literary History Two Volumes  
By Prof P K Gode, M A (S J S No 37-38)

## ॐ संप्रति मुद्र्यमाणग्रन्थनामावलि ॐ

- |                                                                                                                                  |                                                                                                                                                                     |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|
| <p>१ जैनपुस्तकप्रशस्तिसमग्र, भाग २</p> <p>२ रामचन्द्रकविरचित-मल्लिकार्जुनसुन्दरितामृतसमग्र</p> <p>३ जयपावड तथा चूडामणि पात्र</p> | <p>४ तरुणप्रभाचार्यकृत पद्मवदकवालाबोधवृत्ति,</p> <p>५ प्रभुप्रसूरिकृत मूलसुद्धिप्रकरण-सटीक</p> <p>६ कुवलयमाला कथा, भाग २</p> <p>७ सिद्धिलक्ष्मिरचित मन्त्रारणहस</p> |
|----------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|---------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------------|

# भद्रन्तगुणप्रभविरचितं

[ मूलसर्वास्तिवादीयं ]

## विनयसूत्रम् ।

१. प्रव्रज्यावस्तु ।

§ १, आमणेरत्वोपनयम् ।

॥ नमो बुद्धाय ॥

अथ निर्याणवृत्तम् <sup>(१)</sup> । सर्वस्मिन् सन्निपतिते संघे कृतेदं वेशं निपत्य  
प्रगृहीताञ्जलिमुकुडकस्थं वृद्धान्तं याचितवन्तं त्रिज्ञप्तिचतुर्थेन कर्मणा सह प्रव्र-  
ज्योपसंपदाबुपनयेयुरिति पुराकल्पः <sup>(२)</sup> । निःश्रितस्य कश्चिद् भिक्षुं तत्रोपा-  
ध्यायतया प्रव्रज्योपसम्पदौ <sup>(३)</sup> । पृष्टान्तरायिकं परिशुद्धाय पूर्वोपाध्यायत्वे-  
नावकाशं कुर्यात् <sup>(४)</sup> । नानुपसम्पन्नस्य पूर्वमुपासकत्व-श्रामणेरत्व-भिक्षुत्वाना-  
मुचरम् <sup>(५)</sup> । शरणगत्यभ्युपगमवचनोपक्रममुपासकत्व-श्रामणेरत्वाभ्युपगमवचनं  
कुर्वीत <sup>(६)</sup> । अनन्तरमतशिक्षतिर्त्त(शैक्षता ?)मनभ्युपगमरूपेण <sup>(७)</sup> । स्वमुपास-  
कतामुपनीयारोचकाय संघस्वार्पयेत् भिक्षवे <sup>(८)</sup> । कश्चि( ? चि ) त् परिशुद्ध्या  
( ? द्व इ )तीति पृष्ट्वा श्रद्धमानयेत् <sup>(९)</sup> । सर्वसन्निपातेन वा संनिपण्णेलुलयनं  
वा <sup>(१०)</sup> । स चेत् परिशुद्ध [ इ ] तीति सर्वे ब्रूयुः <sup>(११)</sup> । उपाध्यायं याचेत् <sup>(१२)</sup> ।  
केशश्मश्रुतारयेताच्छुडम् <sup>(१३)</sup> । अवतार्यतां चूडेति पृष्टेनानुज्ञाते ( त ए ) तान् <sup>(१४)</sup> ।  
स्नायात् <sup>(१५)</sup> । उपाध्यायः कापायाणि वस्त्राणि दद्यात् <sup>(१६)</sup> । पादयोर्निपत्य  
प्रतिगृह्णीत <sup>(१७)</sup> । उपाध्यायः प्रावृणुयात् <sup>(१८)</sup> । व्यञ्जनं प्रत्यवेक्षेतासंचेतितम् <sup>(१९)</sup> ।  
प्रव्रज्यामुपनयेत् शरणगमनोपक्रमम् <sup>(२०)</sup> । याञ्जानन्तरं वा <sup>(२१)</sup> । श्रामणे-  
रत्वोपनायिनेऽर्पयेत् भिक्षवे <sup>(२२)</sup> । कश्चित् परिशुद्ध [ इ ] तीति पृष्ट्वा श्रद्धमुपनयेत् <sup>(२३)</sup> ।  
आचार्यः <sup>(२४)</sup> । रहोनुशंसककर्मकारकनिःश्रयदायकपाठकाश्च <sup>(२५)</sup> । वृत्तेऽर्थे  
भूतत्वम् <sup>(२६)</sup> । अभ्युपगमताबुपाध्यायस्य याञ्जायां तदुद्भूतिः <sup>(२७)</sup> । आवृत्तौ  
वृत्तीये शै(र्थे ?) न्त्यायां वृत्तत्वम् <sup>(२८)</sup> । तद्यथा परोत्कीर्चनकाले श्रामणेरत्वस्य <sup>(२९)</sup> ।  
पश्चिमोत्रोपाध्यायत्वस्य <sup>(३०)</sup> । पर्यन्ते निःश्रयदानसैकरात्रं निःश्रयत्वेन प्रत्यु-

पस्थानम् ॥१॥ । पाठस्य त्रिरेकगाथापरिवर्चनम् ॥१॥ । नापाठनाभिप्रायेणो-  
 चारणे पाठत्वम् ॥१॥ । नान्यथैतं उपस[म्पा] दयेत् ॥१॥ । नैवमन्यम् ॥१॥ ।  
 नानुक्त्वा सहितमर्थहेतोर्नाम गृह्णामीत्युपाध्यायनाम गृह्णीयात् ॥१॥ ।

॥ [इति] धामणेत्त्वोपनयविधिः ॥

ॐ

### § २, उपसम्पद्धिः ।

संधादुपसंपत् ॥१॥ । उपाध्यायतायामुन्मुसीभूतः कर्मकारकमधीच्छेद् रहोनु-  
 शासकश्च मिथुम् ॥१॥ । उपाध्यायं याचेत् ॥१॥ । स स्वयमेनं त्रिचीवरमधिष्ठा-  
 पयेत् ॥१॥ । पात्रश्लोपदर्शय मोनमधिकं पा(भा ?)ण्डपेति ( ? ) संघे ॥१॥ । सुपा-  
 त्रमित्यनेवं ब्रूयुः सर्वे ॥१॥ । अपक्रमिते क इत्यारयाप्य रहोनुशामकमुत्साह  
 कर्मकारकः संवर्त(?)पेनमनुज्ञापयेत् ॥१॥ । शृणु त्वमहो रहसमनुशिष्यात् ॥१॥ ।  
 तिष्ठ मा शब्दिता गमिष्यसीलेनमुत्तना समनुष्टिष्ठ इति संघाय परिशुद्धिं  
 निवेद्य किमागच्छस्वित्यागमनं पृच्छेत् ॥१॥ । स चेत् परिशुध्य ( द्व इ )तीति  
 सर्वे ब्रूयुः ॥१॥ । उपसंपदं कर्मकारको याचयेत् ॥१॥ । ज्ञापयित्वा संधान्तरायिकं  
 पृच्छेत् ॥१॥ । उपसंपदमुपनयेत् ॥१॥ । ह्याय( ? यां ) वेदयेतानन्तरं मिताम् ॥१॥ ।  
 सं( ? शं ) बुना चतुरद्वलेनैतत् साधु ॥१॥ । पुरुषत्वेनास्य वानुव्यवहारः ॥१॥ ।  
 अहोरात्राशपूर्णाह्वादिभ्यम् ॥१॥ । समयश्च पञ्चैते ॥१॥ । हैमन्तिको ग्रैष्मिको वार्षिको  
 मितवार्षिको वैश्वानरिर्क इति ॥१॥ । चातुर्मासि नौ पूर्वौ ॥१॥ । मासः परः ॥१॥ ।  
 ततोऽहोरात्रतः ॥१॥ । तदूनमन्यो मासत्रयम् ॥१॥ । निःश्रयानरोचयेत् ॥१॥ ।  
 पतनीयान् धर्मान् ॥१॥ । श्रमणकारकाश्च ॥१॥ । समप(म्प ?)न्नतां सम्यक्तया च  
 प्रेक्षितस्योद्गाह शीलसामान्यगततरागणे नियुञ्जीत् ( ? त ) ॥१॥ । यात्रिकमन्ध-  
 न्यप्रतिविम्बने ॥१॥ । विनीतसंवासायाम् ॥१॥ । प्रयोजनानुष्ठाने ॥१॥ । संपद्य-  
 मानतामनाख्यातसमाचपरिज्ञानस्याचक्षीत ॥१॥ । आदरे नियुञ्जीत ॥१॥ । सौपा-  
 याख्यानश्च संपादने ॥१॥ ।

॥ [इति] उपसम्पद्धिः ॥

ॐ

( क ) नि श्रयगतम् ।

नानवलोक्य निःश्रयं निःश्रितः करणीयं कुर्यात् ॥१॥ । मुखोच्चारप्रसावम् ॥१॥ ।  
 दन्तकाष्ठविसर्जनं सोपविचारे विहारे चैत्याभिवन्दनम् ॥१॥ । एकान्तं  
 पञ्चाशन्वामपर्यन्ता विरमतो गमनं पात्रचीव(कर्मणो ग्लानोपस्थाने को  
 ( ? कौ ) कृत्यप्रतिविनोदने पापकट्टिगतप्रतिनिःसर्गे तीत्रमौत्सुक्यमापद्येता-



होवतारं कुर्यां कारयेयं वेति ॥१॥ । प्रणिघातुकामे संघेऽहो वत संघोऽस्येदं प्रणि-  
धिकर्म न कुर्यादिति ॥२॥ । कृतेऽवसारयेदिति ॥३॥ । परिवासमूलपरिवास-  
मानास्थमूलमानास्थावर्त्तनार्थिनि निःश्रयेऽहो वत संघस्य परिवासादचतुष्कं  
दद्यादावहेदिति ॥४॥ । सोऽस्यैतदसौ कुर्यादित्सृज्यावलोकनम् ॥५॥ । नोनदशवर्ष  
उपसंपदोपाध्यायत्वनिःश्रयत्वानिःश्रितवासान् कुर्यात् ॥६॥ । नासमन्विते  
केनचिदनन्तरेभ्यः समायोगेन ॥७॥ । ग्लानोपस्थानकौकृत्यप्रतिविनोदनपाप-  
कद्वष्टिगतप्रतिनिःसर्गानभिरतिस्थानप्रमीलनानां करणकारणे सीमार्थम् ॥८॥ । पा-  
[प]कै(?)क्षत्वादपञ्चके सशीलवत्ता वाह(हु?)श्रुत्यम् ॥९॥ । पिटकाभिज्ञत्वम् ॥१०॥ ।  
ग्रहण एषां प्रतिबलत्वम् ॥११॥ । अधिशीलचित्तप्रज्ञं शिक्षणायाम् ॥१२॥ । प्रतिव-  
लत्वं वा शिक्षणायाम् ॥१३॥ । एवमध्याचारविनयप्रातिमोक्षम् ॥१४॥ । श्रद्धाशील-  
श्रुतत्यागप्रज्ञासम्पन्नत्वम् ॥१५॥ । शीलसमाधिप्रज्ञाविमुक्तितज्ज्ञानदर्शने ॥१६॥ । सा-  
रब्धवीर्यत्वप्राज्ञत्वं च ॥१७॥ । स्मृतिमत्त्वम् ॥१८॥ । प्रतिसंलील(?)नत्वम् ॥१९॥ ।  
समाहितत्वम् ॥२०॥ । शैक्षता ॥२१॥ । अशैक्षता ॥२२॥ । उत्पत्तिप्रज्ञस्यनुप्रज्ञासि-  
प्रतिक्षेपाभ्यनुज्ञाभिज्ञत्वम् ॥२३॥ । आन्तरायिकानान्तरायिकाभिज्ञत्वं ख्यापितानु-  
शासकत्वम् ॥२४॥ । सहग्राहणप्रतिबलत्वेन निःश्रयस्योपनिःश्रयस्य वा ॥२५॥ । आपत्ये  
(च्य?)नापत्तिगुरुलघुताभिज्ञत्वप्रवृत्तप्रातिमोक्षविस्तरत्वम् ॥२६॥ । वृद्धाभावे नवकं  
निःश्रयेत् ॥२७॥ । सामीचिं केवलं ज्ञापयेत् ॥२८॥ । चरेदनिःश्रितः पञ्चवर्षः पश्चिम-  
सम[?] योगेन समचित्तजनपदचारिकम् ॥२९॥ । नान्यस्यैविधोऽपि ॥३०॥ ।

॥ [ इति ] निःश्रयगतम् ॥

( ) , \*

(ख) सग्राह्यगतम् ।

मासि(सि?) तीर्थे इति प्रव्रज्यार्थमुपसंक्रान्तं पृच्छेदुपसम्पादकांश्च ॥३१॥ ।  
नानाराधितचित्तसृज्य शक्यमाग्रेयश्च जटिलं तीर्थे प्रवाजयेयुरुप-  
संपादयेयुर्वा कृते तत्तीर्थानाराधितादितीर्थान्तरवर्ज[न?]म् ॥३२॥ । रत्नानां  
वर्णस्य तीर्थानामवर्णस्य भूतस्योक्तावकुप्यत्वमाराधितचित्तता ॥३३॥ । तदर्थ-  
मत्तद्वन्तमेनं कृतोपासकतान्तं चतुरो मासान् परिवासयेत् संघो दत्त्वा परिवासं  
कर्मणा ॥३४॥ । संघात् तस्य भक्तम् ॥३५॥ । उपाध्यायाचीवरम् ॥३६॥ । कर्तृत्वञ्च  
कर्मादानस्य ॥३७॥ । परिपूर्णपञ्चदशवर्षोऽसीति प्रव्रज्यार्थमुपसंक्रान्तं पृच्छेत् ॥३८॥ ।  
नोनमसमर्थं काकोड्यायने समर्थं वा सप्तवर्षं प्रवाजयेयुः ॥३९॥ । नैकत ऊर्ध्व  
श्रमणोदेशमुपस्थापयेत् ॥४०॥ । अरुचिश्चेदनेकध्वं प्रव्रज्यायां प्रव्रज्यातिरिक्तगुप-  
सम्पादयेत् ॥४१॥ । ऊनश्चेदन्यस्याप्युपनिःश्रयर्थमर्पयेत् ॥४२॥ । नासौ तमाछि-  
(च्छि)घात् ॥४३॥ । उपसंपादयेदप्रयच्छतो वलादादाय कृ[त]दासः (?) ॥४४॥ ।

व्यसिते(स्ति ते ?) कस्यचित् किञ्चिद्देयमल्पं वा प्रभूतं वा "१" । जीवतिपितृक-  
 मननुज्ञातम् "१" । ताव्या (?) मद्दूरदेशं प्रव्रज्यापेक्ष[म् ?] सप्ताहं धारयेत् "१" ।  
 नानारोचितं दूरदेशमप्येनं संघे प्रत्राजयेत् "१" । युक्तं प्रव्रज्यापेक्षस्य संघेन भक्त-  
 दानम् "१" । कृतानुज्ञातोऽपि मातापितृभ्यामन्ते मुक्त्वा दूरदेशकम् "१" । मासि  
 ग्लान इत्युपसंक्रान्तं पृच्छेत् "१" । मा ते ग्लान्यं किञ्चिदस्तीति वा "१" ।  
 विशेषत उपसंपादकाः "१" । न ग्लानं प्रत्राजयेयुरुपसम्पादयेयुर्ना "१" । कृत-  
 प्रारूपप्रणिहितात् "१" । नास्त्वस्य ग्रहा(रो ?)हणधर्मतेति च "१" । नाशन-  
 मेवं च (त ?)स्य लिङ्गिनः "१" । निर्मितः "१" । पण्डकः "१" । पाञ्चवि-  
 ध्यमस्य जाल्या पक्षासक्तप्रादुर्भावि(वे ?)र्ययापत्कृत इति "१" । अन्त्यस्यात्र  
 दोषभक्तौ नाशनम् "१" । तीर्थिकापभ्रा(पक्रा)न्तकः "१" । समाचेदं प्रव्रज्यस्य  
 तद्दुष्टैर्निक्षिप्येदं चीवरं तेन ध्वजेन तत्रारुणोद्गमने तत्रम् "१" । अकृते दोर्ना (पो ?)  
 न्यथा स्तेयस्य "१" । माहृषातकः "१" । पितृषातकः "१" । अर्हद्वातकः "१" ।  
 संघभेदकः "१" । तथागतस्यान्तिके दुष्टचित्त (चेन ?) रुधिरोत्पादकः "१" ।  
 भिक्षुणीदूषकः "१" । चतुर्णां पाराजिरानामन्यतमाभापत्तिमापन्नः "१" ।  
 तेभ्युपपन्नोः ( ? भ्य उपपन्नः ) स्याचेत् सामग्री पुनः प्रणिधानम् "१" ।  
 अदर्शनोक्तौ मृषा चेत् प्राभश्चित्तिरुम् "१" ।

हस्ताच्छिन्ना व्व (?) पादच्छिन्ना अङ्गुलीफणहलकाः । ।

अनोष्टकाश्च चित्राङ्गा अतिवृद्धा अतिबालकाः ॥

लज्जः काण्डरिकः काणः कुलिः कुञ्जोऽथ वामनः ।

गलगण्डमूकप्रधिराः पीठसर्पि ष्ठीवर्दी ( ? श्लिषाटकः ) ॥

स्त्रीछिन्ना भारच्छिन्ना मार्गच्छिन्नाश्च ये नराः ।

तालमुक्ता कन्दलिच्छि(च्छि)न्ना एवं रूपा हि पुरुषाः ॥

—प्रतिक्षिता गर्हापिणा ॥

प्रासादिकञ्च ( ? स ) प्रव्रज्या परिशुद्धस्योपसंपदा ।

आख्याता सत्यनाम्ना वै संबुद्धेन प्रज्ञानता ॥

॥ [ इति ] संप्राप्तगतम् ॥

ॐ

§ ३, क्षुद्रकादिगतम् ।

कुद्राजभटः "१" । अननुज्ञातं राज्ञा दूरदेशरुम् "१" । कृच्छ्रोच( ? च )ज-  
 वघकः "१" । न रथकारचण्डालपुकसतद्विधानं प्रत्राजयेत् "१" । निदर्शनं  
 हस्ताच्छिन्नादयः "१" ।

हरिद्रकेशा हरिकेशा हरितकेशास्तथैव च ।

अवदातकेशाश्च ये नरा नागकेशा अकेशकाः ॥

घा ( ? घं ) टाशिरा बहुशिरा अतिस्थूला [ : ] श्लिपाटकाः ।

खरशूकरशीर्षाश्च द्विशीर्षा अप्यशीर्षकाः ॥

हस्तिकर्णा अधकर्णा गोगमर्कटकर्णकाः । खरसूकरकर्णाश्च एककर्णा अकर्णकाः ॥

लोहिताक्षा तिवदाक्षाश्रुद्धाक्षातिपिङ्गलाः । काचाक्षा बुद्धुदाक्षाश्च एकाक्षा [ अ ] प्यनक्षकाः ॥

हस्तिनासा [ अ ] ध्वनासा गोगमर्कटनासकाः । खरसूकरनासाश्च एकनासा अनासकाः ॥

हस्तिजोडा अधजोडा [ १ ] गोगमर्कटजोडकाः । खरसूकरजोडाश्च एकजोडा अजोडकाः ॥

हस्तिदन्ता अधदन्ता गोगमर्कटदन्तकाः । खरशूकरदन्ताश्च एकदन्ता अदन्तकाः ॥

अतिग्रीवा अग्रीवाश्च स्कन्धाक्षा अपि कुठजकाः ।

लांगूलच्छिन्ना वाताडा एकाण्डा [ अ ] प्यनण्डकाः ॥

अतिदीर्घातिह्रस्वाश्च कृशाश्चातिकभासिनः ।

चतुर्भिश्च छविर्वर्णं चे ( ? ) ला विकटकास्तथा ॥

एवंविधानामपि तं प्रतिक्षेपं प्रधारयेत् ।

न जातिफायदुष्टं प्रव्रजितमुपस्था [ प ] येत् <sup>१५१</sup> । युज्यते नैकस्यैकोपाध्यायसै-  
केन वचसोपाद [ १ ] नमा त्रयात् <sup>१५२</sup> । अभीवस्तुल्यसमयानां परस्परं सामीचिकर-  
णस्य <sup>१५३</sup> । संप्राप्ते प्राथम्यम् <sup>१५४</sup> । न द्व्यङ्गुलादूर्ध्वमारण्यकः केशान् धार-  
येत् <sup>१५५</sup> । नैतदर्वाक्त्वाद् ग्रामान्तिकः <sup>१५६</sup> । न गोलोमकान् केशांछे ( श्ले )-  
दयेत् <sup>१५७</sup> । मुक्त्वा व्रणसामन्तकम् <sup>१५८</sup> । न चूडां कारयेत् <sup>१५९</sup> । न संवाधे  
प्रदेशे रोमकर्म कारयेत् <sup>१६०</sup> । व्रणनिमित्तरुद्धान्वयथा विज्ञान् स्वविरस्यवि-  
रानवलोक्य <sup>१६१</sup> । नाङ्गनाडीमनेतन्निमित्तम् <sup>१६२</sup> । नान्यत्र का [ र ] येत्  
क्षुरभारं वा नात्रच्छेदं भजेत वासिमुखं वा <sup>१६३</sup> । नैषां मु ( मु ? ) ष्टिं भजेत <sup>१६४</sup> ।  
भजेत लेसं मलापकृष्टेन चीवरेण केशशमश्रवत्तारयेत् <sup>१६५</sup> । धारयेत्  
केशप्रतिग्रहणम् <sup>१६६</sup> । अभावे संकक्षिकया <sup>१६७</sup> । न संस्तरे <sup>१६८</sup> । न यत्र  
सांचिकसंम [ १ ] र्जनीनिपातः <sup>१६९</sup> । अवतारयेत् ग्र [ १ ] सादादौ जीर्णो ग्लानो वाता-  
तपवर्षेषु च <sup>१७०</sup> । तं प्रदेशं परिकर्मयेत् <sup>१७१</sup> । संकीर्णे वालोच्छोरेणम् <sup>१७२</sup> ।  
एवं नखच्छेदनम् <sup>१७३</sup> । नानधिष्ठिता भिक्षुष्वैषा पुरुषेणातीतरागा केशां-  
छे ( श्ले ) दयेत् <sup>१७४</sup> । संरत्यमानामधिष्ठात्री समनुशिष्यात् स्मृतिमुपस्थापय  
किमस्मिन् पूतिकलेवरे सारमस्तीति <sup>१७५</sup> । मातृसंज्ञां भगिन्या दुहितुर्वेति  
कल्पकम् <sup>१७६</sup> । स्नानं कृते च कुर्वति <sup>१७७</sup> । पञ्चाङ्गिकं वा शौचं न नमः  
स्वायात् <sup>१७८</sup> । न भिक्षुणी पुरुषतीर्थे न स्त्रीतीर्थे चूर्णेन <sup>१७९</sup> । कल्पते मुद्रादेग-

(गै)न्धपरिभावितं चूर्णम् <sup>१८०</sup> । प्रतिग्रहणमस्य <sup>१८१</sup> । भैषज्यपरिभावितस्य च ग्लानेन <sup>१८२</sup> । न भिक्षुणी योपिति चूर्णं क्षिपेत् <sup>१८३</sup> । नाग्रयि(स्थि?) ता-  
 धस्त्यपूर्वपश्चिमनिवासितंनै(?)निःश्रयणीमधिरोहेत् <sup>१८४</sup> । नान्यदैवं स्यात् <sup>१८५</sup> ।  
 नाप्रतिच्छन्नवक्त्रया व्यतिभजेत् <sup>१८६</sup> । धारयेत् स्नानशाटकम् <sup>१८७</sup> । आम-  
 क्तिर्द्विपुटे प्राणकानाम् <sup>१८८</sup> । पत्राप्यभावे दन्धो(?) पुरतः पृष्ठतश्च प्रतिगुप्ते प्रदेश-  
 स्नानम् <sup>१८९</sup> । मोचने सक्तस्य प्राणिनोऽपि गतिः <sup>१९०</sup> । उदकभ्रमिविहार  
 एतत् <sup>१९१</sup> । छौरणं च द्रवस्य <sup>१९२</sup> । करणं स्नानशाटिकायाः <sup>१९३</sup> । इष्टकास्त्र-  
 रस्यास्यां दानम् <sup>१९४</sup> । स्यन्दनिहायाः शोधनम् <sup>१९५</sup> । भ्रमे स्नाताद्यनुत्थानम् <sup>१९६</sup> ।  
 नेह नोद्वेषेण कायं शोधयेत् पादाभ्यामन्यम् <sup>१९७</sup> । निदर्शनमेतत् तीक्ष्णशौटी-  
 रयोः <sup>१९८</sup> । अग्निना शुक्तेः शोधनम् <sup>१९९</sup> । न किञ्चित् केनचिदाशुष्टि चेल-  
 वत्सो (?) भिक्षुण्युद्धयेत् <sup>२००</sup> । नातपगतसंभावकोदकक्षीवराणि प्रवृणीत <sup>२०१</sup> ।  
 धारयेत् कायप्रोच्छनम् <sup>२०२</sup> । अभावे गृहर्त्तुमुत्कृडुकेन स्थित्वा स्नानशाटकेन  
 प्रोच्छनम् <sup>२०३</sup> । प्रतिसेवेत जेन्ताकम् (?) <sup>२०४</sup> । करण्डस्य करणमुच्छर्करे  
 साधु <sup>२०५</sup> । बहिःसंबृचस्थान्तर्विशालस्य समुद्राकृतैर्वातायनस्य मोक्षो मध्ये <sup>२०६</sup> ।  
 जालनातायनकवाटिकाचक्रिकाघटिकासूचीनाञ्च विनिवेशनम् <sup>२०७</sup> । अजपाद-  
 कदण्डोपस्थापनञ्च <sup>२०८</sup> । द्वारे कवाटार्गटकटकायामपट्टसमायोजनम् <sup>२०९</sup> ।  
 तप्तजलस्थापनार्थमभ्यन्तरपार्श्वकपोतमालाकरणम् <sup>२१०</sup> । अग्निकरणस्थाने भूमा-  
 विष्टकास्त्रदानम् <sup>२११</sup> । अनिर्वाणाय संवर्तनम् <sup>२१२</sup> । तदर्धमायसर्त्तिकजधा-  
 रणम् <sup>२१३</sup> । ज्वलत्यग्नावह्नुमाय प्रवेशपरिहरणम् <sup>२१४</sup> । तमिकानुत्पचये सकूनां  
 कडुकतैलप्रक्षिता[नाम]शौ प्रक्षेपः <sup>२१५</sup> । दौर्गन्धविनिवृत्तये धूपदानम् <sup>२१६</sup> ।  
 चिकसपिण्डिकया क्षिप्रघरणे प्रविधानम् <sup>२१७</sup> । आमलकपिण्डिकाचक्रक्षपि-  
 ण्डकोप्रासनम् <sup>२१८</sup> । तृणो भूमेरास्त्ररणमात्रैरतपचिनार्द्रत्वेन तेमनेन वा <sup>२१९</sup> ।  
 कण्डूयनार्थमायसद्विकारकरणम् <sup>२२०</sup> । छिद्रेणोपनिवर्त्य सूत्रकेनास्यास्थापन-  
 मुपधिधारिकेण गुप्तेन <sup>२२१</sup> । निर्मादित्वात्संपच्यर्थमसामधिकल्पकरणम् <sup>२२२</sup> ।  
 अस्नानं तत्र <sup>२२३</sup> । शालायांस्तदर्थं करणम् <sup>२२४</sup> । अनाशाय स्तपयक्षीवराणा-  
 मिष्टकावर्द्ध (वद्ध ?) गर्तकरणम् <sup>२२५</sup> । उदकभ्रमस्यास्य मोक्षः <sup>२२६</sup> । शिष्टानाम-  
 त्युष्णितायां जलस्यारोचनम् <sup>२२७</sup> । शीतेनास्य भेदः <sup>२२८</sup> । सेकादयोऽपि <sup>२२९</sup> ।  
 पापी (?) गोमयदन्तकाष्ठपरिपूर्णकर्परोपस्थापनम् <sup>२३०</sup> । क्षमता चेत् पुरोभक्ति-  
 काकरणम् <sup>२३१</sup> । मध्यप्रातेन प्रत्युपतिष्ठमानमज्ञातमत्रैत् (व ?) गतो निर्नानार्थं  
 पृच्छेत् <sup>२३२</sup> । द्वारपालस्यैतदर्थं स्थापनम् <sup>२३३</sup> । अप्रवेशार्थं च भिक्षोः <sup>२३४</sup> ।  
 नाश्रद्धस्यात्र प्रवेशं दद्यात् <sup>२३५</sup> । सार्द्धं विहार्यन्तेरासिकैरत्र परिकर्मकरणम् <sup>२३६</sup> ।  
 नवर्करित्यपरम् <sup>२३७</sup> । दीपनरुद्राहकतैलदन्तकाष्ठगोमयस्य मृच्चूर्णपानीयाद्युप-

स्थापनकाष्ठप्रत्यवेक्षणोद्धर्तनखेहनस्नापनसंमार्जनसंकरच्छोरणादेव <sup>११७</sup> । तेषां  
 परस्परण <sup>११८</sup> । पीठशुक्तयोश्चौक्षतां कृत्व[र] निशेषो यथास्थाने <sup>११९</sup> । सर्वत्रैषं  
 भाण्डे विधिः सर्वमुपकरं सुगुप्तकेला(ना?)पि तं कुर्यात् <sup>१२०</sup> । अल्पशब्दोऽत्र  
 प्रविशेत् <sup>१२१</sup> । प्रासादिकः <sup>१२२</sup> । सुसंघृतेर्यः <sup>१२३</sup> । संप्रजानन् <sup>१२४</sup> । नाग्रतः[ ]  
 स्थित्वा वितपेत् <sup>१२५</sup> । संगणिकावर्जनम् <sup>१२६</sup> । आर्यतूष्णीम्भावालम्बनम् <sup>१२७</sup> ।  
 त्रिदण्डकदानमन्ते <sup>१२८</sup> । नैकधीवरः परिकर्म कुर्यात् <sup>१२९</sup> । नैतत् कथ-  
 साश्रद्धेन कारयेत् <sup>१३०</sup> । अतिस्वरात्र पूर्वत्र च श्रद्धाभिसंहितम् <sup>१३१</sup> । न सिंह-  
 समशृगालसमगुच्छिष्टेत् <sup>१३२</sup> । परमो दुःशीलास्या(?)योपाध्यायानुपतिष्ठेत् <sup>१३३</sup> ।  
 मातृपितृग्लानांश्चागारिकमपि <sup>१३४</sup> । स्नानं संभारकक्षात्रेण <sup>१३५</sup> । वातदह-  
 (हर?) मूत्रगण्डपत्रपुष्पफलकाथस्नानं तदारूपम् <sup>१३६</sup> । अभ्यङ्कय( ? इन्नं )  
 रुक्षार्थम् <sup>१३७</sup> । उपस्नानकेनापगत्यैतस्य <sup>१३८</sup> । पूर्वार्थमन्त्ये उदकुम्भे द्विस्नेह-  
 विन्दुदानम् <sup>१३९</sup> । स्नायादपोद्रोणिकायाम् <sup>१४०</sup> । धारयेदेनां ग्लानः <sup>१४१</sup> ।  
 दद्यादुपर्यस्याः त्रि(पि)धानकम् <sup>१४२</sup> । ग्रीवायां चात्र गण्डोपधानिकाम् <sup>१४३</sup> ।  
 न यत्र क्वचन पादौ प्रक्षालयेत् <sup>१४४</sup> । स्थ[र]नमस्य प्रनाडीमुखम् <sup>१४५</sup> ।  
 कारयेरन् पादघावनिकाम् <sup>१४६</sup> । उपरि विहारस्य पूर्वदक्षिणकोणे <sup>१४७</sup> ।  
 कूर्माकृतिं सराम् <sup>१४८</sup> । उपस्थापयेत् कठिलं मृग्मयं हस्तपदशुभ्रका( ? क )र्णि-  
 कावन्तम् <sup>१४९</sup> । मध्ये संनिवे( ? वि )ष्टया कदम्बपुष्पाकारया खरया च <sup>१५०</sup> ।  
 प्रक्षाल्य स्थापनमवाङ्मुखस्य <sup>१५१</sup> । तलकोपरि सांघिकस्य <sup>१५२</sup> । पौद्गलिकस्य  
 लयने कर्वाटसन्धौ <sup>१५३</sup> । पात्रनिर्मादिनादि यत्र प्रदेशे विहारे कुर्यात् तस्या मार्ज-  
 नमुदकेन प्र[क्षाल]नं वा <sup>१५४</sup> । कुन्तफला( ल ? )काकारेण मृदङ्गस्य वा <sup>१५५</sup> ।  
 गोमयेन मृद[र] वा <sup>१५६</sup> । न विद्यते रत्नार्थतायां प्रलिप्तेराकारस्य नियमः <sup>१५७</sup> ।  
 नापात्रकं प्रत्राजयेयुरूपसम्पादयेयुर्वा <sup>१५८</sup> । नोनेनाधिकेन पाण्डुना वा <sup>१५९</sup> ।  
 ग्रीणि पात्राणि ज्येष्ठं मध्यं कनीयः <sup>१६०</sup> । श्लेषेणोद्ध( ध्वं ? )मागान्तानन्तराद-  
 द्दुष्टोदरात् पक्वतण्डुलप्रस्थस्योद्ध( ध्वं ? ) वा तद्वये मागधकस्योद्वाहिसमूहपण्य-  
 ज्ञनस्यैतन्पादयम् <sup>१६१</sup> । न भिक्षुयूद्ध( ध्वं ? ) भिक्षुकनीयसो धारयेत् <sup>१६२</sup> ।  
 श्रुमण्डलकस्थानयात्रा( ? ) निपादे दानम् <sup>१६३</sup> । बोधिवटपत्रस्य पाणितलकस्य  
 वा <sup>१६४</sup> । परिमाणतः <sup>१६५</sup> । भवति स तत्रं याचितेन <sup>१६६</sup> । तद्वत् पञ्चकम् <sup>१६७</sup> ।  
 न वर्षेखपात्रकः स्यात् <sup>१६८</sup> । न जनपदचारिकां चरेत् <sup>१६९</sup> । चरेत् सम-  
 यतायां कुपात्रकेण <sup>१७०</sup> । प्रत्राजयेद्भावे <sup>१७१</sup> । नोत्थितः पात्रं कर्षेत् प्रक्षि-  
 पेच्छोपवेद् वा <sup>१७२</sup> । मात्रया परिभुञ्जीत <sup>१७३</sup> । नान्येनात्र निसर्गं प्रक्षि-  
 पेत् <sup>१७४</sup> । नानेन संकारं छोरयेत् <sup>१७५</sup> । न चोचं न हस्तमुखोदकं दद्यात् <sup>१७६</sup> ।  
 न प्रमदनधर्मणा श्रामणेरेण निर्मापयेत् <sup>१७७</sup> । न सजाडुकेन गोशुक्ता <sup>१७८</sup> ।

नात्यार्द्रं प्रतिशामयेत् ११०० । नातिशुष्कमध्यपेक्षेत ११०१ । न शिलायां स्था[प]-  
 येत् ११०२ । नाशुचौ प्रदेशे ११०३ । न यत्र कचन ११०४ । नास्मिन्निक्षिपेत् ११०५ ।  
 मालकस्यैतदर्थं करणम् ११०६ । उत्तिष्ठतोर्विहारपरिगणयोर्न भित्तेः ११०७ । न  
 च कोरकसारण्यकैः ११०८ । लतामपस्य रज्ज्वा वा ११०९ । लिप्तस्य गोमयमृदा १११० ।  
 स तविच(?)विघ्न पिधानस्य ११११ । लम्बनमस्य कान्तारिकया वृक्षे साधु १११२ ।  
 न भूमौ स्थापनम् १११३ । नैनमत्य (न्य?)त्र नयेत् १११४ । प्रथितं स्वविकायां  
 नयेत् १११५ । न हस्तेन १११६ । कक्षयास्य नयनमालयनकं दत्त्वा १११७ । पृथक्  
 स्वविकासु पात्रमैपज्यकोलाहलानि स्थापयेत् १११८ । धारयेदेनाः १११९ । न  
 तुल्यावलम्बनानामालयनकानां निवेशमुपयुञ्जीत ११२० । अविस्तीर्णानाञ्च दुःसा-  
 निच्छुः ११२१ । संकोचासंपत्तये न मतदानं मध्ये ११२२ । स्थानायास्यान्तरान्तरे  
 काकपादके दानम् ११२३ । चक्षुरिव पात्रं पालयेत् ११२४ । त्वचमिव सांघाटीम् ११२५ ।  
 शिष्टं च चीवरम् ११२६ । न प्रतिसंस्करणमुपेक्षेत ११२७ । अनुतिष्ठेत् पात्रबन्धनं  
 अति गुप्तिप्रदेशे ११२८ । उपस्थापयेत् संघः कर्मारभाण्डिकाम् ११२९ । छिद्रस्यैतद-  
 साधु गुडजतुसित्थत्रपुशीसैः ११३० । साधु षट्ठिका-कीलिका-थिग्गलिका-मकरद-  
 न्तिकाभिः ११३१ । चूर्णिकया लोहस्य पापाणस्य वा ११३२ । तैलेन घृष्टिरासित्यसाट-  
 श्पास्त्रीहेतुं क्षुरुविन्देन वा ११३३ । उष्णे दानम् ११३४ । अवगुण्ड्य भूजेन नृदानु-  
 लिप्य पाकस्य मध्यस्य ११३५ । घृष्टितैलेन गुडमृद(मृगामद?)सुन्भयस्य शुज्य-  
 मानत्वे पाक्यत्वं मासपरकान्ते ११३६ । मार्तञ्चेत् पक्षस्य ११३७ । वर्षाश्चैतद् विल-  
 क्षणे अक्षितत्वेन कार्यान्तरालेऽस्य संयोज्यत्वम् ११३८ । पचनमस्य ११३९ । नतदा-  
 त्मना कर्तुं युक्तम् ११४० । कटाहकस्य तदर्थमुपस्थापनम् ११४१ । तत्प्रीत्यप्तेः ११४२ ।  
 कर्करकस्य वा ११४३ । भसनः पूरयित्वा साधु भेदनं घटभेदनकेन ११४४ ।  
 धारणमस्य ११४५ । तेनावच्छा(?)दनमपलापि धूमम् ११४६ । दत्तपुष्पचिकावदिः  
 लेपेन ११४७ । पिण्याकेन गोमयेन वा लिप्ताभ्यन्तरेण उपगतशेषेण ११४८ । कृत-  
 परिकर्मायां भूमावास्तुतत्तुपायामवकीर्णरुचिरधूमकरकपिण्याकादिद्रव्यायां तस्या-  
 धौविलम् ११४९ । गोमयेन वा पलालेन वावगुण्ड्यादीपनम् ११५० । सुशीतलस्या-  
 पनयनम् ११५१ । आनिष्पन्नरङ्गसंपत्तेरावृत्तिः ११५२ । निर्माद्य निर्माधारापन(?)  
 म् ११५३ । सामन्तकस्य प्राणकानामनुकम्पया सम्मार्जनं सेकथ ११५४ । प्ररोहस्य  
 परिच्यञ्जनमज्ञातो वर्षाग्रस्योपसंपद्यङ्गीकरणं व्याजेनास्य प्रत्यवेक्षणम् ११५५ ।  
 उच्चनागदन्तकचीवरवंशस्यभावावतारणादिना ११५६ । नोपसंपत्प्रेक्षं वृक्षमधिरोह-  
 येत् ११५७ । न बहिःसीमां प्रेषयेत् ११५८ । दर्शनोपविचार एनमवकाशने स्थापयेयुः  
 गणाभिमुखं प्रगृहीताञ्जलिम् ११५९ । न गृहिणि(णो) निःश्रयानारोचयेत् ११६० ।  
 नोपसंपन्नमात्राप नारोचयेत् ११६१ । यस्तुकर्मोपस्थापकपरिहारेणैतं परीच्छेयुः ११६२ ।

दहरमस्य भावे वृद्धतरमापृच्छेत् ॥१५॥ । भावेऽप्युपनिश्रयत्वेन ॥१६॥ ।  
 नानवलोक्य तज्जातीयं परिकर्मयेत् तेन वात्मानम् ॥१७॥ । निर्दोषमभावे प्रवृत्त-  
 पर्येपन(ण?)स्थानिःश्रितस्य वापि ॥१८॥ । अपञ्चरात्रनिष्ठानात् ॥१९॥ । अर्हत्वञ्च  
 लाम् ॥२०॥ । विश्रम्यागन्तुको द्वितीये तृतीये चाह्नि निःश्रयं गृह्णीत ॥२१॥ ।  
 नैकाहस्यार्थे ॥२२॥ । अन्यमसान्निध्ये निःश्रितस्यापृच्छेत् ॥२३॥ । निर्दोषमनाशुष्टौ  
 गतस्य कर्मादानैऽपरतदागतौ ॥२४॥ । न यस्य तस्यान्तिकात् ॥२५॥ । निर्जाय वृत्त-  
 ज्ञानपरिवारानुग्राहकत्वं प्रश्नादिनास्य ग्रहणं संवरयत् ॥२६॥ । प्रपीड्योभाभ्यां  
 पाणिभ्यामुभौ पादतलो ॥२७॥ । परीक्ष(क्ष्य ?) दानम् ॥२८॥ । पुत्रपितृसंज्ञयोः निवे-  
 शनम् ॥२९॥ । तत्रैवोपाध्याये निःश्रितत्वं तस्मादग्रहणमस्य तत् ॥३०॥ । निरपेक्ष-  
 तासंपत्तिक्रमयोरान्त(रन्ते ?)निःश्रयध्वंसे कारणम् ॥३१॥ । सन्नियत्ताव(पाते ?)नो-  
 पाध्यायेनाभिमतेन प्रवृत्तिः ॥३२॥ । तेनैव तेन ॥३३॥ । निरन्तरं दृष्टोपाध्याय  
 आसनं मुञ्चेत् ॥३४॥ । त्रिदिवसेन निःश्रितमुपसंक्रा(क?)मेत् तद्विहारस्थः ॥३५॥ ।  
 अरण्यवासी क्रोधो चेत् प्रत्यहम् ॥३६॥ । पञ्चपैरहोभिः क्रोशपञ्चके ॥३७॥ । पौषधे  
 द्वितृतीयैर्योजनेषु ॥३८॥ । न निःश्रितमवसादनार्ताना(?)वसादयेत् ॥३९॥ । पञ्चा-  
 वसादनाः ॥४०॥ । अनालापोऽनववाद उपस्थानधर्माभिपैरसंभोगः प्रारब्धकु-  
 शलपक्षसमुच्छेदो निःश्रयप्रतिप्रथमभणञ्च ॥४१॥ । अश्रद्धस्यैतदर्हत्वम् ॥४२॥ ।  
 कुसीतस्य दुर्वचसोऽनादृतस्य पांपमित्रस्य च ॥४३॥ । अवसादितसंग्रहेऽन्यस्य स्थूला-  
 ल्ययः ॥४४॥ । अनादृतौ भिक्षोः प्रगुणीकरणाय प्रयोगोऽभिज्ञस्य ॥४५॥ । त्यक्त-  
 निमित्तस्य क्षमणं क्षमयतः ॥४६॥ । नानत्ते(नार्त्त?) मवसादयेत् ॥४७॥ । नार्त्तस्य न  
 क्षमेत् ॥४८॥ । नान(नार्त्तस्य) क्षमेत् ॥४९॥ । सर्वथा निष्कासनमकरणीयतायां लप-  
 नात् ॥५०॥ । परिश्रावणकुण्डिके दत्त्वा सान्तरोत्तरञ्च श्रामणोरस्य ॥५१॥ । उपसंप-  
 त्प्रेक्षथेत् पंच परिस्कारान् ॥५२॥ । उपसंपन्नस्य च ॥५३॥ । न सिद्धनिष्ठुरो भवेत् ॥५४॥ ।  
 न विघातसंवाचिनं क्रियाभ्रंरं कुर्वीरन् ॥५५॥ । पलिगुद्धतापर्युपितत्वमास्यस्य ॥५६॥ ।  
 विसर्जयेत् दन्तकाष्ठम् ॥५७॥ । प्रतिच्छन्नम् ॥५८॥ । उच्चारप्रसावक्रिया वा ॥५९॥ ।  
 नोपभोगस्यान्ते वृक्षस्य कुड्यस्य वा ॥६०॥ । प्रम[रि]णमस्य द्वादशकादङ्गुलीनां प्रभृ-  
 त्याऽष्टकात् ॥६१॥ । आचतुष्कोत्तरादभावे बहुश्लेष्मणः ॥६२॥ । नायुक्तत्वं विजनस्य  
 लपने कठिलकसोपरि ॥६३॥ । नासंपत्तिरत्र गुप्ते प्रणाडीमुखे ॥६४॥ । हस्तसामन्त-  
 कसात्रैवंजातीयके संभाव्यर्थम् ॥६५॥ । जिह्वामस्यानु निर्लिखेत् ॥६६॥ । उपस्था-  
 पयेज्जिह्व[रि]निलिखनिकाम् ॥६७॥ । शुचिद्रव्या ॥६८॥ । कल्पतेऽत्रार्थे दन्तकाष्ठवि-  
 दलः ॥६९॥ । परस्परमस्याः तीक्ष्णतायै घृष्टिः ॥७०॥ । न तीक्ष्णेन दन्तं जिह्वां कर्णा-  
 श्चोच्छेपे(?) छेत्तेत् ॥७१॥ । नाशनैः ॥७२॥ । अवाष(घाव ?)यंस्तन्मासम् ॥७३॥ । नाप्र-  
 क्षाल्य दिघं (?) मुखमलेन प्रदेशमनवगुप्ये वा पांशुना दन्त-जिह्वयोः यवनं

छोरयेत् <sup>(१३)</sup> । नाविशब्धम् <sup>(१४)</sup> । निदर्शनमेतत् <sup>(१५)</sup> । उच्चारप्रस्तावखेटसिंघा-  
णकवान्तं विरिक्तमस्य [i]न्यच्च <sup>(१६)</sup> । निर्मादिनस्थातोऽपि संपत्तिरूपाटुकगोमया-  
दपि <sup>(१७)</sup> । चैत्यमनन्तरं कायकरणीयानुष्ठानाद् वन्देत <sup>(१८)</sup> । अथ निःश्रित-  
प्रतिपत् <sup>(१९)</sup> । अतोऽनन्तरं काल्यष्टुपसंक्रम्य वन्दनम् <sup>(२०)</sup> । वार्तापृच्छनम् <sup>(२१)</sup> ।  
ऊपाद् (डु)कोदकदन्तकाष्ठोपनामनम् <sup>(२२)</sup> । महानसमवलोक्य मारोचनम् <sup>(२३)</sup> ।  
प्रियस्योपनाम्यत्वेन मनसि करणम् <sup>(२४)</sup> । पात्रनिर्मदनम् <sup>(२५)</sup> । पिण्डपातिकथेद्  
द्रावकस्य च <sup>(२६)</sup> । सप्रयोजनं परिश्रावणस्यापि <sup>(२७)</sup> । सोऽपि चेत् प्रश्नः <sup>(२८)</sup> ।  
माहं चेदभिरुचितं तेनैव महप्रवेशः <sup>(२९)</sup> । विपमादौ पुरतो गतिः <sup>(३०)</sup> ।  
प्रणीतस्य तस्यै परिणमनम् <sup>(३१)</sup> । असह (?) वेदागत्योपदर्शनम् <sup>(३२)</sup> । वरतरस्यो-  
पनामनम् <sup>(३३)</sup> । मात्राज्ञोऽमौ सर्घत्र स्यात् <sup>(३४)</sup> । उदकस्थालकपूरणम् <sup>(३५)</sup> ।  
कालारोचनम् <sup>(३६)</sup> । युक्ते पात्रादिनिर्मादनम् <sup>(३७)</sup> । स्नापनमस्य <sup>(३८)</sup> । चैत्यादि-  
वन्दनायामूपाटुकोदकाष्टुपनयः <sup>(३९)</sup> । पादप्रक्षालनगतानुष्ठानम् <sup>(४०)</sup> । शयनास-  
नप्रज्ञपनम् <sup>(४१)</sup> । प्रतिनिवासनार्पणम् <sup>(४२)</sup> । निवासनग्रहणम् <sup>(४३)</sup> । पादोदका-  
धिष्ठानकठिष्ठोपनामनं उपान [त्] प्रोच्छनम् <sup>(४४)</sup> । असम्मत्मुत्थानकारकत्वेन  
गृहीतसम्मार्जनिकं दृष्टाल्पोत्सुकं कुर्यात् <sup>(४५)</sup> । गृहीतस्य चिकं चासम्मत्तं चीव-  
रसेवकत्वेन <sup>(४६)</sup> । कल्पिकीकरणाल्पहरिततापादनपुष्पफलोद्ययदन्तकाष्ठोपसंहा-  
राद्यपि भ्रमणोद्देशे <sup>(४७)</sup> । अर्गटकाकोटनेनाभ्यन्तरस्थं बोधयेत् <sup>(४८)</sup> । शनैरेतत् <sup>(४९)</sup> ।  
नातिवेलम् <sup>(५०)</sup> । नाद्येन (?) प्रपीडयेत् <sup>(५१)</sup> । शनैः संप्रजानन् प्रविशन्निष्का-  
मश्चासंघर्षयन् द्वारशाखे <sup>(५२)</sup> । प्रकृत्यादेनम् <sup>(५३)</sup> । आलि (?) पेत् <sup>(५४)</sup> ।  
न तद्विरुद्धम् <sup>(५५)</sup> । अपत्रपेतातः <sup>(५६)</sup> । दक्षोऽस्य कृत्ये स्यात् <sup>(५७)</sup> । सत्कृत्य-  
कारी प्रासादिकप्रस्थानः <sup>(५८)</sup> । हीमान् सगौरवः <sup>(५९)</sup> । सप्रतीशः <sup>(६०)</sup> । नीच-  
चित्तः <sup>(६१)</sup> । संप्रजा [न] न्न हापयेत् स्वकार्यम् <sup>(६२)</sup> । किंकुशलगवेषी <sup>(६३)</sup> ।  
विक्रियामापद्यमानं निवारयेत् <sup>(६४)</sup> । अष्टद्वौ कुशलेनान्यत्र तत्कारके (?) कै रसम-  
र्पणं याचेत् <sup>(६५)</sup> । निर्ज्ञाय निःश्रयाद्यर्पयेत् <sup>(६६)</sup> । पापमित्राद् का (वा ?) रणम् <sup>(६७)</sup> ।  
कुशले नियोगः <sup>(६८)</sup> । तदुपसंहारः व्युत्थापनायामापचेरालुलोमिकाजीवितपरि-  
स्कारसंपत्तौ चोद्योगः <sup>(६९)</sup> । साद्विहार्यन्तेवासिकोपाध्यायाचार्यसमानोपाध्या-  
यसमानाचार्यालस्रकसंस्तुतकसंसमकं ग्लानमुपतिष्ठेत् <sup>(७०)</sup> । पूर्वक्रियाभा-  
वादुत्तरः <sup>(७१)</sup> । पाठाचार्यस्याप्यत्र गृहीतता <sup>(७२)</sup> । सा ह्यशक्तौ निःश्रितं येन  
प्रवृत्तिः <sup>(७३)</sup> । प्रव्रजितवदत्र प्रारब्धतद्विद्भिः <sup>(७४)</sup> । न ग्लानसत्रह्यचारिणमभ्यु-  
पेक्षेरन् <sup>(७५)</sup> । उपस्थापकमस्याभावे ददीरन्नान्तात् <sup>(७६)</sup> । कल्पते भैपज्य [म] स्य  
संघतः <sup>(७७)</sup> । केवलस्य ग्लानस्य परिभोगः <sup>(७८)</sup> । असत्त्वं अतदुपस्थायकः समा-  
दापयेत् <sup>(७९)</sup> । असंपत्तौ साधिकं ददीरन् <sup>(८०)</sup> । अभावे धौद्विकमाशरीरगतात् <sup>(८१)</sup> ।



यानकच्छत्रारोपणादिकारानेनमुद्दिश्य कुर्युः सांघिकात् <sup>(१११)</sup> । अभावेऽस्य वोञ्चि-  
 (योन्दि)कात् <sup>(११२)</sup> । देयत्वमाभ्यामार्चस्य तेनामृत्यौ सति विभवे <sup>(११३)</sup> । नोप-  
 स्थायक एनं नोपतिष्ठेत् <sup>(११४)</sup> । नान्यामस्य धर्म्याश्चाज्ञां विलोमयेत् <sup>(११५)</sup> ।  
 नाध्यवसानवस्तूपयाचितो विधारयेत् <sup>(११६)</sup> । न नाववदेत् <sup>(११७)</sup> । नैनं ग्लानो  
 लंघयेत् <sup>(११८)</sup> । सांघिकादेनमसौ मरणाशंकायां शयनासनादुत्थाप्य पौद्गलिके  
 निवेशयेत् <sup>(११९)</sup> । अभ्यङ्गनस्नापनपूर्वकत्वाव्याजेन <sup>(१२०)</sup> । यत्नवांस्तदवस्थापरिच्छेदे  
 स्यात् <sup>(१२१)</sup> । तत्कार्यत्वं तत्कृतसंक्रेशानां तन्मृतचीवराणां धावनस्य <sup>(१२२)</sup> ।  
 संघस्य तत्स्थविरसंनिपातपूर्वगमः स्यात् <sup>(१२३)</sup> । गमने विलंबितमुदीक्षेत् <sup>(१२४)</sup> । तेऽप्ये-  
 नम् <sup>(१२५)</sup> । अनिर्गतश्च दूरं गत्वा <sup>(१२६)</sup> । ग्रामान्ते च <sup>(१२७)</sup> । प्रवेशश्चेदत्रानुय-  
 न्तम् <sup>(१२८)</sup> । द्रुतश्चेत् स्याद् “आगमय यावत् स्थविर [आ] गच्छति” इति तं  
 ब्रूयुः <sup>(१२९)</sup> । पाण्डुदकदाने च गतत्वेऽभ्यवहारायास्ति चेत् कालः <sup>(१३०)</sup> । असत्य-  
 त्रोपवेशेऽस्यासनं मुञ्चैरन् <sup>(१३१)</sup> । सन्निपण्णतायां बहिश्च प्रत्यवेक्षेत् <sup>(१३२)</sup> । दुःप्रावृ-  
 त्तत्वे दुर्निवस्ततायां वा सौष्टवार्थमनयोनिमित्तमसौ कुर्वीत <sup>(१३३)</sup> । अप्रतिपेधे न  
 (प?)रेण कारयेत् <sup>(१३४)</sup> । असंपत्तौ स्वयं नैनान् संलापयेन्नवकान् <sup>(१३५)</sup> । यत्रैषां  
 विहारारण्ययोर्वृत्तिस्तद् वृत्तं ग्राहयेन्नियुञ्जीत च <sup>(१३६)</sup> । आगन्तुकं प्रत्यवेक्ष्यावा-  
 सिकानामारोचयेच्छयनासनार्थम् <sup>(१३७)</sup> । गमिको दिक्सारथावासशयनासनं सहा-  
 यकांश्च ग्लान्येन सहायित्वेन तोलयित्वा प्रक्रामेत् <sup>(१३८)</sup> । सर्वं पश्चात् मा कस्य-  
 चित् किञ्चित् प्रमुपितमित्यपेत्य दूरमुत्सारयेत् <sup>(१३९)</sup> । अनुद्धतानुन्नद( ड? )त्वे  
 नवकान् प्रतिष्ठापयेत् <sup>(१४०)</sup> । कुलञ्चोपगतान् सर्वः सर्वान् <sup>(१४१)</sup> । संजानीत चाद्येद्यो  
 (? चेद्याद्यो)पदेशादिभक्तलाभग्लानसंविधानादिकरणीयसंपादनेनानुगृहीत <sup>(१४२)</sup> ।  
 वर्षोपगतोऽनुसंज्ञाय विहारमप्रतिसंस्कुर्वतः संस्कारयेत् <sup>(१४३)</sup> । संस्कुर्वतोऽभ्युत्साद-  
 (ह)येत् <sup>(१४४)</sup> । पर्पद्गतान् सर्वः कथैपितायामानुलोमिकधर्मोपसंहारेणानुगृहीत <sup>(१४५)</sup> ।  
 तूष्णीत्वेऽरतानुपेक्षेत् <sup>(१४६)</sup> । गृहिण उपगता[न्] भक्तान् संविभाजयेत् <sup>(१४७)</sup> ।  
 अकरणे निष्ठैवाधर्म्याभ्यः “कथं कृत्वेदमस्माकं संविद्यत” इति ब्रूयात् <sup>(१४८)</sup> ।  
 पर्पदं तद्वान् सर्वः प्रत्यवेक्षेत् <sup>(१४९)</sup> । मुधाचारिणं निगृहीयात् <sup>(१५०)</sup> । गमनाद्  
 यत्र यथै[त्]त् कुर्यात् <sup>(१५१)</sup> । अनानातिर्यक्कथस्स्यात् <sup>(१५२)</sup> । न पुरः पश्चाच्छ्रमण  
 उपगच्छेत् <sup>(१५३)</sup> । न तिष्ठेत् <sup>(१५४)</sup> । उक्तो ब्रूयात् संपादयेद् वा <sup>(१५५)</sup> । नान्तरक-  
 थामवपातयेत् <sup>(१५६)</sup> । अधर्मं भापमाणं प्रतिवदेत् <sup>(१५७)</sup> । धर्ममनुमोदेत् <sup>(१५८)</sup> ।  
 उत्पन्नं धार्मिकं लाभं प्रतिगृहीत <sup>(१५९)</sup> । अनुद्धतः कुले स्यादनुन्नदानवस्थितः <sup>(१६०)</sup> ।  
 उत्तिष्ठन्नचक्षुः <sup>(१६१)</sup> । धर्म्यां गृहिभ्यः कथां कुर्यात् <sup>(१६२)</sup> । दानदमसंयमब्रह्मचर्य-  
 धासोपौपधशरणगमनशिक्षापदग्रहणेष्वेनान्निद्युञ्जीत <sup>(१६३)</sup> । सर्वत्रापत्तिमुराभूते  
 प्रस्थाने स्मृतः प्रतिपद्येत् <sup>(१६४)</sup> । न नशिष्टोऽनुगः <sup>(१६५)</sup> । एहिस्वागतपूर्वप्रिया-

लाप्यमिगते स्यात् ॥५५॥ । उत्तानमुरवर्णः स्मृतपूर्वगमो विगतभृकुटिः ॥५६॥ ।  
 गृही चेद् धर्म्यामसै कथां कुर्यात् ॥५७॥ । अनागच्छत्यत्र ग्रामान्तिकस्तरञ्जनीयं  
 यथाशक्ति प्रवर्तयेत् ॥५८॥ । पानीयामनमुपस्थापयेत् ॥५९॥ । संमार्गशमनासनप्रज्ञ-  
 पनपानीयस्थापनचारणः भक्तनिःसर्गान्नरुः कुर्यात् ॥६०॥ । उपगच्छेद् विलोमां  
 परिजनक्रियां न चेत् स्वपरोपघाताय ॥६१॥ । असै चेच्छक्तौ समुच्छिद्यैनां  
 धर्म्यामुत्पाद्य तया संज्ञपयेत् ॥६२॥ । भङ्गे प्रसंगे वा तन्निदानं परिजनस्य प्रति-  
 संस्करणम् ॥६३॥ । अशक्तत्वेऽन्येन प्रक्रमन(१ण)म् ॥६४॥ । न तत्प्रत्ययं विगृह्य  
 ब्रूयात् ॥६५॥ । संघारामे पराध्यां(?)स्तथा कुर्याद् यथा स्वयंप्राहिकया ग्रहणं  
 गच्छेत् ॥६६॥ । अगच्छत्तमनारोच्य सहसा कस्यचित् कुमारमित्राम[?]त्यमड्डराज-  
 पुत्रपादमूलिकान् ॥६७॥ । ग्राहयित्वा शुद्धिकायां पर्पदि निहन्यात् भिक्षुणी भिक्षु-  
 स्थाने सर्वस्य प्रव्रजा(१व्रज्या)याम् ॥६८॥ । उपसंपद्य न्यस्य तद्याचनादौ कर्मकर्तुः  
 अत्राचयस्संघः ॥६९॥ । कथनं भिक्षुष्यन्तरितमान्तरायिकस्य ॥७०॥ । शिक्षमाणत्वं  
 नाम स्त्रियामपरं पर्व ॥७१॥ । निःश्रितायामेव ॥७२॥ । श्रामणेरिकात्रभिक्षुणीत्वयो-  
 रन्तराले वर्षद्वयञ्चरणस्य कालः ॥७३॥ । तदनोपसंपत्कालाघादिः प्ररोहस्य ॥७४॥ ।  
 द्वादशत्वं वर्षाणामुपसंपत्सू(रू?)डतायामादिः ॥७५॥ । दानादुत्थानम् ॥७६॥ । भिक्षु-  
 णीसंघेन ॥७७॥ । शिक्षासंबृतिरिति दानम् ॥७८॥ । अनन्तरमस्य शिक्षोत्कीर्चनम् ॥७९॥ ।  
 नालब्धब्रह्मचर्योपस्थानं संबृतेरुपसंपत् ॥८०॥ । रहोनुशासनाद् रूढं तदानम् ॥८१॥ ।  
 संघेन ॥८२॥ । पृष्टान्तरायिकम् ॥८३॥ । याचितायाम् ॥८४॥ । पञ्चत्वं चीवरेषु ॥८५॥ ।  
 निःश्रयेषु वि(?)वृक्षमूलत्वम् ॥८६॥ । अष्टत्वं पतनीयेषु ॥८७॥ । गुरुधर्मारोचनम् ॥८८॥ ।  
 पतनीयभ्रमणकरकान्तरात्रे ॥८९॥ । कृतपदके ॥९०॥ । नास्त्यस्याः प्ररोहण-  
 धर्मत्वे(ते ?)ति च ॥९१॥ । उभयव्यञ्जना ॥९२॥ । संभिन्नव्यञ्जना ॥९३॥ । सदा प्रवृ-  
 (१स्र)वणी ॥९४॥ । अलोहिनी नैमिचिकी ॥९५॥ । निमित्तमात्रभूतव्यञ्जना  
 तदारुष्या ॥९६॥ । पूर्वं प्रव्रजिता ॥९७॥ ।

॥ क्षुद्रकादिप्रव्रज(१ज्या)वस्तुगतम् ॥

§ ४, पृच्छागतम् ।

नामनुप(१व्य)गतिकोत्तरकौरवकयोः ॥९८॥ । संवांस्य क्षेत्रत्वम् ॥९९॥ । न  
 तृतीयस्यां परिवृत्तो व्यञ्जनस्य ॥१००॥ । न प्रथमयोर्वस्तिः ॥१०१॥ । उत्थानं  
 गृह्यमानत्वे ॥१०२॥ । अनुपाध्यायकतायां तद्वतः ॥१०३॥ । अनुपसंपन्नत्वेऽस्य ॥१०४॥ ।  
 न जानानेऽस्याभिक्षुत्वम् ॥१०५॥ । नैनं प्रत्याचक्षणे ॥१०६॥ । नानयोर्नामानुद्गा-  
 वने ॥१०७॥ । न संघस्य तद्योनेः ॥१०८॥ । नागारिकतीर्थकध्वजे ॥१०९॥ । न  
 नम्रकुपितसुफालिनीषु ॥११०॥ । न निमिचविपर्ययानभ्युपेतावृत्तिक्षमकस्य ॥१११॥ ।  
 दुम्(१ध)कृतमात्रमपूर्वसर्व(?)तायाम् ॥११२॥ । अयाज्ञा(१ज्ञा)यामुपाध्यायस्य ॥११३॥ ।

आन्तरायिकस्याग्रणो(श्रे) प्रतिज्ञातेऽस्यासतो दानम् <sup>६०७</sup> । न पुरुषानुकृतित्वं  
स्त्रिया ह्यनुकृतित्वं च पुरुषस्य व्यञ्जनान्तरप्रकारः <sup>६०८</sup> । आक्षिप्तत्वमस्य  
हस्तच्छिन्नादिना <sup>६०९</sup> । पापलक्षणमिन्नकल्पद्वीपान्तरयोः <sup>६१०</sup> । एकनख-  
समुद्रकलेखपक्षहतलिङ्गशिरो गुल्मकेशान्तर्वहिविकुञ्जप(स)र्पहितानङ्गुलियश्मन-  
कुलकिंवलविपरीतमिलितसिकपकश्मीलिताक्षाक्षाक्षिशालशक्तदद्रूविचर्चिकपीता-  
वदातरक्तनाडीकर्णकण्डूपिण्डस्थूलकच्छण्डलांगुलप्रतिच्छन्नमूर्धजित्वैकहस्तपाद-  
नीलकेशहस्त्यश्वगोमेपमृगमत्सा हि दीर्घवहशीर्षतालकण्ठशूलेर्यापथच्छिन्नेभ्य-  
श्चानावाधिकानां ग्लानेन चेतरेषाम् <sup>६११</sup> । चौरैण दस्योः <sup>६१२</sup> । पितृवत् पित्रा-  
शायत्वे(?)नुज्ञायां राजा <sup>६१३</sup> । परिग्रहीत्रोरनुज्ञानधारणारोचनेषु पितृत्वम् <sup>६१४</sup> ।  
नामनुप(?)व्यगतिकयोः <sup>६१५</sup> । नात आनन्तर्योत्थानम् <sup>६१६</sup> । जनकाभ्यामे-  
तत् परि(?)पचव्यम् <sup>६१७</sup> । नाभ्यामपि <sup>६१८</sup> । एतत्कृच्यं मातृघातकादौ  
तन्नम् <sup>६१९</sup> । दूषकत्वमब्रह्मचर्येण स्वादयतोरपराजितत्वे <sup>६२०</sup> । अर्हत्वं प्रब्रज्योप-  
संपदोऽपगतौ पुंस्त्वस्य हीनायां योपिति <sup>६२१</sup> । असाधारणं पाराजिकमध्या-  
चरितवत्यम् <sup>६२२</sup> । आवासिकानां ह्युपसंपादनेऽङ्गत्वम् <sup>६२३</sup> । ध्वंसो भव-  
त्यसोत्सृष्टः <sup>६२४</sup> ।

॥ पृच्छाप्रायं प्रव्रजा(?) ज्या )वस्तुगतम् ॥

॥ समार्तं च प्रव्रज्यावस्तु ॥

ॐ

## २. पोषधवस्तु ।

§ १, पाराजयिकम् ।

(क) भिक्षुविभ्र. ( १ ) अब्रह्मचर्यपाराजयिकम् ।

[ प्रत्याख्यानविधिः ]

न नष्टप्रकृतिकृततां प्रत्याख्यातत्वम् <sup>६२५</sup> । न तन्नम् <sup>६२६</sup> । न मूके <sup>६२७</sup> ।  
नामनुप(?)व्यगतिके <sup>६२८</sup> । नाशोधितत्वे <sup>६२९</sup> । न रहसि <sup>६३०</sup> । न रहः-  
संज्ञया <sup>६३१</sup> । शिक्षां प्रत्याक्षये जुद्धं धर्मं संघं स्रवं विनयं मातृकामाचार्य-  
मुपाध्यायमागारिकं मान्दारयश्रमणोद्देशं षण्डकषण्डकभिक्षुणीदूषकं स्तेय-  
संवासिकं नानासंवासिकमसंवासिकं तीर्थिकं तीर्थिकापक्रान्तकं मातृघातकं पितृ-  
घातकमर्ह[ इ ]घातकं 'संघमेदकं तथागतस्यान्तिके दुष्टचिचरुधियोत्पाद्रकमलं मे  
युष्मद्विधैः ब्रह्मचारिभिः सार्द्धं संवासेन वासभोगेन चेति प्रत्याख्यानवृत्त-  
नानि <sup>६३२</sup> ।

॥ प्रत्याख्यानविधिः ॥

ॐ

(क) विभंगगतम् ।

प्रविष्टस्पर्शस्वीकृतौ प्रथा(सिद्धा)वकरणस्य ॥१॥ तत्र ॥२॥ । अविकोपिते ॥३॥ । मुखे वचोमार्गे वा ॥४॥ । विकोपितेषु स्थूलम् ॥५॥ । अप्रतिबलत्वे हासः ॥६॥ । अहासममनुप(स्य)गतिकत्वयास्यपत्र(स्य) कतासिबसेव्यसान्तरत्वमृततासु ॥७॥ । असंचेतितनष्टप्रकृत्योर्वर्पाकामप्रविष्टत्वे ॥८॥ । प्रकृतायां सेव्यमानस्य ॥९॥ । चर्हिर्निर्घर्षपूर्वकत्वेऽनन्तर्मुक्तपसतायाम् ॥१०॥ । नासुप्तो दिवा पार्श्वं दत्त्वा मिद्धमवक्रमेत ॥११॥ । तिस्रो गुह्ययः ॥१२॥ । बद्धद्वारपरिवृतस्थत्वमारक्षितत्वं भिक्षुणां ग्रथितत्वमधोनिवसनस्य ॥१३॥ ।

॥ अत्रह्यचयंपाराजिकभङ्गः ॥

(ख) क्षुद्रकगतम् ।

न यत्र ह्यिया काम्येत तत्रोपसंक्रामेत ॥१॥ । न यत्रामनुपो(स्यः) स्पर्शयोद्यतः तत्र निवसेत् ॥२॥ । धारयेत् तीव्ररागो वस्तिम् ॥३॥ । छागचर्मणो मृगस्य मृषिकस्य वा ॥४॥ । कपाय[पा]नमदौर्गन्धार्थम् ॥५॥ । शोचनं शोषश्च ॥६॥ । तत्कालार्थमपरम् ॥७॥ । प्राभृत्येन द्रवीभूतावास्तरदानम् ॥८॥ । वालुकायाः पांशोर्वा ॥९॥ । निक्षिप्य शौचं कृत्वा भोजनचैत्यवन्दनम् ॥१०॥ ।

॥ क्षुद्रकगतमग्रह्यचयंपार[ग]जयिकम् ॥

(ग) पृच्छागतम् ।

दन्तात् परं मुखस्यादिः ॥१॥ । वचोमार्गस्य विलगण्डिकान्तात् ॥२॥ । चर्मपुटात् प्रस्त्रावणस्य ॥३॥ । मणेरस्य प्रविष्टता तदन्तः ॥४॥ । प्रदेशस्यास्यादष्टत्वं दष्टता शून्यत्वं क्लिन्नता शटितत्वं खादितता प्राणकैरिति विकोपितता ॥५॥ । न मध्यच्छन्नत्वे भ्रम्यस्याप्यप्रहासः ॥६॥ । अप्रज्ञाने च सन्धेः पाटितस्य मध्यासेव्यस्य पंडितस्य ॥७॥ । प्रज्ञानेऽनन्तरं पर्व [सन्धे] ॥८॥ । स्थूलकृत्वम्पकस्य निर्लोभः शूकरादेः ॥९॥ । शिरछि(च्छि)न्ने मुखस्य ॥१०॥ । पृथक्कृतयोः कायात् सेव्यसेवनयोः ॥११॥ । अन्ययोरपि परकीययोः परत्र समायोजने ॥१२॥ । अन्यस्य छिन्ने कावेषि छिद्रस्य ॥१३॥ । सेव्यस्य मातन्तरस्य पण्डिकायाम् ॥१४॥ । वाहस्य सीम्नः परस्तात् ॥१५॥ । प्रसेविकायाः ॥१६॥ । द्विगुणीकृता स्पृष्टिप्रवेशयोः ॥१७॥ । तदन्त्योक्तावन्तरणमभिसंहितं येनान्तरितस्य न सर्वेण सर्वमसंभावनं स्पृष्टेः ॥१८॥ । अन्येनान्तरितत्वमस्पृष्टिप्रवेशेन व्याख्यातम् ॥१९॥ ।

॥ प्रथमे पाराजयिके पृच्छागतम् ॥

## (घ) विनीतरूानि ।

मिक्षुमावासंचेतनं प्रकृतिनाशः ॥१॥ । द्वयं विकोपितत्वमन्तः वहिश्च ॥२॥ ।  
 कुपितत्वं शिक्षायाः सेवां प्रति परस्माभ्युपगतौ ॥३॥ । देयत्वमत्र पुनरस्याः ॥४॥ ।  
 स्थूलमसां भिक्षोः ॥५॥ । संग्रहगतौ च ॥६॥ । प्रवेशनार्थं व्रण-  
 पीडने ॥७॥ । भीतिलज्जयोः संरागासंपत्तेः ॥८॥ । स्फोटादंगजातस्य रसासं-  
 वितौ ॥९॥ । अकर्मण्यप्रवेशने ॥१०॥ । हस्तेन हस्तं पादेन पादं सन्धिना सन्धि  
 वास्तिना वास्तिमत्यघट्टने ॥११॥ । इञ्जितत्वमात्रके संयुक्तस्य ॥१२॥ । दारुदन्त-  
 शैलवखमपथी(?)तिकोपक्रान्ताविन्द्रियमात्रस्य चेदवनामः ॥१३॥ । सर्वाङ्गेषु स्पर्श-  
 दानेषु मौलम् ॥१४॥ । पादस्य सेवार्थमुद्यतेनाङ्गजोक्षेपे ॥१५॥ । वहिः[ः]स्पर्शने  
 सेच्यस्य तन्मात्रपरतयाङ्गजातेन ॥१६॥ । पराङ्गपने च सेवायाम् ॥१७॥ । न प्रकृत्या  
 कर्मण्यत्वमपक्राम(हास)कृत् ॥१८॥ । नाग्रपृष्ठयोद्यतयाम्भस्ततोऽन्यतो निष्ठाने ॥१९॥ ।  
 न शिष्टैरपि मार्गैरुपक्रमिष्य इति ॥२०॥ । तद्भ्रष्टोऽहमित्यभिप्रायः ॥२१॥ । न रोगाप-  
 गत्यर्थता ॥२२॥ । न मार्गैः अन्यत्वसंज्ञानं विमतिर्वा ॥२३॥ । स्थूलकृत्वमनयोर-  
 मार्गे ॥२४॥ । [अ]नापचिरभिद्रुतस्य स्रष्टुपरिनिपाते ॥२५॥ । कण्ठे चाकाममार्चया  
 च लम्बने ॥२६॥ । स्पर्शने चौष्टेनौष्ठस्य ॥२७॥ । न शुन्याः पुरस्तात् प्रश्ना(इत्या)वं  
 कुर्वति ॥२८॥ । न यत्र प्राणात्ययापातस्तत्रारण्ये प्रतिवसेत् ॥२९॥ । न यत्राङ्गजाता-  
 दानभयं तां नद्यो नदीं तरेत् ॥३०॥ । संप्रजानन्वेनां नाथा तरेत् ॥३१॥ । गवाश्च  
 सव्ये(मध्वे) गच्छेत् ॥३२॥ । उदयनं च प्रेक्षेत् ॥३३॥ । पिण्डाय च ग्रामं  
 चरेत् ॥३४॥ । सुप्रत्यवेक्षितं कृत्वा प्रव्राजयेत् ॥३५॥ । नेकाक्यभ्यवकाशे पार्श्वं  
 दद्यात् ॥३६॥ । नापावृतद्वारेऽगारे भिक्षुणी समापद्येत च ॥३७॥ ।

॥ प्रथमे पाराजयिके विनीतरूानि ॥

॥ अत्रह्यचर्यपाराजयिकं समाप्तम् ॥

(२) अदत्तादानपाराजयिकम् ।

## (क) विभंगगतम् ।

हरणहारणयोः ॥१॥ । दूतेनापि ॥२॥ । अदत्तस्य ॥३॥ । पञ्चमापकादेः ॥४॥ ।  
 स्तेयचित्तेन ॥५॥ । मनुप(इष्य)गितकपरिशुद्धीतस्य ॥६॥ । तत्संज्ञायाम् ॥७॥ ।  
 अनापैतत्वं स्वामित्वस्यापहृतत्वेऽनुत्सृष्टतायामाश्रये न ॥८॥ । भवत्यधिष्ठातुरपात्रा-  
 गतीये स्वामित्वम् ॥९॥ । असत्त्वमाश्रयानुबन्धस्वाभ्यवहाराय दाने ॥१०॥ । नान-  
 भियोऽकृत्वत्वमभिप्रयुक्तानां दण्डहादिभिरादानार्थं मृगपक्षिसरीसृपाणाम् ॥११॥ ।  
 अनिगलने वस्तुतो च्यवस्था ॥१२॥ । हारस्थानकालेन मूल्यस्य ॥१३॥ । नानभिप्रेतादा-  
 पत्तिः ॥१४॥ । स्वभावरकोऽलिकविश्वसत्चित्तैः परिविज्ञाप्य ॥१५॥ । अन्यथा विनास्ते-

यचितेन "१" । कृपपध्या(?)मोचने "१" । प्रयोने दुष्कृतं सर्वत्र "१" ।  
 स्थूलमस्त्रिक्राये मूलस्य चेत् "१" । अनन्तरे चे(?)त्तत् "१" ।  
 न्यूनाप्रहृतौ "१" । अस्वामिकस्य निधेः "१" । स्वस्यान्यगतेः "१" ।  
 अस्वीकृतौ च गोपननाशनवधो (?) सङ्गादौ वियोजने "१" । दुष्कृतं  
 कारुण्यचित्तेन "१" । न प्रतिकृतापकृतत्वमादेः "१" । प्रयोगप्रयोगत्वं  
 प्रागामर्शात् "१" । अहानौ प्रतिपदं भेदः "१" । प्रतिसत्त्वं तद्गते "१" ।  
 न कीलान्मोक्षो नावः यष्टिः "१" । द्वारो भासस्य तत्कृत्य हरणे "१" ।  
 निकरस्योचित्य "१" । स्थानोचमातिक्रान्तिद्रव्यो तु (?)मेन निमज्जने "१" ।  
 नयने सा मतिर्यास्त्रिन् यश्वा(?)द्वारे "१" । च्युतिरपकाशने पार्श्वधारस्य  
 पार्श्वान्तरेण सीमः "१" । न व्यस्तान्तर्गतस्य तद्वत्त्वे "१" । तत्र रूपं चाट-  
 स्फोटिलै(?)रवावर्णान्तरसन्धिव्यवधयः "१" । व्यवधित्वं लक्षमाणप्रविभागार्थं  
 प्राणिनि(?) पार्श्वदीनाम् "१" । स्तरस्य स्तृतत्वे स्थानत्वम् "१" । निक्षिप्तवद्  
 प्ररोहः "१" । विवेचनभामुक्तास्य भूम्यातदातिक्रान्तिः शुक्ल(ल्क?)स्य "१" ।  
 मनुष्यस्य संकेते न चेत् तत्संपत्तिः "१" । उत्पाटनं पक्षिणस्तथा चेत् "१" ।  
 मुक्तिर्वधश्च तिरश्चः "१" । अनाभासित्वं निबन्धनोर्यु(?)यनाभ्याम् "१" ।  
 आभासनं मन्त्रैरार्कपणे "१" । पूर्वमनुगच्छदपहरतोर्हानिनिवृत्त्यप्रक्रमप्रवेशे  
 कोर्शेन तदात्तस्य "१" । नावः स्थलकुल्याप्रकीर्णोदकैः "१" । अनुत्प्लातश्च "१" ।  
 तिर्यक्(?)वा नाभापितायां तीरान्तरस्य "१" । तत्प्राप्तिरिति तथात्वे "१" ।  
 त्रपुटकातिक्रमः प्रतिस्रोतः निष्पत्तिः स्वकर्मान्तस्य तदर्थं व्यधिकेतरस्याच्छन्देन  
 परकर्मान्तेष्वम्भसः "१" । प्रेरणेन वारणे वा "१" । लब्धिरंशस्य तदर्थमपहर्तृणां  
 प्रतिपदवृत्तान्तनिवेदने "१" । भूमिचर्यह(?)योः परिलेपेण संधिसङ्गतिः "१" । जयो  
 विवादेन राजकुले चेत् "१" । युक्तकुले चेन्निराकृतप्रयोगत्वं यस्य "१" । अस्य प्रयो-  
 गत्वम् "१" । अनाशङ्कमण्यव(?)स्तेयचित्तस्य शुक्ल(ल्क?)गते दोषोत्थानम् "१" ।  
 यदात्तत्वं भाण्डस्य तस्य देयत्वम् "१" । न मुक्तेऽन्यदीयातिक्रामणं न हारः "१" ।  
 नामुक्तोऽन्येनातिक्रामयेत् "१" । नासंचेतिवातिक्रामणासंपत्यै न पतेत् "१" ।  
 आरक्षकंस्थापनं भिक्षोरनेकस्य "१" । समुदानेयत्वं तद्भक्तस्य "१" । निवारणं  
 तेन "१" । आख्यानं प्रक्षिप्ततायाम् "१" । चिह्नकरणमसंभवे "१" । पुच्छन(?)  
 मादाने "१" । स्पृश्यत्वमसंपचावन्यधापनयनस्य "१" । निर्यातितत्वमप्रतिपाति-  
 तस्य निश्चर्योगतौ "१" । संवर्धनं पित्रोस्तदर्थोन्मुक्त्वा(?)त्तयै "१" । रत्ना-  
 नाञ्च "१" । दानमितरार्थाद्दुधारग्रहग(णा)धर्मणम् "१" । न सशुक्ल-  
 करणीयोन्याडि(?)भजेत् "१" । अतत्त्वं रक्तस्य गोमयनिष्पीड्येनापि "१" ।  
 छिन्नदशायामस्य च "१" । अरुद्विस्तन्मतेरधस्ते "१" । न पशुचौ

ग्रहरेत् <sup>१५५</sup> । नाविश्वसनीये विश्वस्तता भजेत् <sup>१५६</sup> । तच्चमधरस्योत्तरस्याम् <sup>१५७</sup> ।  
 प्रियोऽसौ मनापो गुरुर्भाविनीयः पूज्यः प्रशस्यः प्रेताग्रहणेन <sup>१५८</sup> । कृत्या  
 ( ? कृत्या ) प्रतिकर्मणा कर्म पुण्यबुद्ध्या च <sup>१५९</sup> । न भृतिकया <sup>१६०</sup> । न देश-  
 निरुक्तेर्व्यसनम् <sup>१६१</sup> । नापभ्रष्टमात्रमतिचिरं धारयेत् <sup>१६२</sup> । उपधिवारिकस्य  
 देयत्वम् <sup>१६३</sup> । संघे तेन प्रात्रजितसंभावनायामुपदर्शनम् <sup>१६४</sup> । अननुमजे  
 स्वामिनः प्रतिसंस्तरोकायामुपनिबन्धनम् <sup>१६५</sup> । नाननुज्ञातात् ग्लानेन तद्वैपज्यं  
 पाचे(यये?)त् <sup>१६६</sup> ।

॥ अदत्तादानपाराजयिके विभङ्गः ॥

(ख) क्षुद्रकगतम् ।

न सपरिग्रहमनुज्ञातोऽप्येन कल्पेन स्वीकुर्यात् <sup>१६७</sup> । न स्वीकृतं मोचयेत् <sup>१६८</sup> ।  
 याचनं धर्मदेशनया <sup>१६९</sup> । उपाद्दमूल्येन <sup>१७०</sup> । युक्तं पात्रचीवरस्य स्फुटेनापि  
 ग्रहणम् <sup>१७१</sup> । नासत्संभावना वा ह्युत्सृष्टमित्यमहाजनप्रत्यक्षमधितिष्ठेत् <sup>१७२</sup> ।  
 नामनुपा(प्या)धिष्ठत्वे शब्द्रव्यस्यापरिग्रहत्वम् <sup>१७३</sup> । पृष्ठतोऽस्य प्रदुष्टस्य गम-  
 नम् <sup>१७४</sup> । अवमूर्त्त(र्ध?)कं निप[त?]घ्नायोपरिदानं पादान्तात् प्रभृति <sup>१७५</sup> ।  
 नाक्षंताद् गृह्णीयात् <sup>१७६</sup> । न स्वयं क्षण्वीत क्षाणयेद् वा <sup>१७७</sup> । प्रतिशमनमेव  
 दन्तकाष्ठे कोशाडुकगोमयमृदां यथासुखकरणमकामं संवदेनापह(हि)यमान-  
 (पि)स भिक्षोः श्रामणेरस्य वा <sup>१७८</sup> ।

॥ अदत्तादानपाराजयिके क्षुद्रकगतम् ॥

(ग) पृच्छागतम् ।

काकणिचतुष्कं मापकः <sup>१७९</sup> । निदर्शनं पञ्चत्वं चतुर्थस्य कार्पाषणात् <sup>१८०</sup> ।  
 यत्रास्य विंशतिपर्वत्वं तदाश्रित्य <sup>१८१</sup> । हारकालस्थानगणनेनास्य व्यवस्था <sup>१८२</sup> ।  
 प्रकर्षपर्यन्तभूतत्वमशक्यकरणमूल्यस्य महत्त्वेन <sup>१८३</sup> । नाल्पत्वेन अस्य न्यून-  
 त्वेन नान्तर्गतत्वम् <sup>१८४</sup> । अतुलरत्नत्वमत्र बुद्धधातोः <sup>१८५</sup> । दुष्कृतं पूजार्थ-  
 तायाम् <sup>१८६</sup> । निर्दोषत्वं लेख्यस्य <sup>१८७</sup> । विनाश्यापहृतौ तदवस्थस्य हारव-  
 स्तुत्वम् <sup>१८८</sup> । अपरिग्रहत्वमुत्तरकुरौ <sup>१८९</sup> । वक्ष्य (?) वदेत् <sup>१९०</sup> । तात्कालि-  
 कस्यात्मनः स्वामित्वम् <sup>१९१</sup> । देवत्वं निर्दूतस्य <sup>१९२</sup> । प्रयोगवदनुज्ञातस्य  
 निःसृष्टत्वेनोपभोगः <sup>१९३</sup> । दापनं च मन्त्रौपधाभ्याम् <sup>१९४</sup> । पाराथ्ये च मौल-  
 विधम् <sup>१९५</sup> । कल्पेन च <sup>१९६</sup> । विचयनं च रुचितापहारेष्ठा(च्छा)पाम् <sup>१९७</sup> ।  
 प्रयोगो व्यसनं द्यूतेन चैत् जितत्वभूतम् <sup>१९८</sup> । एतदत्र हारः <sup>१९९</sup> । तस्य  
 संख्याने <sup>२००</sup> । तत्त्वं लोयाधारोपयो[ः] विहस्य <sup>२०१</sup> । स्थानोचरे च  
 निक्षिप्ते <sup>२०२</sup> । निष्पत्तिरत्र हारः <sup>२०३</sup> । तद्वद् वर्गान्तरे गणनम् <sup>२०४</sup> । व्यप-

लापश्च गौर्यसेतरेषु द्वैतरस्य वा पूर्वेषु <sup>(११३)</sup> । यत्रैतत् सर्वादौ तत्राशित्वम् <sup>(११४)</sup> ।  
 प्राप्नुवत् उद्भावनञ्चाप्रभवतः <sup>(११५)</sup> । अनादिष्टपाचनञ्च <sup>(११६)</sup> । प्रयोगोपलापो  
 यञ्चितकायमित्यकनिष्टक्षेपाणाम् <sup>(११७)</sup> । संनिष्टपनं हारः <sup>(११८)</sup> । निहितनिक्षेपस्य सह  
 चेद् याचनेन पश्चात्तः पुरस्ताच्चेत् प्रयोगान्तरत्वम् <sup>(११९)</sup> । नाशनं स्थूरा(?)  
 छेदो मारणञ्च <sup>(१२०)</sup> । स्थूलकृत्तं सीमाकाशस्य शुद्धमंतौ <sup>(१२१)</sup> । निर्दोषत्वमृद्धि-  
 नयनेऽन्यसीद्धञ्च <sup>(१२२)</sup> । दुष्कृतमुद्योजनस्य <sup>(१२३)</sup> । मार्गान्तरोपदेशि[न?]श्च <sup>(१२४)</sup> ।  
 न्यूनमुपायादा (दाय?) हारः <sup>(१२५)</sup> । पथि वदपथम् <sup>(१२६)</sup> । अन्यानपननत् मुषरुष्टे-  
 नान्त्यस्य स्तेयचिततापगतावनुष्ठितत्वम् <sup>(१२७)</sup> । न लिप्यादौ हासः <sup>(१२८)</sup> । न  
 प्रसज्य भञ्जनं च हारः <sup>(१२९)</sup> । न सखानस्य <sup>(१३०)</sup> । न मारितत्वं कृतता <sup>(१३१)</sup> ।  
 नैकदेशेन स्थानामुक्तौ <sup>(१३२)</sup> । श्वाटनं तेनापनये हारः <sup>(१३३)</sup> । निर्गमः सन्दकर-  
 कृच्छिद्रणेन <sup>(१३४)</sup> । एकत्वञ्चापश्चिमादतोऽत्र द्रव्यस्य <sup>(१३५)</sup> । प्रत्यादानं राशेः  
 हारभेदः <sup>(१३६)</sup> । नियोज्यानैक्ये प्रनि(ति?)तदंशम् <sup>(१३७)</sup> । हर्दणाञ्च <sup>(१३८)</sup> ।  
 लभेरेकैकमत्येन हारः <sup>(१३९)</sup> ।

॥ अदत्तादानपापजयिके वृच्छागतम् ॥

(घ) विनीतानि ।

प्रागन्ते मृतत्वे प्रतिनिक्षेप्यत्वम् <sup>(१४०)</sup> । मृतपरिस्कारत्वं विपर्यये <sup>(१४१)</sup> ।  
 भ्रातृवत् सधो न तदर्थं हारो न स्वीकारः <sup>(१४२)</sup> । स्वन्तु स्व[?]म्यभेदः <sup>(१४३)</sup> ।  
 नापक्रमणादाननिश्चये वा शैक्षैः हतौ तद्रत्वम् <sup>(१४४)</sup> । नांशस्वीकारेऽडानादाना-  
 भिप्रायः <sup>(१४५)</sup> । न तद्रतकर्मानुष्ठानं न तस्य <sup>(१४६)</sup> । न साद्विहारित्वं  
 अन्तेवासिता च हारानुत्थाने कारणम् <sup>(१४७)</sup> । मर्यादार्ये परिक्षेपे तत्रम् <sup>(१४८)</sup> ।  
 न स्थितं मर्यादासचारणस्थानेनाक्षेपः <sup>(१४९)</sup> । समक्षान्तेऽप्यनाभासित्वं हारो  
 वशीकृतत्वं फलाद् ग्रहे मनुष्यस्य <sup>(१५०)</sup> । नैपात्मनः <sup>(१५१)</sup> । न हारे यदभिसंहितं  
 तत्संबन्धादना(?)भिसहितस्यापक्रमः <sup>(१५२)</sup> । स्थूलं यो यद् शुद्धीते तस्य  
 तदिति व्यवस्थायामन्यहारे <sup>(१५३)</sup> । सपरिग्रहाच्छर्मशानाद् ग्रहणे <sup>(१५४)</sup> । स्रनक-  
 चाटवाण्टपत्रपुष्पफलाराम[?]दर्मञ्चैर्षप(चै. कर्ष?)णे <sup>(१५५)</sup> । प्रासानुप्रदानेन यदा-  
 श्यमधिरुद्धेन चैरमेप हर्च्यमिति कायविप्रकारे <sup>(१५६)</sup> । नावं च <sup>(१५७)</sup> । इत इति  
 च <sup>(१५८)</sup> । मातृपितृभ्र[?]तृभग्निष्पुपाच्यायाचार्यस्थू(इस्तु)पसंघादौ संकल्प्य  
 शुद्धकरणीयकरणीयातिक्रमणे <sup>(१५९)</sup> । याचतो धारयोरेदानसकल्पे <sup>(१६०)</sup> । वण्टने  
 चान्त्यर्थं दत्तस्य <sup>(१६१)</sup> । परिशुद्धीतसङ्घिनोऽपरिशुद्धीते <sup>(१६२)</sup> । कुलमासौ (इपौ)-  
 दनसङ्घु(इधु?)मत्स्यमासरायवस्तुऋपिण्डपाद(इत)परिशुद्धेनाज्ञातेव्य(इप्य)त्र व-  
 स्तुत्वम् <sup>(१६३)</sup> । नानधी(?)ष्टेन <sup>(१६४)</sup> । दुष्कृतमनिमञ्चितभोजने <sup>(१६५)</sup> । भगने



चापहृत्यै <sup>११५</sup> । न संप्रधारणाऽस्यातः पृथक्त्वम् <sup>११६</sup> । निराग्रहमिति स्वप्रत्य-  
वेक्षितं कृत्वा गृहीयात् <sup>११७</sup> । न कायावपा(ऽसा)दं कुर्यात् <sup>११८</sup> । न कुलायकं  
भञ्जेत् <sup>११९</sup> । नानुपितस्तत्र वार्षिके चीवरांशे वयतेत् <sup>१२०</sup> । न हर्तुर्दान-  
पतिचित्तेन प्रतिग्रहे दोषः <sup>१२१</sup> । नागमस्तेन्यचौराद् ध्वजवंधकाद् गृही-  
यात् <sup>१२२</sup> । शस्त्रलूनं दुर्वर्णीकृत्यातो गृहीतं धारयेत् <sup>१२३</sup> । दानमेवं कृतस्यापि  
शान्त्वे <sup>१२४</sup> । न चक्रकं कुर्यात् <sup>१२५</sup> । न मन्त्रैर्मोचने दोषः <sup>१२६</sup> । मूर्षिकाप-  
हृतस्य च स्वस्यादानेऽन्यभिक्षवर्थस्य तदर्थम् <sup>१२७</sup> । न अभिद्रुतस्य लुब्धके(ऽकै)-  
शृंगस्याश्रमं प्रविष्टस्यादाने <sup>१२८</sup> । मृतस्यास्य तेभ्यो देयता <sup>१२९</sup> ।

॥ अदत्तादानपाराजयिके विनीतकानि ॥

॥ अदत्तादानपाराजयिकं समाप्तम् ॥ २ ॥

ॐ

(३) वधपाराजयिकम् ।

(क) विभंगगतम् ।

न मरणचेतनानुगुणं ग्लानायोपसंहारे त[दु]पसंहरेत् <sup>१३०</sup> । नाविज्ञ[ऽ]म-  
स्यानुक्तौ मृत्यौ प्रत्यनीकत्वमुपस्थापयेत् <sup>१३१</sup> । न सत्यां गतौ <sup>१३२</sup> । न  
मरणोपकरणम् <sup>१३३</sup> । मरणार्थादिनमनुष्ठानादुपस्थापको वारयेत् <sup>१३४</sup> । नार्थार्थे  
परस्य मृत्युनाकांक्षयेत् <sup>१३५</sup> । अकरणीयत्वं चित्तं नाकरणीयकरणानुमोद-  
नस्य <sup>१३६</sup> । जीवितोपरोधे <sup>१३७</sup> । तच्चित्तेन मृत्युप्यगते(तेः ?) <sup>१३८</sup> । अभेदः  
कायतत्संबद्धमुक्तपरसमादापनानाम् <sup>१३९</sup> । विपचूर्णगर्तदारुनष्टप्रकृतिप्रेषणोर-  
स्कन्दपत्रकूटवेताडयन्त्रप्रयोगानां पातनस्य <sup>१४०</sup> । जलाशयोः प्रक्षिप्तेः <sup>१४१</sup> ।  
धारणस्य शीतोष्णयोः <sup>१४२</sup> । दौत्यप्रेषणादीनां अल्पत्वस्यानुष्ठाने <sup>१४३</sup> ।  
स्त्रीपुरुषपण्डकत्वे घात्यस्य <sup>१४४</sup> । अन्यदा तन्निदानं मृतौ <sup>१४५</sup> । अनिमित्तत्वं  
विच्य(ऽ)न्दनात् परस्याम् <sup>१४६</sup> । स्थूलमभिसंहितस्य मातृगर्भयोः कुक्षिमर्दे <sup>१४७</sup> ।  
आधिवासनायास्तु तन्निमित्तं वधप्रवृत्तेः <sup>१४८</sup> । त्वन्नाम्ना मरणोपकरणं ददामीति  
चोक्तेः <sup>१४९</sup> । अन्यघाते वा तिरश्चो निर्मितस्यापि <sup>१५०</sup> । नानुक्तमवलोक्येन  
ग्लानाय भैषज्यं दद्यात् <sup>१५१</sup> । वै(वै ?) यत्प्रजितकृष्टिष्ठानामत्रालोक्यत्वम् <sup>१५२</sup> ।  
व्य[ऽ]धिना च <sup>१५३</sup> । वृद्धवृद्धानां प्रव्रज(ऽजिता)नां भिक्षुणाम् <sup>१५४</sup> । पूर्वाभावे  
परस्य <sup>१५५</sup> । अभावो मरणाय हितकामतया भैषज्यानुप्रदाने हासस्य <sup>१५६</sup> ।  
नासद्यमारोज्य क्षेपे साहाय्यं भजेत् <sup>१५७</sup> । भजेत् रूपश्रेत् प्रत्ययो व्यवकीर्णतायां  
गृहस्थैर्नियुक्ततायां समोत्क्षेपे <sup>१५८</sup> । स्थापनेऽपि समत्वे नियुजीत <sup>१५९</sup> । नेष्टकाः  
क्षिपेत् <sup>१६०</sup> । न चटितां स्फुटितां वा नारोच्य तत्रमर्षयेत् <sup>१६१</sup> । कुर्यात् तस्कर-  
स्यरिभृत्यै फिफिरम् <sup>१६२</sup> । क्षिपेत् परिकृतां संगण्टादि <sup>१६३</sup> । अनुवातं च

पांसुवटभस्मरूपम् <sup>११०</sup> । धारयेत् क्षं(?)पनम् <sup>११०</sup> । न श्रान्तं क्षिपेद्  
 मिश्रम् <sup>११०</sup> । सनाध्यस्याप्यकरणम् <sup>११०</sup> । विश्रामणम् <sup>११०</sup> । भाण्डिक-  
 दानम् <sup>११०</sup> । अशक्तौ प्राप्नुमायासं समं चेन्न काले भक्तस्य पानकस्य वा <sup>११०</sup> ।  
 पात्रनिर्मादिनम् <sup>११०</sup> । गन्त्रीस्थापनम् <sup>११०</sup> । प्रतिग्रहणम् <sup>११०</sup> । प्रत्यवेक्षणम् <sup>११०</sup> ।  
 काले चेत् प्रत्युद्गमनमादाय <sup>११०</sup> ।

॥ वधपाराजयिके विभङ्गः ॥

(स) क्षुद्रवगतम् ।

हस्तच्छेदनं मनुष्यगतिकस्य स्थूलम् <sup>११०</sup> । दावेऽग्निदाने <sup>११०</sup> । केश-  
 विक्रये <sup>११०</sup> । राजकुले येन सुपितृत्वात्सार्पणे <sup>११०</sup> ।

॥ वधपाराजयिके क्षुद्रवगतम् ॥

(ग) पृच्छागतम् ।

नियोगोपदेशः <sup>११०</sup> । निदर्शनं मातृगर्भः <sup>११०</sup> । स्थूलमात्मनो धाते <sup>११०</sup> ।  
 दुष्कारोऽसाधुरविकृतचित्तस्य कारः <sup>११०</sup> । नासंहितार्थसंपत्तेः[ः] कर्तृत्वम् <sup>११०</sup> ।  
 न जन्मान्तरे कर्मोदयः <sup>११०</sup> ।

॥ वधपाराजयिके पृच्छागतम् ॥

(घ) विनीतकानि ।

स्थूलं मृत्युरेवं मे भवतीति युवाणस्याप्रतियता तथात्प्रसंपादने मृग्य(?)मि)ता-  
 मित्यनु[प]स्थानैः ग्लानस्य <sup>११०</sup> । असंप्रेयाभ्यवहार्यदाने <sup>११०</sup> । गण्डस्यापरिप-  
 कस्य पाटने <sup>११०</sup> । गर्तप्रक्षेपकराटपीडनादौ पातने <sup>११०</sup> । प्रपातोत्सर्गो-  
 द्वन्धादौ मरणार्थेऽनुष्ठाने <sup>११०</sup> । न ग्लानाय सहसा शस्त्रकं रज्जुं वा दद्यात् <sup>११०</sup> ।  
 संप्रजानं वैयाघ्र्यं कुर्यात् <sup>११०</sup> । मन्त्रचपेटञ्च दद्यात् <sup>११०</sup> । प्रहारञ्चादेरप-  
 नोदाय तद्भू(?)तं सुप्रत्यवेक्षितं कृत्व(?)त्वा) लेखयेत् <sup>११०</sup> । नालपांशो गुरुभा-  
 रोद्यमं कुर्यात् <sup>११०</sup> । नावमुर्धको गच्छेत् <sup>११०</sup> । नाशिक्षितः शिक्षां योजयेत् <sup>११०</sup> ।  
 न प्रहरणमुक्तावाङ्मापयेत् <sup>११०</sup> । न ग्लानमसमर्थनि(?) नयेत् <sup>११०</sup> ।

॥ वधपाराजयिके विनीतकानि ॥

॥ वधपाराजिकं समाप्तम् ॥ ३ ॥

(४) उत्तरप्रलापपाराजयिकम् ।

(क) विभङ्गगतम् ।

विनिधाय संज्ञामुत्तरमनुष्यधर्मयुक्ततोक्तात्मनः <sup>११०</sup> । तत्रं पश्यामि मां  
 पश्यन्ति शब्दा[ः] शृणोमि मम शृण्वन्त्युपक्रमामि माणुपसंक्रामन्ति सार्द्धमा-

लपामि संलपामि प्रतिसंमोदे सातत्यमपि समापद्ये मया सार्द्धमित्युक्ते <sup>(१५७)</sup> ।  
 देवनागयक्षगन्धर्वकिन्नरमहोरगप्रेतपिशाचकुम्भाण्डकटपूतनप्रतियोकि(?)गिता-  
 याम् <sup>(१५८)</sup> । स्थूलकृच्चं पांसुपिशाचकस्य <sup>(१५९)</sup> । अनित्यादिसंज्ञाव्याकरणा-  
 प्रमाणारूप्यफलाभिज्ञादिकमुत्तरो धर्मः <sup>(१६०)</sup> । स्थूलकृच्चं स्वलक्षणग्राहकस्य  
 क्लेशविस्कम्भिनः शमथः निमित्तस्य <sup>(१६१)</sup> । नानुक्तिस्तद्वचस्यः तद्वद्वर्मक-  
 त्वोक्तेः <sup>(१६२)</sup> । परावदेशत्वमस्त्यसावित्युपसन्धाने स्वस्य <sup>(१६३)</sup> । नोप-  
 संधाने <sup>(१६४)</sup> । नासमन्वाहृत्य व्याकुर्यात् <sup>(१६५)</sup> ।

॥ प्रलापे विभङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतम् ।

नाख्यापनमुत्तरस्य प्राप्तपरिहानिप्रतिपादनम् <sup>(१६६)</sup> । उत्तरख्यापनच्छन्देन  
 सनामार्थाभिधाने स्थूलम् <sup>(१६७)</sup> । विपर्ययस्य <sup>(१६८)</sup> । संबन्धनेन च न भूतोत्तरत्वेऽस्य  
 जातत्वम् <sup>(१६९)</sup> ।

॥ प्रलापे पृच्छागतम् ॥

(ग) विनीतकानि ।

स्थूलमन्तर्तदन्तोग्र(?)चार्हसि चीवरादिकं ब्राह्मणो चाहितपापधर्मा पङ्गतसे-  
 न्द्रियाणि सुदान्तगुप्तरक्षितभावितानीत्युक्तस्य तूष्णीम्भावेनाधिवासने <sup>(१७०)</sup> ।  
 यदि भदन्तोऽर्हन् पिण्डपातं मे गृहाण प्रविश गृहमासने निपीद हस्तोदकं गृहाण  
 भोजनं प्रतिगृहाण स्रपिकं शंश्वानुमोदस्य निष्कामेति तद्वत्संपादने <sup>(१७१)</sup> ।

॥ प्रलापे विनीतकानि ॥

॥ समाप्त उत्तरप्रलापः ॥ ४ ॥

३२, संघावशेषः ।

(१) शुक्रमोचनम् ।

(क) निमङ्गगतम् ।

अभाववत् स्वभः <sup>(१७२)</sup> । अकृतत्वं तत्फलस्य <sup>(१७३)</sup> । मोचने <sup>(१७४)</sup> । तच्छ-  
 न्देन <sup>(१७५)</sup> । सशुक्रस्य <sup>(१७६)</sup> । आद्ये <sup>(१७७)</sup> । अविशेषः सुखवीजभैषज्यमीमां-  
 सार्थितानाम् <sup>(१७८)</sup> । स्पर्शनेन <sup>(१७९)</sup> । व्यापृत्या <sup>(१८०)</sup> । अङ्गजातस्य <sup>(१८१)</sup> ।  
 बाधेनापि सत्त्वसंख्येन स्थितेन तदाहारे <sup>(१८२)</sup> । विनाप्यभिनिग्रहाभिनिपीड-  
 नाम्प्याम् <sup>(१८३)</sup> । विनिर्भोगव्याप(?)रुष्यवसर्गसुखप्रत्यनुभवैश्च <sup>(१८४)</sup> । अनाडी-  
 गतस्य <sup>(१८५)</sup> । अकृतत्वं विधानस्थायीं प्रतिविरतो समाप्तेः <sup>(१८६)</sup> । हासकृच्चं  
 नृचक्षु(रुस्ती?)नृचयोः <sup>(१८७)</sup> । आकाशे कदिचालनस्य <sup>(१८८)</sup> । प्रदेशान्तरस्थितेः <sup>(१८९)</sup> ।

प्रतिस्रोतो धारणकस्य <sup>११७</sup> । प्रतिवातश्च <sup>११८</sup> । अभिनिर्भोगसुखप्रत्यनुभावोपसं-  
 पप(स्पर्श?)तः <sup>११९</sup> । नाडीगतस्य <sup>१२०</sup> । न मापनार्थत[?]यां रक्तचित्तायां  
 स्पृष्टिरप्रयोगः <sup>१२१</sup> । दर्शने दुष्कृतम् <sup>१२२</sup> । धारणे चानुस्रोतोवार्तम् <sup>१२३</sup> ।  
 अनापत्तिः[?] सहसा अतदर्धप्रवृत्तावूरुवस्त्रपरसंस्पर्शकण्ठ्यनैः <sup>१२४</sup> । असृष्ट्यानु-  
 भूतेः <sup>१२५</sup> । स्मरणतस्तस्यापि <sup>१२६</sup> ।

॥ मोचने विभङ्गतम् ॥

(स) पृच्छागतम् ।

च्यविष्यमाणच्युते[?] समनन्तरं विद्व(?)नाडीगते <sup>१२७</sup> । नारम्भमात्रेण  
 प्रयोगत्वम् <sup>१२८</sup> । तद्वचं निष्प्रयोगायां मुक्तौ स्वादने <sup>१२९</sup> । न पीडमर्दपरि-  
 मर्दानाञ्चाङ्गजातस्य <sup>१३०</sup> । कर्मण्यस्याप्यपरिभोगे भैषज्येन मोचनम् <sup>१३१</sup> ।  
 परकीय[?]श्च <sup>१३२</sup> ।

॥ मोचने पृच्छागतम् ॥

(ग) विनीतकानि ।

विनीलकादौ विघटिति(?) अस्थिशङ्कलरुयोः शिरःकर्णनास[?]सु शि(?)श्री)वा-  
 न्तपार्श्वपृष्ठकोडबलिषु बालान्तरे हस्तांसवाहुषु बाह्वन्तरे कट्यूरुपादजंघामु जंघा-  
 न्तरे च मोचने मौलम् <sup>१३३</sup> । स्थूलकोचवनमर्त(?)ता)चिलिमिनिक्विप्सोपधान-  
 कर्मचपीठवृत्तिपीठान्तरे पटघटिकाघटविलकरकिनीकठिलकशिलालेपलेपान्तरा-  
 र्गतमांसपेशिषु <sup>१३४</sup> । व्रणपीडने <sup>१३५</sup> । निपीडने स्त्रीकृतस्यारम्भे <sup>१३६</sup> ।  
 अङ्गुष्ठस्यात्र प्रथितौ <sup>१३७</sup> । उपसंक्रामतो मुक्तौ <sup>१३८</sup> । संक्रामतश्च स्थानात्  
 स्थानम् <sup>१३९</sup> । अयोनिश्च मनसि कुर्वतः <sup>१४०</sup> । अंगजातं धारयतः <sup>१४१</sup> ।  
 अनापत्तिः वस्त्रसंघर्षणात् <sup>१४२</sup> । परिष्वङ्गेनापीदानौ पुराणद्वितीयया <sup>१४३</sup> ।  
 पादजंघाबाहूर्बगुल्यादौ च स्त्रियः[?] ग्रहणे <sup>१४४</sup> ।

॥ मोचने विनीतकानि ॥

॥ मोचनं समाप्तम् ॥ १ ॥

(२) कायसंसर्गः ।

(क) विमङ्गतः ।

स्त्रिया कर्तृत्वम् <sup>१४५</sup> । इह <sup>१४६</sup> । रहसि, निषद्यास्थानयोः <sup>१४७</sup> । समोजन-  
 तायाश्च <sup>१४८</sup> । सह श्रुत्यायां अघ्न्यविज्ञपुरुषया सार्द्धमूढौ <sup>१४९</sup> । उत्तरत्र  
 द्वये <sup>१५०</sup> । देशेने(?)गृहिण्याः पुंसोः साभिष्यविज्ञस्य <sup>१५१</sup> । साभिष्येऽप्य-  
 कल्पिकायाम् <sup>१५२</sup> । दुष्कृतस्य <sup>१५३</sup> । न्यूनत्वं द्वीपान्तरजविकारभाजः <sup>१५४</sup> ।  
 चोदृत्वमस्य <sup>१५५</sup> । व्यर्थं दावित्ये(?)परं लिङ्गम् <sup>१५६</sup> । अवताका(रक्त?)मत्र <sup>१५७</sup> ।

या (?) ज्ञाते सुभ[ ]पितृर्भापितयोरर्थस्य त्रयोऽन्त्येऽन्यत्र प्रतिसेवने मिथुनखेति  
 प्रतिबलत्वे मौलस्य <sup>(१७)</sup> । अनन्तरस्यान्यत्र <sup>(१८)</sup> । तद्वत्पण्डिका पण्डिकी  
 निर्मिता च <sup>(१९)</sup> । इह च त्रये पुरुष[ ] <sup>(२०)</sup> । तत्र सुखानुभयनच्छन्दे चेत्  
 संरागसंप्रयुक्तेनेति <sup>(२१)</sup> । मानससंसर्गस्वीकारे <sup>(२२)</sup> । तद्वच्चमत्र वेधोः <sup>(२३)</sup> । तत्प्र-  
 तिघट्टस्य च चीवरस्य <sup>(२४)</sup> । अविशिष्टत्वमामर्षयामंशालम्भग्रहणाकर्षपरि-  
 कर्षोच्छिगापलिङ्गाभिनिपीडानाम् <sup>(२५)</sup> । सेव्यकृत्वस्य च <sup>(२६)</sup> । अनन्तरं चीवरान्-  
 न्तरये <sup>(२७)</sup> । अनन्यरत्नं-दुष्कृतज्ञासस्य <sup>(२८)</sup> । न भिक्षुर्णां स्पृशेत् <sup>(२९)</sup> । न  
 स्त्रियम् <sup>(३०)</sup> । स्पृशेदंभस्यार्त्तामुत्तारणाय वाहौ केशेषु वा मातृदुहितृभगिनी-  
 संज्ञामुपस्थाप्य <sup>(३१)</sup> । वालुकास्थाने चेशालामार्थमवाद्मुखावस्थापनम् <sup>(३२)</sup> ।  
 पीठमद् रक्षणम् <sup>(३३)</sup> । भक्तायावलोक्य गोपालपशुपालकानगमनम् <sup>(३४)</sup> ।  
 प्रत्यवेक्षणं जीवति न वेति पौनःपुन्येन <sup>(३५)</sup> । निर्दोषोऽनुकम्पया शुद्धचित्तस्य  
 स्त्रीपरिष्वङ्गः <sup>(३६)</sup> ।

॥ कायसंसर्गं विभंगः ॥

(ख) पृच्छागत ।

श्लक्ष्णोष्णमृदुकाभिप्रायत्वे स्थूलम् <sup>(३७)</sup> । अनापत्तिरनुकम्पया दुःखात्  
 मोचने <sup>(३८)</sup> । मातृदुहितृभगिनीषु तत्संज्ञाने <sup>(३९)</sup> । पूर्वसंश्रुतायां संमोदने <sup>(४०)</sup> ।

॥ कायसंसर्गं पृच्छा ॥

(ग) विनीतकानि ।

भिक्षापांसुलेङ्गुकादेः स्त्रीन्द्रिये प्रक्षिप्तौ स्थूलम् <sup>(४१)</sup> । दुष्कृतं पादांशादिना  
 स्त्रीषड्भूते <sup>(४२)</sup> । तदासनस्य च <sup>(४३)</sup> । पिच्छिलितपतितहृद्युत्थापने <sup>(४४)</sup> । अना-  
 पत्ति[ ] स्त्रियाऽप्यैतत्त्रयकरणे ग्रहणे च <sup>(४५)</sup> । आलिङ्गने मात्रा <sup>(४६)</sup> ।  
 दुद्दिनोत्सङ्गे निषक्तौ (?) <sup>(४७)</sup> । स्त्रिया प्रस्सत्सुपरिषाते <sup>(४८)</sup> ।

॥ कायसंसर्गं विनीतकानि ॥

॥ कायसंसर्गः [समाप्तः] ॥ २ ॥

(३) मैथुनाभाषणम् । -

(क) निमग्नगतम् ।

मैथुनोक्तौ <sup>(४९)</sup> । याद्य(?)र्थेन <sup>(५०)</sup> । यत्र चोदुं भव्यता स विज्ञप-  
 नेऽन्तः <sup>(५१)</sup> । न तद्गतायोक्तेऽप्रयोगत्वम् <sup>(५२)</sup> । अविशिष्टत्वं वर्णार्णयात्रो-  
 पयात्रापृच्छापरिपृच्छाल्यानाशंसाक्रोशप्रत्यनुभाषणप्रतिपदात् <sup>(५३)</sup> । अनापत्ति-  
 रयान्तराभिप्रायेण जनपदनिरुक्तिवशात् <sup>(५४)</sup> । सत्प्रशास्यत्वस्य वा नात्तः <sup>(५५)</sup> ।

॥ मैथुनाभाषणे विभङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतम् ।

स्थूलं छेकांशी(?) काऽसी)तिनादे पापिकासीति छेकं ते पापकं वा व्रणमुखमिति संविभागं कुर्विति मां संविभजस्वेति मया साद्वं स्वपिहि समागमं वा कुर्विति <sup>(१०)</sup> ।

॥ मैथुनाभाषणे पृच्छा ॥

(ग) विनीतकानि ।

तथा विकृतीणधर्मिकाभाषणे <sup>(११)</sup> । यवान्(गुं?) देहि देहि भगिनि महं यत्ते भगिनि पश्यामि तद् देहि यत् ते भगिनि पुरतस्तद् देहि यत् ते भगिनि मन-आपं तद् देहि प्रियं ते देयमित्यहमुक्ता किन्ते प्रियमित्युक्ते त्वं मे भगिनि प्रिया <sup>(१२)</sup> । देहि मे भगिनि पानीयं खाद्यकं यवागुं भोजनं त्वमेवैतदित्युक्तिषु <sup>(१३)</sup> । गर्दमास्त एतत् कुर्वन्त(इन्तु) <sup>(१४)</sup> । चारिकां भगिनि चरस्थु-ह्यापयमाना पुर्यान् पिण्डपातम् <sup>(१५)</sup> । अलातमसिन् प्रक्षिप्तेति च <sup>(१६)</sup> । प्रकृत्या च दौष्टुल्यभाषिणो दुष्टुलया भाषणे <sup>(१७)</sup> ।

॥ मैथुनाभाषणे विनीतकानि ॥

॥ मैथुनाभाषणं [ समाप्तम् ] ॥ ३ ॥

(४) सांचरित्रम् ।

(क) निमङ्गगतम् ।

मैथुनेनात्मनः परिचरणस्य वर्णने <sup>(१८)</sup> । तद्वद्वर्णितानुमोदनार्थं वचनम् <sup>(१९)</sup> । तदेव प्रत्युच्चारणम् <sup>(२०)</sup> । तेन मैथुनेन वानुपसंधाने प्रयोगतन्त्रम् <sup>(२१)</sup> । उभाभ्यां तस्य <sup>(२२)</sup> । परिचर्यासंवर्णनम् <sup>(२३)</sup> । संयोगे <sup>(२४)</sup> । अन्यस्य <sup>(२५)</sup> । अन्येन <sup>(२६)</sup> । तदर्थम् <sup>(२७)</sup> । अनुपनतोपनतेः प्रमत्तैः गृहीतदौतेयस्य संप्रयोज्यतो निवेदि भवतस्तत्रेतरतदुक्ते पूर्वत्र प्रवेदने <sup>(२८)</sup> । कृतत्वं श्रुतत्वेऽप्यमध्य-वृत्तेः <sup>(२९)</sup> । पृथक्त्वमेपां करणीयतायाम् <sup>(३०)</sup> । नाकर्तृत्वेऽन्त्यस्य नृत्वेन (?) प्रयोगत्वम् <sup>(३१)</sup> । न फले क्या(?)स्यात् प्रतिकर्तृसमाप्ते व्यापारस्य लोपः <sup>(३२)</sup> । स्वत्वमत्र दूतस्य <sup>(३३)</sup> । संप्रयोज्यत्वं तत्प्रभोः <sup>(३४)</sup> । पत् (?) तत्वमन्यस्य । <sup>(३५)</sup> । वाकत्वं लिपिहस्तद्विदेशं संकेते निमित्तानाम् <sup>(३६)</sup> । अनुपनतिवेश्यात्वम् <sup>(३७)</sup> । प्रवत(?)त्वं चास्त्वनेन प्राक् चतुष्ट[य]त् <sup>(३८)</sup> । अष्टत्वं फलहितत्वे <sup>(३९)</sup> । तद्वशा चेदभार्यानुश्रावितत्वे प्राणिवत्त्वं तदन्तरसमन्तरकलिहितत्ववतिलिन्तिलि-क्ताच्छिन्नद्वित्रिसुर(इंसं)करापरितत्वाचारप्रतिनिःसृष्टत्वाभार्यानुश्रावितत्वघण्टा च घुष्टवानां दुष्कृतकृत्वं त्रयस्यास्यामार्यस्य <sup>(४०)</sup> । कस्मादयं न प्रतितिष्ठतीयं न गच्छति श्वशुरगृहात् न नीयत इति चोक्तीनाम् <sup>(४१)</sup> ।

॥ सांचरित्रे विमङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतम् ।

स्थूलं गर्धासन्निपतासेवनक्रीडोपनतात्मनां सांचरित्रे<sup>(१००)</sup> । व्यपदेशे प्रतीष्ट-  
तायाम्<sup>(१०१)</sup> । कलि(श्ल)हेन हारणे<sup>(१०२)</sup> । माऽऽर्याममुका(कां) स्त्रियं क्रीणी-  
हीत्युक्तौ<sup>(१०३)</sup> । दुष्कृतं स्त्रियमिति<sup>(१०४)</sup> । काचिल्लभे[ति?]ति च<sup>(१०५)</sup> ।

॥ सांचरित्रे पृच्छा ॥

(ग) विनीतकानि ।

स्थूलं दत्तौ तामसमाधानेन<sup>(१०६)</sup> । धर्मोपाधिं पुरस्कृत्य शब्दनेन<sup>(१०७)</sup> ।  
अन्यार्थमसंहित[ि]ञ्च<sup>(१०८)</sup> । नादुष्टताया[ः] सन्नस्थान्यत्रेत्यनाक्षिप्तत्वम्<sup>(१०९)</sup> ।

॥ सांचरित्रे विनीतकानि ॥

॥ [समाप्तं] सांचरित्रम् ॥ ४ ॥

(५) कुट्टिकाविहारगतम् ।

(क) विभगात् ।

निर्दोषमयात्र ईर्यापथचतुष्कस्य<sup>(११०)</sup> । अतन्नत्वं नियुक्तानियुक्तत्वयोः<sup>(१११)</sup> ।  
स्वत्वं नियुक्तस्य<sup>(११२)</sup> । प्रतीष्टा वो यथोक्तकारे कायेन वा वाचा वा<sup>(११३)</sup> ।  
एकत्वं कृतेः<sup>(११४)</sup> । अकर्तृत्वमज्ञानां भेदस्य<sup>(११५)</sup> । याचितेऽनुज्ञाते वा तेन  
तद्विधेनाशुद्धे<sup>(११६)</sup> । वस्तुन्यदेशिते आव[ि]सस्य कारणान्ते<sup>(११७)</sup> । अनन्तरे  
ऽप्येतदयाचितत्वम्<sup>(११८)</sup> । एकार्थमिति प्रमाणस्य<sup>(११९)</sup> । अकल्पिता सारम्भत्व-  
मपराक्रमतेत्यशुद्धिः<sup>(१२०)</sup> । क्षुद्रजन्त्वाशयवचं राजकुलतीर्थकावसथसन्नि[ः]  
सुतत्वाच्छद्यक्षत्वमर्वाग्न्यामान्तानन्तर्यतो वहिर्नदीप्राग्भारोदयानावष्टब्ध-  
त्वमिति यथासंख्यमेतानि<sup>(१२१)</sup> । प्राम[ि]णिको हस्तोऽध्यर्षः सुगतवितस्तिः<sup>(१२२)</sup> ।  
तद्ब्रह्मादशकसप्तको (?) प्रमाणामम(?)न्तरम्<sup>(१२३)</sup> । लब्धदेशनत्वं संघतो  
देशितत्वम्<sup>(१२४)</sup> । नाशुद्रस्य याचेत्<sup>(१२५)</sup> । स्वप्रत्ययेन वा गच्छेयु[ः] नियुक्तानां  
वा भिक्षुणाम्<sup>(१२६)</sup> । संस्तरेऽप्येतद्<sup>(१२७)</sup> । अनापत्तिः कृतलाभ-परिभो-  
गयोः<sup>(१२८)</sup> । पुराणाभिसंस्करणे च<sup>(१२९)</sup> ।

॥ कुट्टिकाविहारसंघायशेषे विभंगः ॥

(ख) पृच्छागतम् ।

प्रयोगत्वमारम्भस्य<sup>(१३०)</sup> । तद्बदच्छकारणेऽन्तः<sup>(१३१)</sup> । अनेमार्थं अनि[ः]मृष्टे  
पौद्गलिकेन<sup>(१३२)</sup> । विप्रकृतस्य च<sup>(१३३)</sup> । दुष्कृतमनिनाहे याचनादूर्ध्व(?)म्<sup>(१३४)</sup> ।

॥ कुट्टिकाविहारसंघायशेषगता पृच्छा ॥ ५ ॥

( ६ ) अमूलकसंघावशेषः ।

पाराजयिकाध्याचरणस्य भिक्षोर्धर्मस्तस्याप्यनङ्गमत्र पक्षतः स्वतंत्रं मृषावादेन कस्यचिद् विज्ञप्तौ <sup>(११)</sup> । व्या(श्या)चनच्छन्देन <sup>(१२)</sup> । न तं मूलमन्तरम् <sup>(१३)</sup> । असत्त्वं प्रमुपितस्य प्रकारणमृषावादिद्वेष्यनत्वम् <sup>(१४)</sup> ।

॥ अमूलकसंघावशेषः ॥ ६ ॥

( ७ ) अन्यथाभागीयानुध्वंसने ।

वाच्यान्तरप्रतिष्ठेन वाक्येन मृषा <sup>(१५)</sup> ।

॥ अन्यथाभागीयानुध्वंसनसंघावशेषः ॥ ७ ॥

( ८ ) अमूलकलेशः ।

स्थूलमसेवनेनानुध्वंसने <sup>(१६)</sup> । अनुग्रहे च नाग्नः <sup>(१७)</sup> । तथा न तस्यान्तिके दृष्टचित्तरुधियोत्पादने संघभेदे च संघवने सन्धाय भाषितमित्यपि दुष्कृतम् <sup>(१८)</sup> ।

॥ अमूलकलेशपृच्छा ॥ ८ ॥

( ९ ) संघभेदे ।

परपर्यदपकृष्टौ स्थूलम् <sup>(१९)</sup> । निवारणप्रतिनिः]मर्गानुष्ठानरूपानुगतिः <sup>(२०)</sup> । निवारणवचनं ज्ञप्तेः एकक्षणत्वं वाक्यस्य <sup>(२१)</sup> । पृथक्त्वमावृत्तेः <sup>(२२)</sup> । न निगमनस्य <sup>(२३)</sup> । प्रयोगत्वं प्रवृत्तेः <sup>(२४)</sup> । तस्याः कृतप्रवासनीयचोदनस्मारणस्य <sup>(२५)</sup> । अनाज्ञाप्यत्वमस्य <sup>(२६)</sup> । नैषु न नाज्ञपयेयुर्मैथ(१)केन कर्मणा च <sup>(२७)</sup> । तदन्ते प्रतिनिः]सर्गे <sup>(२८)</sup> । पराक्रान्तिवत्स्य <sup>(२९)</sup> । भेदे <sup>(३०)</sup> । संघस्य <sup>(३१)</sup> ।

॥ संघभेदसंघावशेषः ॥ ९ ॥

( १० ) अनुवर्त्तने ।

तत्साहाय्यप्रतिपत्तृतायाः <sup>(३२)</sup> ।

॥ अनुवर्त्तनसंघावशेषः ॥ १० ॥

( ११ ) कुलदूषणे ।

स्वप्रवासनकर्तारि संघे मिथ्याशा येनैपास्यात् प्रवृत्तिरिति वक्तृत्वस्य मृषा <sup>(३३)</sup> ।

॥ कुलदूषणसंघावशेषः ॥ ११ ॥

( १२ ) दौर्वचत्ये ।

चोदितत्वे भिक्षुणाधिशीलमवचनीयत्वस्यात् भिक्षुरात्मनः कृते <sup>(३४)</sup> ।

॥ दौर्वचस्यसंघावशेषः ॥ १२ ॥

॥ संघावशेषः समाप्तः ॥



## § ३. नैस्सर्गिकः ।

(१) मारणे ।

नापूर्वेऽहोरात्रेण न[ऽ]स्त्यस्य सत्त्वम् <sup>(१००)</sup> । प्रयोगपात्रत्ववासे <sup>(१०१)</sup> । प्रथमारुणादिरेपोऽस्य <sup>(१०२)</sup> । सूर्योद्गमने कर्म दृष्ट(१) ये <sup>(१०३)</sup> । सत्त्वं नै[ऽ]सर्गिके संज्ञानतः प्राधान्येन <sup>(१०४)</sup> । अपेतत्वमस्य निर्यातितत्त्वे <sup>(१०५)</sup> । तत्त्वं प्रवक्ष्यापेक्षार्थतायां नियमनस्य <sup>(१०६)</sup> । चीवरान्द विकल्पनायाश्च <sup>(१०७)</sup> । ध्वंसोऽत्रानुवृत्तत्वस्य <sup>(१०८)</sup> । अंसे(१)शे च प्रकृते <sup>(१०९)</sup> । सतोऽस्यान्यत्रापि तद्वस्तुनि जातत्वम् <sup>(११०)</sup> । स जातो(१) साप्ताहिके <sup>(१११)</sup> । नै[ऽ]सर्गिकत्वस्य तदापत्तिसत्तायां स्वीकृते परिस्कारमात्रे <sup>(११२)</sup> । नैतदूनत्वे सण्डस्य <sup>(११३)</sup> । सांघिकस्य च <sup>(११४)</sup> । निस्तत्त्वमत्र तत्रम् <sup>(११५)</sup> । नेदं त्रयमास्तीर्णकठिनस्य <sup>(११६)</sup> । सद्भावे सत्त्वस्यानुवृत्तस्य दशरात्रम् <sup>(११७)</sup> । पराहादौ <sup>(११८)</sup> । वाससि <sup>(११९)</sup> । त्रिमण्डलसं(१)शुद्धादिपर्यन्तप्रमाणे <sup>(१२०)</sup> । असंभ्रन्धाधिष्ठानेन <sup>(१२१)</sup> । सम्भ्रन्धे च सानुवृत्तौ अन्यत्राधिष्ठिततद्गोर्ता(१)गात् अभृत्यन्यत्र <sup>(१२२)</sup> ।

॥ मारणे नैस्सर्गिकः ॥ १ ॥

(२) विप्रवासे ।

(क) विभगात् ।

निर्दोषो निःश(१)पदनेन विप्रवासः <sup>(१)</sup> । न प्रमील्य प्रत्यास्तरणं गच्छेन्न चेदन्यैव प्रतिप्राप्तिरिति संस्था <sup>(२)</sup> । वासे देवमभिप्रेत्य गतो कालसम्पत्तौ तत्र याचित्वैतत् <sup>(३)</sup> । असम्पत्तौ चतुर्गुण उत्तरासंगे बहुतरजागरणेन <sup>(४)</sup> । नानहं(१)संघाटीनिक्षिप्तवसेपक्षाशानि (१) निक्षिपेत् <sup>(५)</sup> । न वृष्टौ <sup>(६)</sup> । न नद्यन्तरे तद्वे[ग]मन्तव्यस्य <sup>(७)</sup> । जानयोराशङ्कयाः <sup>(८)</sup> । भिक्षुकपकत्राटकत्वं सहितमावास्य वर्षतो देवस्य वर्षाशङ्किता वा जलान्तरितत्वं गन्तव्यस्थेत्यस्याभावेनादत्तसंघचिरनास्तीर्णकठिनः संघाटीं विना न क्वचिद् गच्छेत् <sup>(९)</sup> । अन्याधिष्ठानमुत्सृज्य प्रचीवरस्यानाप्त्यसंभवे प्रतिविधिः <sup>(१०)</sup> । दानमविप्रवाससंवृत्तेः संघाद्या गुरुकत्वे जीर्णं वाधिकयोः <sup>(११)</sup> । अधिष्ठितसालाध्वसंवृत्तेः कर्तव्यम् <sup>(१२)</sup> । सोपविचारात् तत्स्थानादन्यत्र स्थितस्यारुणोद्गतौ <sup>(१३)</sup> । कृतमर्यादे मर्यादास्थानपर्यन्तः <sup>(१४)</sup> । नैकत्वे परिगृहीतुरवान्तरमर्यादानां भेदत्वम् <sup>(१५)</sup> । अविभक्ततायां च धनतो दृष्टितश्च <sup>(१६)</sup> । शाखोपशाखानामसंसंगे पृथक् स्थानत्वं साधारण्यमूलस्य <sup>(१७)</sup> । मूलामूलादेश <sup>(१८)</sup> । संसक्तशाखाविटपट्टक्षाणामेकस्थानत्वम् <sup>(१९)</sup> । तलक इव तत्राद्योभागस्य प्रवेशः <sup>(२०)</sup> । नौ-शकटयोश्च <sup>(२१)</sup> । निर्मर्यादे व्याप्यङ्ग(म?)पर्यन्तः <sup>(२२)</sup> ।

उपविचारव्यामस्तामन्तकेन ॥१०॥ । कुड्यपरिक्षिप्ते ग्रामे यावत् पद्मवयुक्तेन  
 वंशशकटेन स्फुरणमध्वना वा कुकुटस्योत्पात्य निलयने वाटपरिक्षिप्तेऽजैडकरजा-  
 संप्रकृतिहीमत्पुरुषप्रविचारभूम्यध्वना वा ॥११॥ । परिखापरिक्षिप्ते द्वादशपदिकया  
 निःश्रयण्याः [ ] च्छोरितसंकारस्थूललोष्टाध्वनो वा ॥१२॥ । तत्स्थाने त्रिकरणीयपरि-  
 सर्पणातिना मन रजोभिश्च यावत्स्तद्गतस्य संभावनम् ॥१३॥ । निर्मयादिऽध्वन्य-  
 भिन्नगतेर्मनुष्यस्यैकान्नं (स्यैकोन?) पञ्चाशद् व्यामाः ॥१४॥ । न सीमान्तरं पृथक्त्वं  
 क्रोशान्तान्मध्यतः परस्य ॥१५॥ ।

॥ विप्रवासनैऋतिकां विभङ्गः ॥

(क) क्षुद्रकण्ठः ( १ )

न पाण्डितोपगतावधिष्ठानस्य ॥१६॥ । नारूढिनैऋतिकां ॥१७॥ । साधिके ॥१८॥ ।  
 भवत्यतो विप्रवासः ॥१९॥ । नान्याधिष्ठानादन्यस्थानत्वहानिः ॥२०॥ । नान्येदं  
 धर्मकयोः दृष्टितश्चेदनाक्षेपः ॥२१॥ । न साधारणैज्वार(द्वार)कोष्ठकस्य ॥२२॥ ।  
 न धनत इति पितृपुत्रयोः ॥२३॥ । विवर्जिताप्येतत् ॥२४॥ । सभोजनत्वे  
 च ॥२५॥ । नोपविचारत्वं ग्रामेऽस्याभवतो विहारस्य ॥२६॥ ।

॥ विप्रवासनैऋतिकाः ॥ २ ॥

( ३ ) मासिके ।

(क) विभङ्गतः ।

पूर्णवदसत्यां पूरकप्रत्याप्ता(सं?)शायां न्यूनं मासमसामन्तकात् ॥२७॥ । सत्त्वे  
 चाधिष्ठानिकस्य ॥२८॥ । अल्पत्राप्यत्रिंशद्द्राहा(श्रा)तिक्रान्ते ॥२९॥ । अपूरकत्व-  
 विजातीयस्य वर्णादितः ॥३०॥ । सर्ववर्णत्वं शौक्ये ॥३१॥ । तद्ग्रणाहादो  
 ए(?)प्रथितत्वं संपत्तौ तस्य ॥३२॥ । पुटद्वयमहतात् संघाटीपर्यन्तः ॥३३॥ ।  
 निपदनस्य च ॥३४॥ । एक उत्तरासंगान्तर्वासनो(नः) ॥३५॥ । द्विगुणमृतु-  
 हतात् ॥३६॥ । अनियम[ ] पांसुमयेषु ॥३७॥ । दद्याद्द्वय(?)हत्वे परिचितायां  
 वाधिकानि यावदर्थम् ॥३८॥ । अदेयत्वमधिकस्य ॥३९॥ । नैऋतिकां-  
 कृच्छ्रश्च ॥४०॥ । न न्याय्यमुत्पादयेदत्रैव परिकर्म कृत्वारोपयिष्य इत्यनुसम्पाद्य  
 चित्तम् ॥४१॥ । यथातथोत्पादितस्य प्राक्समाप्तोर्गान्निऋतिकां कृच्छ्रम् ॥४२॥ । खण्ड-  
 संघात्यां नव प्रभृत्या पञ्चविंशतेषु मवर्जम् ॥४३॥ । अतः(?)यं कन्या ॥४४॥ ।  
 प्रथम एषां त्रिकैः द्वितीयमण्डलकत्वम् ॥४५॥ । अर्धचतुर्थमण्डलकं द्वितीये ॥४६॥ ।  
 तृतीये पञ्चममण्डलकत्वम् ॥४७॥ । त्रिपञ्चकानि स्वहस्तैः ज्येष्ठान्याधिष्ठानि-  
 कानि ॥४८॥ । कनिष्ठान्युभयतोऽर्द्धहस्तमुत्सृज्य ॥४९॥ । अनन्तरं मध्यानां  
 प्रमाणम् ॥५०॥ । अन्तर्वासनो द्विपञ्चकमपि द्विचतुष्कञ्च ॥५१॥ । आत्रिमण्डल-

च्छादितत्वेऽपि <sup>(११०)</sup> । कायसप्तशब्दयं हस्तेऽर्थः <sup>(१११)</sup> । अकारयति कुसुलक-  
करणम् <sup>(११२)</sup> ।

॥ मासिकनैस्सर्गिकविभङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतः ।

दुष्कृतकृत्वं न्यूनवत्त्व(१२)न्तरे <sup>(११३)</sup> । अपत्याशत्वमच्छादनेऽर्द्धमण्ड-  
लस्य <sup>(११४)</sup> । अकल्पिके च <sup>(११५)</sup> । निरधिष्ठ[ ]नानाञ्च सुप्रयोचपरिथावप्रत्या-  
स्तरणचिलिमिलिकादीनां परिस्कारचीवराणाम् <sup>(११६)</sup> ।

॥ मासिकेपृच्छा ॥

॥ मासिकनैस्सर्गिकः ॥ ३ ॥

(४) धावने ।

(क) विभंगगतः ।

प्रतिगुप्तेरन्तर्वर्त्यास्थानम् <sup>(११७)</sup> । अनुपेक्षणमत्र भिक्षुणीभिः <sup>(११८)</sup> । पिण्ड-  
कस्यासौ दानम् <sup>(११९)</sup> । ज्ञातिरासप्तमाभ्यां पितृभ्यामन्यतरेणाप्येकपूर्वजः <sup>(१२०)</sup> ।  
संज्ञानस्य कर्तृत्वं प्राधान्येन अन्यदेतत् <sup>(१२१)</sup> । भिक्षुणीत्वतद्ज्ञातित्वयोः <sup>(१२२)</sup> ।  
उचरत्सिञ्च <sup>(१२३)</sup> । अधिष्ठितस्वपुराणधावनार्हचीवरनिपदानां कस्य निर्धावनरञ्ज-  
नाकोटनेषु विज्ञाप्त्या <sup>(१२४)</sup> । प्रदेशस्यापि कृतौ कर्मणः कृतत्वम् <sup>(१२५)</sup> । कृतत्वे  
कारितत्वम् <sup>(१२६)</sup> । आफलपर्यन्तादेकत्वम् <sup>(१२७)</sup> । पर्वभूतत्वे फलाना-  
मैक्यम् <sup>(१२८)</sup> । संज्ञानप्रधानतायां यथार्थे मौल्यम् <sup>(१२९)</sup> । उपमूलत्वमयथार्थत्वे  
संज्ञानाद् विमतिः <sup>(१३०)</sup> । साधिकं क्रियाकारमनुरक्षेत् <sup>(१३१)</sup> । अनिस्तरणमत्रा-  
गन्तुकत्वं सदसत्स्वरूपनिर्ज्ञानार्थमस्य तेन प्रश्नः <sup>(१३२)</sup> । अनतिनमय्य (?) <sup>(१३३)</sup> ।  
बुद्धोक्तः साधिकाद् विचालः <sup>(१३४)</sup> । गृहीयान्निःसृज्यमानमतरेकं पात्रचीवर-  
शिक्ष्यसरित्कायबन्धनं संघ उपनिक्षेपाय <sup>(१३५)</sup> । तथोपनिक्षेपः [ ] तस्य यथेष्टं  
तद्विकल्पैरादानम् <sup>(१३६)</sup> ।

॥ धावननैस्सर्गिके विभङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतम् ।

नोच्चारप्रस्तावस्यन्दनिकाकर्दमादिनासितधावनेऽस्त्यपहासः <sup>(१३७)</sup> । दुष्कृतं  
चिलिमिनिकागृहचोडोपधानकविकल्पितनिःसृष्टसाधिकानाम् <sup>(१३८)</sup> ।

॥ धावननैस्सर्गिकपृच्छा ॥

- ॥ [ शक्ति ] धावननैस्सर्गिकः ॥ ४ ॥

(५) प्रतिग्रहे ।

(क) विभंगगतः ।

प्रतिगृहीयाद् भिक्षुणी महार्हं वासः परिवर्हणाय कुर्याद् भिक्षुणा साद्वं  
परिवर्तकम् <sup>(१३९)</sup> । त्वत्येन तत्पृष्टकृता या प्रतिग्रहे <sup>(१४०)</sup> । विज्ञप्त्या चीर-

रस्य "७" । अनापत्तिः पटकप्रदाने संघाय सौभाषणिकस्य "७" । उपसंपाद्यमान-  
नमुपितयोः "७" । चित्रश्रद्धा[१]मुद्गाव्य पुरतः "७" । स्थापयित्वं[१] निरपेक्षणं  
प्रक्रमणे "७" ।

॥ प्रतिग्रहनेस्सर्गिकविभङ्गः ॥

(ख) पृच्छागतः ।

हस्तिभूतत्वं लब्धदाने "७" । दर्शनोपविचारगततास्यादिः प्रयोगत्वमसन्नि-  
हितप्रतिष्ठे "७" । वैशद्यमयाग्रासत्वं च पटकप्रदानादौ तत्रम् "७" । अनापत्ति-  
स्तावत् कालिकचित्तेन विस्मृत्य मूल्यादाने "७" ।

॥ प्रतिग्रहनेस्सर्गिकपृच्छा ॥

॥ [ इति ] प्रतिग्रहनेस्सर्गिकः ॥ ५ ॥

(६) याञ्जानैस्सर्गिकः ।

। भनुष्यगतिगतो गृहीभूतः प्राण्यज्ञातिरापत्तिकृत् "७" । उत्तरसिंश  
त्रये "७" । अनाच्छिन्ननष्टदग्धहोतुर्द्धचीवरस्य "७" । विज्ञाने दुष्कृतस्य "७" ।  
मौलस्य लब्धौ चीवरस्य "७" । अनूनस्य "७" । यद्विधस्यार्धवर्णसमतो  
विज्ञप्तिः "७" । अनापत्तिरन्यस्य "७" । न तुकदशिकपोथ विज्ञ[१]पने "७" ।  
न्यूनत्वमौतो(?)स्तानस्य च "७" । तद्वत् तत्प्रकृतिः "७" ।

॥ [ इति ] याञ्जानैस्सर्गिकः ॥ ६ ॥

(७) विज्ञापनार्हः ।

सर्वस्याभावेऽधिष्ठेयस्य विज्ञापनार्हत्वम् "७" । अस्यापत्यता "७" । परं गृहिणो  
द्वादशहस्तकः परकोत्तरमन्तरं सप्तद्विकशाकटः "७" । मिथोः ज्येष्ठे यथोक्तपुटे  
संघाटीनिवसने "७" । युग्मस्य विज्ञ[१]प्यत्वम् "७" । अन्यतरस्य "७" । अति-  
रिक्तस्यातः प्रमाणादविज्ञप्यत्वम् "७" । पूर्वकस्य च पूर्वलब्धौ उत्तरलब्धाव-  
धिकस्य देयत्वम् "७" । उत्तरलाभ अति(धि?)कस्य देयत्वम् "७" । विज्ञ-  
प्तावविज्ञप्तस्य दुष्कृतम् "७" । विज्ञप्तावविज्ञप्यस्य दुष्कृतम् "७" । लब्धौ  
मूलम् "७" । अदाने च देयस्य "७" ।

॥ [ इति ] विज्ञापनार्हनेस्सर्गिकः ॥ ७ ॥

(८) संकल्पितः ।

संकल्पितमप्रवारितस्य ज्ञातं तुल्यमसंकल्पितेन "७" । तदेवान्यत् "७" ।

॥ [ इति ] संकल्पितमार्गनेस्सर्गिकः ॥ ८ ॥

(९) मत्वेकः ।

। वैशद्य[मो]पि दातुः "७" । एकत्वं लब्धेः प्रयोगैक्ये "७" ।

॥ [ इति ] मत्वेकनेस्सर्गिकः ॥ ९ ॥

( १० ) प्रेषित ।

प्रेषितमकल्पिकं, चीवरमूल्यं प्रतिक्षिप्य परिप्रण्ण(१)पूर्वकमुपदिष्टं वैया-  
 पृ(२)त्यकरणमादिष्टं दूतेनोक्तौ वृत्तान्तत्वाख्यापूर्वकथोदयेत् <sup>(१०)</sup> । नाशक्त(१)-  
 वत्तायां संप्रधारणे चोदितत्वम् <sup>(११)</sup> । असम्पत्तौ द्वितीयमपि <sup>(१२)</sup> । तृती-  
 यञ्च <sup>(१३)</sup> । तत्र आद्यतृतीयमुद्देशे तिष्ठेत् <sup>(१४)</sup> । असम्पत्तौ दातारं थावयेत् <sup>(१५)</sup> ।  
 वृत्तायामेवं प्रतिनिःश्रि(३)ष्टौ त्रयच्छत उक्तप्रतिनिःसर्गादभ्युपेतत्वात् <sup>(१६)</sup> ।  
 चित्तग्रहणानुष्ठानात् प्रतिगृहीयात् <sup>(१७)</sup> । परंचोदनेन स्थानेऽभ्युपेते वा <sup>(१८)</sup> ।  
 गृहीतौ <sup>(१९)</sup> । मनुष्यद्वे(४)व्यस्य गृहीतत्वे च <sup>(२०)</sup> । अनुक्तौ दुष्कृतम् <sup>(२१)</sup> ।  
 अप्रतिक्षेपे <sup>(२२)</sup> । अपृष्टोपदेशे च <sup>(२३)</sup> । नैराश्ये चाश्रावणे <sup>(२४)</sup> ।

॥ [ इति ] प्रेषितने.सर्गिकः ॥ १० ॥

( ११ ) कौशेय ।

( क ) विभगगत ।

धारयेत् संस्तरम् <sup>(२५)</sup> । कृत्तिकारणयोः <sup>(२६)</sup> । को(कौ)शेयस्य <sup>(२७)</sup> । संस्ती-  
 र्णतादि संस्तरे <sup>(२८)</sup> । कृत्तिनिष्ठानस्य <sup>(२९)</sup> । अनापत्तिः कृतलामे भोगाभि-  
 संस्करणेषु <sup>(३०)</sup> ।

॥ [ इति ] कौशेयनै.सर्गिके विभगः ॥

( ख ) पृच्छगत ।

न्यूनत्वन्यूनमिश्रत्वे <sup>(३१)</sup> । विनष्टतायाश्च द्रव्यस्य <sup>(३२)</sup> ।

॥ [ इति ] कौशेयनै.सर्गिके पृच्छा ॥ ११ ॥

( १२ ) शुद्धकाले ।

शुद्धकालकैडकरोमाम् <sup>(३३)</sup> । जाल्या <sup>(३४)</sup> । तत्त्वं नीलकर्न(५)मककंच-  
 श(६)कानाम् <sup>(३५)</sup> ।

॥ [ इति ] शुद्धकालनै.सर्गिकः ॥ १२ ॥

( १३ ) द्विभाग ।

अतिरिक्तत्वेऽर्द्धस्य तेषाम् <sup>(३६)</sup> । समांशत्वमितरत्रावदातगोचरकानाम् <sup>(३७)</sup> ।  
 पार्श्वपृष्टग्रीवजं पूर्वम् <sup>(३८)</sup> । शिरपादोदरजमुचरम् <sup>(३९)</sup> ।

॥ [ इति ] द्विभागनैस्सर्गिकः ॥ १३ ॥

( १४ ) पदवर्ष ।

दैर्घ्यविस्तारयोरतिमात्रत्वे छेदनम् <sup>(४०)</sup> । वर्चनं ह्रस्वसंघुतत्वयोः <sup>(४१)</sup> । छेदे  
 संबन्धनम् <sup>(४२)</sup> । प्रतिवायो भेदे दैर्घ्यल्ययोः <sup>(४३)</sup> । दुष्प्रतिसंस्करणत्वे  
 दानम् <sup>(४४)</sup> । अलम्बसम्युत्तैः सत्यन्यत्र स्वकमत्यक्ते पानतिक्रान्ते <sup>(४५)</sup> ।

पद्द्वयसंगतौ कृततायां संस्तरस्य <sup>(१५)</sup> । सत्त्वचदारम्भे विप्रकृत्तम् <sup>(१६)</sup> । नान्त-  
गतौ प्रयोगस्यानापत्तिकृत्तम् <sup>(१७)</sup> । पृथक्त्वं प्रयजा(इज्या)न्तरस्य <sup>(१८)</sup> ।

॥ [ इति ] पद्द्वयसंगतैःसर्गिकः ॥ १४ ॥

( १५ ) वितस्ति ।

अदत्तपुराणनिपदनसुगतविद्(इति)स्तैर्नवनिपदनस्य परिभोगे <sup>(१९)</sup> । सच्चै-  
त्त् ( ? ) <sup>(२०)</sup> । एतावतापि <sup>(२१)</sup> । शक्यप्रतिसंस्कारेणापि <sup>(२२)</sup> । संदर्भसमुदा-  
गमने वा <sup>(२३)</sup> ।

॥ [ इति ] वितस्तिनैस्सर्गिकः ॥ १५ ॥

( १६ ) ऊर्णोडि ।

सति बोढ्यसति च योजनत्रयाद्ूर्ध्वमैडकोर्णवहने <sup>(२४)</sup> । क्रोशोऽध्वनि गते-  
रात्मा <sup>(२५)</sup> । प्रयोगस्याद्दं दुष्कृतमृद्धेरन्येन नभसा हरणे निर्मिते च <sup>(२६)</sup> ।  
निर्दोषं सोलापूलालेप्यकायप्लुञ्जकलोढकप्ररुचिकार्थं तन्मात्राणाम् <sup>(२७)</sup> ।  
परमाण्वण्वल्लोहशर[ ]विगोरातायनच्छिद्ररजोलिखयूक्यवाहुलीनां पट्टपूर्वमुत्त-  
रम् <sup>(२८)</sup> । पद्( ? ) चतुरङ्गुलो हस्तोऽर्धचतुर्थः हस्तकः पुरुषश्च चतुर्हस्तकं धनुस्तद्  
शतपञ्चकं क्रोशः <sup>(२९)</sup> । तदन्तादि चरण्यस्य न कायभारं वहेत् <sup>(३०)</sup> । न  
पार्श्वशृष्टकटिशिरोभिः <sup>(३१)</sup> । अनाशङ्कमसिन्नसाधारणत्वम् <sup>(३२)</sup> । नार्द्धमागा-  
दूर्ध्व( ? )मुत्पाटयेत् <sup>(३३)</sup> ।

॥ [ इति ] ऊर्णोडिनैस्सर्गिकः ॥ १६ ॥

( १७ ) ऊर्णपरिकर्म ।

पुराणचीवरस्य स्थाने एडकरोमाणि <sup>(३४)</sup> । विचटनमाकोटनस्य <sup>(३५)</sup> ।

॥ [ इति ] ऊर्णपरिकर्मनैस्सर्गिकः ॥ १७ ॥

( १८ ) जातरूपरजते ।

स्त्रीकृते रत्नस्य <sup>(३६)</sup> । शम्यतायां तत्पूरिः <sup>(३७)</sup> । स्वस्य चाकृतकल्पस्य <sup>(३८)</sup> ।  
स्पृष्टो( ? )स्पर्शेन च <sup>(३९)</sup> । यथाकथञ्चित् <sup>(४०)</sup> । पात्रिकतात्रस्य दुष्कृतम् <sup>(४१)</sup> ।  
अनापत्तिरन्यस्य <sup>(४२)</sup> । त्रपुसज्जशी( ? )सलोहानां भ्रामणेरयोश्च <sup>(४३)</sup> ।  
दानपतेः स्वामित्वाधिमोक्षो वैद्यप[ ]ष्ट( ? )त्यकरस्य स्वामित्वाधिमोक्षौ वैद्या-  
वृत्त्याकरस्य <sup>(४४)</sup> । स्वामित्वाभ्युपगमनमधिष्ठानमितिकल्पाः <sup>(४५)</sup> । नाविद्यमा-  
नघर्माथप्रत्यपादन्यत्र रुद्दि( ? )रुद्दिः <sup>(४६)</sup> । न दूरत्वे स्वामिनो ध्वस्तिः <sup>(४७)</sup> ।  
कल्पते कारणमात्मार्थं भोजनस्य <sup>(४८)</sup> । तत्करे चार्पणाय कार्पापणग्रहणम् <sup>(४९)</sup> ।  
पथ्यदनस्य चारना( ? )त् <sup>(५०)</sup> । उपस्थापयेदभ्यर्थि( ? )र्थां स्वर्यकान्तम् <sup>(५१)</sup> ।  
नैनमगुप्तः[ ] स्थापयेत् <sup>(५२)</sup> । नादत्तादायिनोऽर्प( ? )येत् <sup>(५३)</sup> । फलमुत्पाय[ ]-

सासौ दद्यात् <sup>(१०३)</sup> । उदकार्थि(१०३) चन्द्रकान्तम् <sup>(१०३)</sup> । समानः पालन-  
विधिः <sup>(१०३)</sup> । अनन्तः कृतत्वमुपस्कारानुज्ञाने रत्नस्वीक[र]रस्य <sup>(१०३)</sup> । न रीति  
(रि?)ताम्रकंसदारुपात्रं स्वीकुर्यात् <sup>(१०३)</sup> । स्वीकृतस्यास्यान्यस्य वा परिभोगश्चेद्  
भैषज्यशरावकपरिभोगेण <sup>(१०३)</sup> । द्वयमधिष्ठानिकमायसं मृन्म(१०३)यश्च <sup>(१०३)</sup> ।  
मणिमुक्त[र]िवैदूर्यशंखशिलाप्रवालरजतजातरूपअ[र]स्म(१०३)गर्ममुसारगह्वलोहि-  
तिकादक्षिणावर्तप्रभृति रत्नम् <sup>(१०३)</sup> । न्यूनत्वमयाचिके <sup>(१०३)</sup> । अनन्तरेऽपि <sup>(१०३)</sup> ।  
छिन्नभिन्नखण्डदग्धाप्रचरितपूर्वानाहतिलक्षणप्रतिरूपकमेतत् <sup>(१०३)</sup> ।

॥ [ इति ] जातरूपरजतने.सर्गिकः ॥ १८ ॥

( १९ ) रूपिक० ।

लाभेऽस्यो(?)रापत्तिः <sup>(१०३)</sup> । गृही[तृ?]त्वेऽपरस्याज्ञातित्वे मौली <sup>(१०३)</sup> । उत्पत्तौ  
बृद्धेः <sup>(१०३)</sup> । अनन्तरे च <sup>(१०३)</sup> । पणेन रत्नेन वा व्यवहारात् <sup>(१०३)</sup> । एकत्वं  
प्रयोगे <sup>(१०३)</sup> । प्रयुञ्जीत रत्नार्थम् <sup>(१०३)</sup> । आरामिकोपासकयोः सत्त्वे नियोगेत् <sup>(१०३)</sup> ।  
बन्धकं द्विगुणमादाय साक्षिसम्बत्सरमासदिवससंघस्थविरो(?)वारिकं ग्रहीतृधन-  
लाभानारोप्य पत्रे <sup>(१०३)</sup> । ज्ञातवानेतदि[ति] तस्यै प्रवेदयेत् <sup>(१०३)</sup> ।

॥ [ इति ] रूपिकव्यवहारनै.सर्गिकः ॥ १९ ॥

( २० ) क्रयविक्रय० ।

अन्येन दद्यात् साधिकं संघभक्त्योपक्रीणते धान्यं मूल्येन <sup>(१०३)</sup> । तस्यैव चेत्  
सविशेषम् <sup>(१०३)</sup> । क्रीणीयात् क्षये संघः <sup>(१०३)</sup> । नवश्च <sup>(१०३)</sup> । पुराणं चिक्रीय  
निष्प्राणकं चेत् <sup>(१०३)</sup> । न मूल्यं कुर्यात् <sup>(१०३)</sup> । न गृहिव्यवहारेषु हस्तं  
प्रक्षिपेत् <sup>(१०३)</sup> । गृहिणा क्रायणम् <sup>(१०३)</sup> । असम्पत्तावात्रयाद्वा निश्चारणम् <sup>(१०३)</sup> ।  
अरुणं परार्थेऽप्युत्सृज्य रत्नत्रयं पणापणेः <sup>(१०३)</sup> । न बन्धकं कुर्यात् <sup>(१०३)</sup> ।  
संघेन तदर्थं संघकर्मिकेणोधि(?)स्य दानम् <sup>(१०३)</sup> । नाष्ट्वा बृद्धां(?)द्वान्)  
संधार्थमुद्यच्छेत् <sup>(१०३)</sup> । यत्राभिलिखितता सम्पत्तिमस्थानुतिष्ठेत् <sup>(१०३)</sup> ।

॥ [ इति ] क्रयविक्रयने.सर्गिकः ॥ २० ॥

( २१ ) पात्रधारण० ।

पात्रस्याधिष्ठितस्य <sup>(१०३)</sup> । निस्सृष्टत्वं प्रव्रज्यापेक्षार्थतायां नियमने <sup>(१०३)</sup> ।  
अकल्पिकत्वं पाण्डुशुक्लाधिकानां न्यूनता श्यामस्य <sup>(१०३)</sup> । निर्दोषत्वं कुपात्र-  
कस्यैरस्य <sup>(१०३)</sup> ।

॥ [ इति ] पात्रधारणनै.सर्गिकः ॥ २१ ॥

( २२ ) पात्रपरिशिष्ट० ।

नाधि(?)लोभं कुर्यात् परिस्कारेऽत्यध्यावसानं न पात्रादस्तथा(?)न्येत् <sup>(१०३)</sup> ।

याचेत्(१३) पात्रमप्यभावे <sup>(१३)</sup> । सत्त्वेऽस्य <sup>(१३)</sup> । आचतुर्वन्धनं तदर्हा <sup>(१३)</sup> ।  
 क्षमस्य परिभोगे <sup>(१३)</sup> । परीष्टौ विज्ञप्त्या गृहितो ज्ञातेः <sup>(१३)</sup> । उत्तरत्राप्येतद्  
 द्वये <sup>(१३)</sup> । वास्तुदानान्येषु <sup>(१३)</sup> । अदीपमज्ञाता च शुद्धिपात्रयोः ज्ञातेः <sup>(१३)</sup> ।  
 दुष्कृतं मौलम् <sup>(१३)</sup> । ततो निषधौ(?) <sup>(१३)</sup> । सम्मतावसत्त्वेऽपहासः <sup>(१३)</sup> । स्वपरि-  
 स्कारैः सत्त्वे चैषाम् <sup>(१३)</sup> । परिवर्त्त[ने] श्रेष्ठच्छन्देन <sup>(१३)</sup> । संघेऽस्य निःसर्गः <sup>(१३)</sup> ।  
 एकस्यानेकत्वेऽभिप्रेततमस्य <sup>(१३)</sup> । योज्यत्वमन्यस्य <sup>(१३)</sup> । इदं प्रवाज्या(?)के <sup>(१३)</sup> ।  
 प्रत्यनस्थासौ दानम् <sup>(१३)</sup> । चारणेन निष्कर्षः <sup>(१३)</sup> । सम्मतेन <sup>(१३)</sup> । श्रौऽस्य  
 करिष्यत्तायां तेनारोचनम् <sup>(१३)</sup> । संघे सामप्रिवेलायां श्रौऽहमायुस(?)न्त  
 उन्नतं पात्रं चारयिष्यामि युस्मा(?)न्मा)भिः स्वस्वक्रानि पात्राणि गृहीत्वा संघ-  
 मध्येऽनतरितव्यमिति <sup>(१३)</sup> । सन्निसाधा(?) पाता)र्थमनुष्ठानम् <sup>(१३)</sup> । रोचनोपसंक्र-  
 ममुपनामनम् <sup>(१३)</sup> । स्वविर इदं पात्रं स्वच्छं परिमण्डलं परिभोगक्षमं स चेदा-  
 कांक्षसि गृहाणोति यथा गुणं रुच्या ग्रहणं अयाचनं गृहीतस्यान्तरितेन <sup>(१३)</sup> ।  
 अदानत्वयोर्वाचोर्णोत्तरस्यामत्याज्यतानाधिष्ठानिक्रुद्योरपच्यस्य प्रवेदनम् <sup>(१३)</sup> ।  
 उपयोजनमस्याभेदान्मन्दमन्दम् <sup>(१३)</sup> । उभाभ्यामनेन संव्यवहरणम् <sup>(१३)</sup> । अत्र  
 साधुतरस्य विनिर्युक्तिरूपकरस्य <sup>(१३)</sup> । लघुतरेऽस्य प्रमासे <sup>(१३)</sup> । नैव भोजन-  
 करणत्वे <sup>(१३)</sup> ।

॥ [ इति ] पात्रपरिशिष्टैःसर्गिकः ॥

( २३ ) वायन० ।

विना मूल्येन विज्ञप्त्यान्येनापि धायने <sup>(१३)</sup> । न पात्यतायामतत्कृतत्वम् <sup>(१३)</sup> ।

॥ [ इति ] धायननैःसर्गिकः ॥ २३ ॥

( २४ ) उप्यमानवर्द्धन० ।

ततौ(?) त) औद्देशिकत्वं पानीयस्य <sup>(१३)</sup> । भूयस्तायां वा दुर्नियोगतः सौष्ठवे  
 वा <sup>(१३)</sup> । क्षयश्चेदातुः <sup>(१३)</sup> । अदानं विनिश्चयस्य <sup>(१३)</sup> । अनभ्यनुज्ञातैः[ ]  
 तदर्थत्वं दात्रेति कर्तृणि <sup>(१३)</sup> । मौलस्य सम्पत्तौ <sup>(१३)</sup> । प्राग्पतित[त]र्द्देशे-  
 शिक्राउष्ठानं दुष्कृतस्य <sup>(१३)</sup> । तत्रमप्रारितस्योपसंक्रान्तेः <sup>(१३)</sup> ।

॥ [ इति ] उप्यमानवर्द्धननैःसर्गिकः ॥ २४ ॥

( २५ ) आच्छेद० ।

भिधुत्वं वियोज्यस्य <sup>(१३)</sup> । अस्वकृच्चमाच्छेद्यस्य <sup>(१३)</sup> । चीरत्वं  
 तस्य <sup>(१३)</sup> । समस्तयोर्व्यस्तयोर्वा कायवाचोराच्छेदार्थं प्रवृत्तितस्य <sup>(१३)</sup> ।  
 तन्नियुक्तस्य चेति कर्तृणि <sup>(१३)</sup> । अन्त्यस्य समाप्तौ पृथग्भासस्य कायतः <sup>(१३)</sup> ।  
 प्रयोगे दुष्कृतस्य <sup>(१३)</sup> । प्रतिदेयत्वमस्य <sup>(१३)</sup> । अनङ्गमत्र स्वार्थत्वम् <sup>(१३)</sup> ।



निष्कर्षवदनुपसम्पन्ने <sup>(१००)</sup> । स्वतापना(?) यनभूतस्यात्रावरोध आच्छेद्यस्य <sup>(१०१)</sup> ।  
असम्भतिकृतस्यानुच्छवित्वम् <sup>(१०२)</sup> । अनर्थाहितकृत् प्रवृत्तिविघ्ननार्थेनापत्तिः <sup>(१०३)</sup> ।

॥ [ इति ] आच्छेदनैःसर्गिकः ॥ २५ ॥

( २६ ) पद्मात्र० ।

स्वस्थानवत् समयतायामारण्यकस्यैकत्र चीवरे क्रमः <sup>(१०४)</sup> । विप्रवसेदतो-  
ऽसावन्तर्गृहगतादर्थवशेनापष्टमह्वः <sup>(१०५)</sup> । अप्रसन्नविधिरूढम् <sup>(१०६)</sup> । अदोपोऽन्तरा-  
यवशेनागतौ <sup>(१०७)</sup> । अनङ्गमत्रातिवाह्यत्वे पद्मात्रस्य प्रक्रान्तौ संकल्पः <sup>(१०८)</sup> ।

॥ [ इति ] पद्मात्रविप्रवासनैःसर्गिकः ॥ २६ ॥

( २७ ) वर्षाशाटी० ।

स्योपगमाहपूर्वमासादिप्रभृति वर्षाशात्रीं(?) परीच्छेत् <sup>(१०९)</sup> । आस्वर्षोर्ध्वा-  
र्द्धमासान्तं धारयेत् <sup>(११०)</sup> । पूर्वपरयौरतः कालयोः कर्तृत्वम् <sup>(१११)</sup> । धारणे परस्य  
पूर्वस्य परीष्टौ दुष्कृतस्य <sup>(११२)</sup> । अन्त्यस्य संपत्तौ <sup>(११३)</sup> । न्यूनत्वं विलीने <sup>(११४)</sup> ।  
यथोपगति तदनुगम् <sup>(११५)</sup> ।

॥ [ इति ] वर्षाशाटीनैःसर्गिकः ॥ २७ ॥

( २८ ) आत्ययिक० ।

वार्षिकलाभस्य कर्तृत्वम् <sup>(११६)</sup> । अन्तर्वर्षं स्वीकृतौ <sup>(११७)</sup> । उत्सृज्यान्त्येऽत्य-  
यवशाद् दशाहे लभ्यमानस्य <sup>(११८)</sup> । विभक्तौ चास्यापि <sup>(११९)</sup> । अविभक्तौ  
च <sup>(१२०)</sup> । अन्तरेण दातृन्क्तिवशता <sup>(१२१)</sup> । अनन्तरे प्रवारणादिवशाद् ह्यसम्भत-  
तद्गोपकानाम् <sup>(१२२)</sup> । नैनं न स्म(सं) मन्येरन् <sup>(१२३)</sup> ।

॥ [ इति ] आत्ययिकनैःसर्गिकः ॥ २८ ॥

( २९ ) परिणामन० ।

पुद्गलेऽन्यत्र संघे वा संकल्पितस्यान्येन चीवरस्य जानतात्मनि परिणामतो  
लब्धौ <sup>(१२४)</sup> । परिणामने दुष्कृतम् <sup>(१२५)</sup> । अन्यत्र चात्र <sup>(१२६)</sup> । तत्फले च <sup>(१२७)</sup> ।  
अन्यस्य च <sup>(१२८)</sup> । असत्प्रसंख्यातत्वे वियोज्ययोज्ययोः <sup>(१२९)</sup> । एकप्रदेशत्वे  
च <sup>(१३०)</sup> । अनापचिरलाभे पर्येषविधसखादकतिर्यगादेः <sup>(१३१)</sup> । कल्पते या  
(? यद्)च्छपात्प्रतिनिध्यन्तरे सुगतस्य दानम् <sup>(१३२)</sup> । दुष्कृतं संकल्प्यादाने <sup>(१३३)</sup> ।  
गृहिः सीमां गत्वा सांघिकान्धिष्ठाने <sup>(१३४)</sup> । च्यत्रैर्भाजने <sup>(१३५)</sup> । अनधिष्ठापाम् <sup>(१३६)</sup> ।  
एकस्य द्वयोः त्रयाणां वा संघादा भवतो लाभस्यादाने <sup>(१३७)</sup> । अनया योत्रान्येषां  
मंशिकृतस्य <sup>(१३८)</sup> । हारत्वं स्तेयचित्तेन <sup>(१३९)</sup> । न सहसैव निरावासताकरणं  
विहारस्य <sup>(१४०)</sup> । सानुनयस्य तत्रावलोक(?)दाने <sup>(१४१)</sup> । अनुपनतौ 'दशवर्षाण्यति-  
नमनः' <sup>(१४२)</sup> । पञ्चपिण्डपातेन <sup>(१४३)</sup> । अनुद्भूतावत्र काले दानपतेरपराणि सामन्त-

। ' ? भद्र इतिअनेण्यं सङ्ख्याङ्क. ९०२ स्थाने, ९०३ सुदृगण्यं गतः । पाठकैः सकोष्य पठनीयम् ।

कविहारेण सार्द्धम् <sup>(११)</sup> । हिदुक्पो(१)पथैकलाभतायाः करणं कर्मकरणात् <sup>(१२)</sup> । सामन्तकविहारेषु प्रमीलने वस्तुनां निशेषः <sup>(१३)</sup> । आवासिते दानम् <sup>(१४)</sup> । न स्थानान्तरीयं द्रव्यं स्थानान्तरे दद्युः <sup>(१५)</sup> । दास्यत्वमेपामप्रतिलम्भने <sup>(१६)</sup> । दानत्वेऽपि गृहपतेर्नियतेरभङ्गः <sup>(१७)</sup> । बलाददाने ग्रहणम् <sup>(१८)</sup> । दद्युर्याचितकत्वेन <sup>(१९)</sup> । स्थानान्तरीयं द्रव्यं स्थानान्तरे <sup>(२०)</sup> । निर्दोषमसम्पत्तौ चैत्यान्तरे तल्लामस्य परिणमनमुत्सृज्य बोधिधर्मचक्रमहाप्रातिहार्यदेवावतरणानामेभ्योऽन्यत्र <sup>(२१)</sup> ।

॥ [ इति ] परिणामनैःसर्गिकः ॥ २९ ॥

( ३० ) साप्ताहिक० ।

व्यतीतं दिवसमधिष्ठितस्य साप्ताहिकस्य भिक्षुं श्रा(१)येत् <sup>(१)</sup> । मुक्त्यर्थं धारणे <sup>(२)</sup> । अस्य <sup>(३)</sup> । अष्टमारुणोद्गतौ <sup>(४)</sup> । अत्यये ऽह्ने कल्पिकस्याभ्यवहार्यस्य भुक्तिवादित्यत्र व्यवस्था <sup>(५)</sup> । यस्मात्त्रार्थे कल्पनं तं प्रत्यनापत्तिः कल्पितेनास्याभङ्गयोः सन्निहितम् <sup>(६)</sup> ।

॥ [ इति ] साप्ताहिकनैःसर्गिकः ॥ ३० ॥

॥ समाप्तश्च नैस्तर्गिकः ॥

## § ४, प्रायश्चित्तिकम् ।

( १ ) मृपावादे० ।

संज्ञाय संघसन्निधावधर्मस्य धर्मतो धर्मस्य चाधर्मतः परिदीपनं स्थूलात्ययः <sup>(१)</sup> । कश्चित् स्या [अ]त्र परिशुद्धा इत्यावृतीयपरिप्रक्षा(श्रा)त् पोपधे शुद्धसंज्ञस्य तूष्णीम्भावेनातिनामनाया दुष्कृतम् <sup>(२)</sup> । आभ्यां पाराजिकसंघावशेषाभ्यां चान्यस्मिन् मृपावादे <sup>(३)</sup> । भापमान्(१ण)त्वेऽपि संज्ञालामेऽस्योत्थानम् <sup>(४)</sup> । न शपथं कुर्वीत <sup>(५)</sup> ।

॥ [ इति ] मृपावादप्रायश्चित्तिकम् ॥ १ ॥

( २ ) वैशुन्य० ।

भिक्षोः <sup>(१)</sup> । अनन्तरे च <sup>(२)</sup> । ऊनतोद्भावनच्छन्देन <sup>(३)</sup> । श्लक्ष्णेन परुषेण वा <sup>(४)</sup> । यस्य कस्यचिदच(व?)राभिमतस्योक्तौ <sup>(५)</sup> । अजातेऽपि मद्भुत्वे <sup>(६)</sup> । अन्यस्य क्षत्रियताब्राह्मण्यादेः दुष्कृतम् <sup>(७)</sup> । अनुवादः <sup>(८)</sup> । वैशुन्यच्छन्देनामुकोक्तमित्युक्तौ <sup>(९)</sup> । नाम्ना चेत् <sup>(१०)</sup> । भिक्षुता चास्य दुष्कृतमन्यथा <sup>(११)</sup> ।

॥ [ इति ] वैशुन्यम् ॥ २ ॥

( ३ ) खोटने० ।

न हित(१)तायां सम्यक् संयेन <sup>(१)</sup> । भिक्षोश्चाधिकरणतायां खोटने <sup>(२)</sup> ।

नैवासिककर्मकृच्छन्ददायकानामेव मौलस्य <sup>(१५)</sup> । दुष्कृतस्यैव दृष्ट्याविष्कर्ता-  
गन्तुकयोः <sup>(१६)</sup> । तद्वत्त्वमधिकरणान्तरत्वेनाधिकरणस्य संज्ञाने <sup>(१७)</sup> । अर्द्धत्वं  
कर्मफलगतस्यात्तच्चैव समुदाचारे <sup>(१८)</sup> ।

॥ [ इति ] पोटनम् ॥ ३ ॥

(४) देशना० ।

देशनायाम् <sup>(१९)</sup> । धर्मस्य <sup>(२०)</sup> । पद्यात् पदादूर्ध्वम् <sup>(२१)</sup> । जानत ऊर्ध्व(र्ध्व)-  
तायाम् <sup>(२२)</sup> । पञ्चमात् पञ्चपदिकोपक्रमे <sup>(२३)</sup> । न पण्डितकृतोचरोत्तरपरि-  
प्रण(श्च)निर्ण(र्ण)ये परिवर्तनीकास्वाध्यायनिकापरिपृच्छनिकोपवासदानदक्षि-  
णादेशनेषु <sup>(२४)</sup> । अकृतत्वं स्थानान्तरे पूर्वस्थाः <sup>(२५)</sup> ।

॥ [ इति ] देशना ॥ ४ ॥

(५) वाचना० ।

सममनुपसम्पन्नेन हीनं वा नेत्रीभूतस्योच्चारणे धर्मस्वाक्षरस्यापि <sup>(२६)</sup> ।  
उत्सृज्याकामसम्पत्तिम् <sup>(२७)</sup> । अनुशास्य पाठनम् <sup>(२८)</sup> । स्वाध्यायनिकां परिवर्त-  
निकां परिपृच्छनिकां च <sup>(२९)</sup> ।

॥ [ इति ] वाचना ॥ ५ ॥

(६) कुरुदूपणम्० ।

संमन्येरन् पापयोर्भिक्षुभिक्षुण्योः कुलप्रतिसंवेदकम् <sup>(३०)</sup> । शृण्वन्त्वायुष्मन्तो  
(इन्तः) कुलेषु कुलदूषका आश्रमेष्वाश्रमदूषकास्तद्यथा सम्पन्ने शालिक्षेत्रेऽग्नि-  
र्विचक्रा निपतेद् यावदेव तस्यैव शालेरुत्सादाय विनाशायानयेन व्यसनाय संपन्ने  
या इक्षुक्षेत्रे मञ्जिष्टिका नाम रोगजातिर्निय(िप)ते[द्] यावदेव तस्यैवेक्षोरुत्सादाय  
विनाशायानयेन व्यसनाय मा यूयमायुष्मन्तोऽनेन भिक्षुना(िणा)नया भिक्षुण्या  
शासनं प्रमिश्रित एष भिक्षुरेपा च भिक्षुणी दग्धेव धाना अपरोहणधर्मा  
असिन् धर्मविनये भगवन्तं पश्यत स्वविरस्यविरांश्च भिक्षून् श्रि(िइ)ति कुलेषु  
कुलप्रतिसंवेदको ब्रूयात् <sup>(३१)</sup> । अनुत्सहमाने ज्ञप्तिं कुर्युः <sup>(३२)</sup> ।

॥ [ इति ] कुलदूपणम् ॥ ६ ॥

(७) दुष्टहारोचने० ।

अप्रतिसंविहितानुपसंपन्नत्वयोः श्रोतुः <sup>(३३)</sup> । आख्यातो(ि ती) पाराजिकसंघा-  
पशेषयोः <sup>(३४)</sup> । अकृतसम्पत्तेः <sup>(३५)</sup> । अवाप्ते संघे <sup>(३६)</sup> ।

॥ [ इति ] दुष्टहारोचनं ॥ ७ ॥

(८) उत्तरमनुष्यधर्मारोचने० ।

सत्यतायाम् <sup>(३७)</sup> । अदृष्टमत्येऽनुपमम्पदि <sup>(३८)</sup> । नागारिकपुरस्ताद् ऋद्धि  
विदर्शयेत् <sup>(३९)</sup> । न भिक्षुणी यास्तुः <sup>(४०)</sup> ।

॥ [ इति ] उत्तरमनुष्यधर्मारोचनम् ॥ ८ ॥

( ९ ) अत्रादे० ।

स्यैरेण चेदथो ज्ञप्तिपूर्वकमर्थं कुर्युः <sup>(१८)</sup> । दत्तमहस्य <sup>(१९)</sup> । पुद्गलमिक्षुसंघा-  
भक्तलामस्य मिथ्यापरिणामकत्वेन मिक्षोरन्यत्राप्यनाम्ना चोक्ता <sup>(२०)</sup> ।  
अभूतार्थतायाम् <sup>(२१)</sup> ।

॥ [ इति ] अथवाद्प्रायश्चित्तिकम् ॥ ९ ॥

( १० ) वितण्डना० ।

विनयप्रतिसंयुक्तभाषमाना(?)वध्यानभूतायामुक्ता <sup>(२२)</sup> । ' सूत्रान्तस्य  
दुष्कृतम् <sup>(२३)</sup> ।

॥ [ इति ] वितण्डना ॥ १० ॥

( ११ ) अनुपरतावच्छेदने० ।

छेदयेन्नवकर्मिको बृद्धं स्तूपसंचार्थम् <sup>(२४)</sup> । प्राक् ततः सप्ताष्टेषु दिवसेष्व-  
ततस्य मण्डलकगन्धपुष्पदीपधूपत्रलिदानत्रिदण्डकं भाषणदक्षिणदेशनां कृत्वा  
या देवताऽसिन् वृक्षेऽधुपिता साऽन्यद् भवनं समन्वेपत्वनेन वृक्षेण स्तूपस्य  
संघसेतिकरणीयं भविष्यतीत्युक्ता जानीहि वादेन <sup>(२५)</sup> । विकारश्चेदग्निमोक्ष-  
रुधिरस्यन्दनशाखाकम्पनपत्रशटनादिरुद्ध(दि)श्येत पक्षेऽत्र दानमात्सर्ययोः  
संवर्णनविवर्णनं कुर्यात् <sup>(२६)</sup> ।

॥ [ इति ] अनुपरतावच्छेदनम् ॥ ११ ॥

( १२ ) वीजप्ररोहनाशने० ।

अविनष्टतायाम् <sup>(२७)</sup> । अकृतकल्पवीजप्रोद्भेदयोः <sup>(२८)</sup> । ओशीरकादौ  
विनाशने <sup>(२९)</sup> । यथाकथञ्चिद् <sup>(३०)</sup> । धूननेनापि <sup>(३१)</sup> । अवष्टम्भेनापि तृण-  
शादपांसुप्रभृतिभिः <sup>(३२)</sup> । उत्सर्गादिनापि <sup>(३३)</sup> । वातातपेऽपि स्थापनेन <sup>(३४)</sup> ।  
शुष्केऽपि स्थण्डिले <sup>(३५)</sup> । तच्छन्देन स्वयमन्येन वा <sup>(३६)</sup> । विनष्टो मूलीनां  
विनष्टापरिमाणानाम् <sup>(३७)</sup> । गण्डतः <sup>(३८)</sup> । दुष्कृतानां प्रयोगे <sup>(३९)</sup> । प्रतिप्रहारमस्वात्र  
भेदो न वस्तुतः <sup>(४०)</sup> । अन्तत्वं विरो(रू)ढत्वेऽपि निर्मुक्तेः <sup>(४१)</sup> । तत्रमुद्या(द्वा)रे  
जलाच्छेयालकटमयोः <sup>(४२)</sup> । अधःसंपुटितास्त्रिनिगिलनं कारस्य <sup>(४३)</sup> । साधु  
स्वाद्यद्ययं छिद्येतेत्युक्तेर्निमुक्तिः <sup>(४४)</sup> । अकारत्वमृद्धेः <sup>(४५)</sup> । तद्वत्त्वं  
वीजान्तरत्वेन वीजस्य संज्ञाने <sup>(४६)</sup> । त्वक्फल्युपाण्डुपत्रपुष्पितपुष्पपक्कफलानाम-  
द्धेयतया व्यवहारः <sup>(४७)</sup> । नानपेतसैषां प्रकृतेर्मूलभूतस्य <sup>(४८)</sup> । अर्द्धजात-  
तयोस्तस्यासंजातमूलस्य वीजधान[योः] <sup>(४९)</sup> । क्षुप्यपर्यच्छत्रककाचिकागाल-  
चीवरादिपुष्पाणामर्द्धप्रोद्भूतत्वेन <sup>(५०)</sup> । तत्संप्रदादिकोरणचक्रमणशाखाद्यारुर्ष-  
पमण्डलकामा ज्ञानतदभिप्रायतायामनापत्तिः <sup>(५१)</sup> । छेदने च कुशादेरापद्यव-  
वधेन तेनासम्भवे मोक्षः <sup>(५२)</sup> । अतश्चैकेनानेकत्वे <sup>(५३)</sup> । नावीजधर्मणो

दो[प?]कृत्वम् <sup>१०</sup> । संस्पर्शोऽग्निना क्षतिः शस्त्रनखशूत्रैर्मलान्युत्पाटन उत्(१३)दल-  
नभिदुच्छित्तिरिति कल्पाः <sup>१०</sup> । नाधीजत्वगते कल्पनेऽपेक्षत्वम् <sup>१०</sup> । नानघित्व-  
मत्र वाष्पस्य <sup>१०</sup> । सम्यक्त्वसंख्यामग्निना कल्पने फलानां कल्पने समुदाय-  
रूपस्य तन्त्रीकरणम् <sup>१०</sup> । नैकतः प्रदेशात् समुदायस्य सम्भावनोत्थानम् <sup>१०</sup> ।  
कृतत्वं कल्पानां भिक्षुकृत्यता <sup>१०</sup> । भूमो(मौ) चाकल्पिकायाम् <sup>१०</sup> । नान-  
भुक्षितं शीतेन वारिणा साप्ताहिकं यावज्जीवकमभ्यवहरेत् <sup>१०</sup> । नाभिन्न-  
मेतेन यामिकम् <sup>१०</sup> ।

॥ [ इति ] वीजप्ररोहनाशनम् ॥ १२ ॥

(१३) क्षेपणे ।

द्वादशानां पुद्गलानां कर्तृत्वम् <sup>१०</sup> । असम्मतानामपि <sup>१०</sup> । प्रतिस्वध-  
प्रयोगानां च <sup>१०</sup> । अवधाने वा स्वगतेनार्थेन सश्रुतं क्षेपे वा परव्यपदे-  
शेन <sup>१०</sup> । मौलस्य गणिते <sup>१०</sup> । अन्यत्र दुष्कृतस्य <sup>१०</sup> । नासमर्थमल्पस्या-  
प्यधिवासनायामीरयेत् <sup>१०</sup> । न स्वयमेनं द्वेष्यः कर्मणि युञ्जीत <sup>१०</sup> ।

॥ [ इति ] क्षेपणम् ॥ १३ ॥

(१४) आज्ञाविहेठने ।

न न गणयेयुश्चोदनगताज्ञा तूर्ण्यभावाविहेठकोक्तपुद्गलसमु(म्बु)खावधायक-  
परव्यपदेशक्षेपकान् <sup>१०</sup> । ज्ञापनेन <sup>१०</sup> । भिक्षवाज्ञाविहेठने <sup>१०</sup> । तच्छ-  
न्देन <sup>१०</sup> । अन्योक्त्या दुष्कृतं तूर्ण्यम्भावेन <sup>१०</sup> । न स्मरामीति च <sup>१०</sup> ।  
न चेद् दुःखमाख्येयम् <sup>१०</sup> । तस्माद् वध्यदर्शनपरिग्रहे वितप तावत् पानीयं  
तावत् पिव विश्राम्य तावन्न पश्यामि न खं वा परमार्थतः सत्त्वं न पश्यामि  
वध्यश्चेत्युक्तावनापत्तिः <sup>१०</sup> । न यत्र साक्षित्वेन करणमापतेत् तत्रावस्थानं  
भजेत् <sup>१०</sup> । नाकृतोवघातद्वारबन्धः साक्षेपं दद्यात् <sup>१०</sup> ।

॥ [ इति ] आज्ञाविहेठनम् ॥ १४ ॥

(१५) शयनासने ।

मञ्चपीठशिकोच्चकविम्बोपधानचतुरस्रकमिति शय्यासनम् <sup>१०</sup> । एकात्र  
(१कोन)पञ्चाशद् व्यामास्तदुपविचारः <sup>१०</sup> । द्वारकोष्ठकाद् परिवृते <sup>१०</sup> ।  
वदतिक्रमाय विस्मृत्यापि ग्रथानमन्तथ स्वप्नसमापत्यादिना विपरोक्षीभावः <sup>१०</sup> ।  
भारु संभेदात् प्रयोगः <sup>१०</sup> । संभेदेऽतिक्रमश्च निष्ठानम् <sup>१०</sup> । नैते कृतकारितो  
(१णो)द्वारस्य <sup>१०</sup> । नावलोकितभिर्भौ न संकटप्राप्तस्य <sup>१०</sup> । कारकवद् भोगः <sup>१०</sup> ।  
द्वयोरेकत्र निपादे पश्चादुत्थापिनः करणीयवत्ता <sup>१०</sup> । समं चेन्नयकस्य <sup>१०</sup> ।  
हृत्पतापामुभयोः <sup>१०</sup> । अलाजिमान्तरजीर्णग्लानानुपसंपन्नानामनवलोच्यत्व-

मत्र <sup>(१०)</sup> । एष विहारः पश्य चेदं शयनासनं गृहाण चापावरणीदानमित्यव-  
 लोकनानि <sup>(११)</sup> । संभेदाह्नयो वातेन परिवर्त्तनं वृष्ट्या पुटान्तरप्राप्तिः [ ] दीपि-  
 काभिश्च <sup>(१२)</sup> । शयनासनत्वं सांघिकता तस्य स्वयंनिपुक्तकृततपोपनिशेषस्याम्य-  
 धकाश इति कर्तृणि <sup>(१३)</sup> । मौलस्य निष्ठाने <sup>(१४)</sup> । प्रयोगे दुष्कृतस्य <sup>(१५)</sup> । एतत्  
 तावत्कालमन्तरमन्येनाधिष्ठिते <sup>(१६)</sup> । पाद्गलिके च <sup>(१७)</sup> । उत्तरत्र च  
 चतुष्के <sup>(१८)</sup> । नैवास्पृश्यतायाम् <sup>(१९)</sup> । पिण्डाय चेत् प्रविप(भ?)ज्याप्रविष्टे  
 वातवर्षमागच्छेद् विहारस्थाः प्रवेशयेयुः <sup>(२०)</sup> । आहृत्य प्रविष्टं आगच्छेत् <sup>(२१)</sup> ।  
 नैतदर्थतायामदोषो हासो वा <sup>(२२)</sup> । विस्मृत्य चेद् बहुसमतिक्रान्ताध्वनो गतो  
 वा स्मृतिं लभेत न भूय एवं करिष्यामीति चिचमुत्पादयेद् वाचं च  
 भाषेत <sup>(२३)</sup> । प्रतिपथितञ्चेद् भिक्षुमारागवे(?)दुधारायैनं प्रार्थयेत् <sup>(२४)</sup> ।  
 कर्तृत्वं प्राप्ततायामत्र येन प्रतिज्ञातं प्रक्रमिपन्नावसादसंकटप्राप्तोऽभिसंक्षिपेत्  
 शयनासनम् <sup>(२५)</sup> । अस्फोट्य मलिनञ्चेत् <sup>(२६)</sup> । अर्पयेतैनम् <sup>(२७)</sup> । अवलोकनमन्य  
 एव कुर्वीत भिक्षोः <sup>(२८)</sup> । अभावे श्रामणेरस्य <sup>(२९)</sup> । तस्यापि गृहपतेः <sup>(३०)</sup> । सर्वाभावे  
 चतुर्दिशं व्यवलोक्यपापावरणीं गोपयित्वा प्रक्रामेत <sup>(३१)</sup> । अन्तरमार्गे चेद् भिक्षुं  
 पश्येत् तं प्रदेशमसौ धूयात् <sup>(३२)</sup> । द्वारे चेदन्तर्गृहोपनिमन्त्रणायां वध(वन्धः)  
 आगच्छेत् कुच्यस्य मूले वृक्षस्य वा निघायाध्वनि प्रविशेत् <sup>(३३)</sup> । दद्युस्तत्रा-  
 सनानि <sup>(३४)</sup> । न स्वयमानयेयुः <sup>(३५)</sup> । आगारिकः श्रामणेरानामेतत् <sup>(३६)</sup> ।  
 अभावे चावलोक्य गृहिणमानयनार्थमागमनम् <sup>(३७)</sup> । स्थापयेयुः गच्छन्  
 (तः) वयमानेष्याम इति ब्रुवत्सु <sup>(३८)</sup> । निः[ ]श्रयकरणीयैस्तैरनानीतावानयने <sup>(३९)</sup> ।  
 अभावे स्वयम् <sup>(४०)</sup> । सर्वतायां गण्डिमाकोद्य <sup>(४१)</sup> । दद्युर्विहारे <sup>(४२)</sup> । निमन्त्रण-  
 क्रेभ्यः स्वार्थं याञ्च [ ] यामासनानि <sup>(४३)</sup> । भिक्षुधे(?)पामारक्षायै स्थाप-  
 येयुः <sup>(४४)</sup> । एकान्तेऽसौ तिष्ठेत् स्वर्गं कुर्वन्नधानदानञ्च <sup>(४५)</sup> । प्रक्रान्तेषु  
 प्रवेशनम् <sup>(४६)</sup> । शौचनं नाशितानां वक्सेनाद्भिः <sup>(४७)</sup> । खेहिनोपस्नानेन <sup>(४८)</sup> ।  
 अशुचिमा सृष्टोपाहुकेन पोमयेन च <sup>(४९)</sup> । छित्तिरशुद्धं वातस्य <sup>(५०)</sup> । गृहिणा  
 निपाद्य प्रवेशितस्य दृष्टः प्रवेशयत्वम् <sup>(५१)</sup> । जीर्णञ्चेद् ग्लानो वीपधिवारिकस्य <sup>(५२)</sup> ।  
 आख्येयत्वं तस्य <sup>(५३)</sup> । ग्लानमवलोकयेत् सर्वः <sup>(५४)</sup> । निपद्य <sup>(५५)</sup> । न तत्रासनं  
 गृहीत्वा गच्छेत् <sup>(५६)</sup> । उपस्थापको ग्लानस्य तत्रासनान्युपस्थापयेत् <sup>(५७)</sup> । कुशल-  
 पक्षापगच्छत्याचार्योपाध्याये न चेदन्यथा वृद्धिः कुशलपक्षस्य पृष्ठतो गच्छेत् <sup>(५८)</sup> ।  
 स्वयमस्नायासनं नयेत् <sup>(५९)</sup> । नापृष्ठा गतिम् <sup>(६०)</sup> । स्वयमेव चैतदानयेत् <sup>(६१)</sup> ।  
 अभ्यवकाशधर्मश्रवणे वातवर्षप्रवेशनं शयनासनस्य <sup>(६२)</sup> । स्वयमंशक्तो गुरुतया  
 वृद्धानां नवकैः सह परिवृत्तिः <sup>(६३)</sup> । पाकेन साद्धं स्थापयेयुः <sup>(६४)</sup> । दद्युर्वि-  
 हारान्तरे याच्यमानं शयनासनं वस्त्रञ्च <sup>(६५)</sup> । न चेद् वृष्टिर्विपाशङ्किता वा <sup>(६६)</sup> ।

वातवर्षश्चेदन्तमार्गं स्याद् वृक्षस्य मूले कुड्यस्य वा स्थलं कुर्युः ॥ १७ ॥ प्रच्छादयेयुश्च  
 वस्त्रैर्णकेन प्रत्यक्षरेण ॥ १८ ॥ विहारं नीत्वा बह्मणां शोषणम् ॥ १९ ॥ दग्धाबुद्धौ  
 च सांघिकस्यापि निष्कासनम् ॥ २० ॥ वृत्ते स्वपात्रचीवरनिष्कासने ॥ २१ ॥ निष्का-  
 सितस्य भिक्षुमारक्षायै स्थापयेयुरसमर्थतरम् ॥ २२ ॥ नासाह्यतायां प्रविशेयुः ॥ २३ ॥

॥ [ इति ] शयनासनप्रायश्चित्तिकम् ॥ १५ ॥

( १६ ) संस्तरे ।

कृतं संस्तरमन्तर्गृहे छोरयेयुरवलोक्य गृहपतिम् ॥ २४ ॥ अरणे विकोप-  
 येयुर्वा ॥ २५ ॥ कृतत्वमस्य शिरोन्ते पादान्ते वा कृतत्वे ॥ २६ ॥ चीवरशोषना(णा)यापि  
 वृणप्रज्ञप्तेभ्योऽर्थताम् ॥ २७ ॥ दानं मृगयते प्रतिज्ञातच्छोरणाय ॥ २८ ॥ प्रज्ञापथे-  
 युचं(श्चं?)क्रमेषु घृष्टोत्तलयोस्तृणानि ॥ २९ ॥ तेषामपि छोर्यताम् ॥ ३० ॥ उत्तरे  
 छोर्यस्य छोरणमगतस्याकरणीयताम् ॥ ३१ ॥ अन्यदा कालेन कालं प्रत्यवेक्षणं  
 परिवर्त्तनञ्च ॥ ३२ ॥ स्निग्धमधुरमृत्तिक[म?]न्वहम् ॥ ३३ ॥ अनुपक्षमन्यत्र ॥ ३४ ॥  
 अवयध्य रज्ज्वा वृक्षेऽवलम्ब्य चक्रमेषु कक्षपिण्डकानां स्थापनम् ॥ ३५ ॥ कर्परे  
 गोमयं स्थापयेत् ॥ ३६ ॥ प्राग् गतं प्राक् प्रक्रमिष्यन्त्यस्मात् तुल्यत्वं साह्योप-  
 भोगे ॥ ३७ ॥ तत्पतीनाञ्चासांघिकेऽवलोक्यत्वम् ॥ ३८ ॥ सांघिकविहारत्वमगडवालु-  
 कालि(सि?)कताद्यात्मकत्वं तत्र शूचा(?)दिनवयोग्यत्वं भूमे[ः] स्वयंनियुक्तकृत-  
 संस्तरस्योत्कर्त्तृणि ॥ ३९ ॥

॥ [ इति ] संस्तरप्रायश्चित्तिकम् ॥ १६ ॥

( १७ ) विहारे ।

भिक्षुत्वसांघिकविहारत(त्वं?)योः कर्त्तव्यम् ॥ ४० ॥ न चेत् तत्संवाधसंधसंधो-  
 भजन्मानुपशमप्रतिचिकि(की?)र्षणे ॥ ४१ ॥ परेणापि परानुवृत्त्या च ॥ ४२ ॥ शिक्ष-  
 माणश्रामणेरश्रामणेरिकाणां दुष्कृतस्य ॥ ४३ ॥ आसां च ॥ ४४ ॥ हासेन च ॥ ४५ ॥  
 गृहिणामपुण्यस्य बहूनः ॥ ४६ ॥ निष्कर्षणम् ॥ ४७ ॥ शूत् आरूढतायाम् ॥ ४८ ॥ भिक्षुणा  
 सांघिकविहारस्थानस्य ॥ ४९ ॥ अनुप्रस्कन्ध मुक्त्वा ग्लान्यभयवशतामारूढौ ॥ ५० ॥  
 निदर्शनमेतद् विहेठनच्छन्देन भिक्षोर्विहेठनानाम् ॥ ५१ ॥ अनुप्रस्कन्द्यापातः ॥ ५२ ॥  
 सांघिकविहारोपरिष्ठतलकृतं कर्त्तुं ॥ ५३ ॥ न चेत् परिणामिकत्वं फलकतद्विध-  
 ष्ठदन्ता वा ॥ ५४ ॥ कीलपादकृतं चाक्रमणीयस्य ॥ ५५ ॥ मुञ्चोचानताम् ॥ ५६ ॥  
 दक्षप्रतिपादकतरञ्च ॥ ५७ ॥ आक्रान्तौ ॥ ५८ ॥ शूता । आहार्यपादकारोहः ॥ ५९ ॥  
 श्वपरिमोगार्थं ततोऽन्यत्र ॥ ६० ॥ सप्राणकोपमोगः ॥ ६१ ॥ द्वारकोश(ष्ठ?)दानं संपा-  
 दयेत् ॥ ६२ ॥ अर्गडकानाञ्च ॥ ६३ ॥ वातायनानां मौक्षम् ॥ ६४ ॥ विहारस्य कर्त्तव्यम् ॥ ६५ ॥  
 चतुष्टयस्यैर्पापयानां मात्रस्य ॥ ६६ ॥ न चेत् सर्वत्वेन शैलः पक्ष्मलो दारुमयो  
 वा ॥ ६७ ॥ छादनश्लोदकत्राणेन ॥ ६८ ॥ कृतं पश्यामि निश्चितं चेत्पुनक्तस्य दान-

पतिना <sup>११३</sup> । त्रयादूर्ध्वमिष्टकार्यायदानसंपादने <sup>११४</sup> । परेणापि <sup>११५</sup> ।  
तद्दिने <sup>११६</sup> । 'अन्यत्रापि निष्कर्दमात्' <sup>११७</sup> । अमुक्तत्वे चोदकध्रमाणाम् <sup>११८</sup> ।  
अदत्तत्वे चारागतमूलपादस्य <sup>११९</sup> । औपरिष्टस्य वा द्वारकोश(ष्ठ)स्य <sup>१२०</sup> ।  
निर्दोषमाद्यात् पूर्वः <sup>१२१</sup> ।

॥ [इति] विहारप्रायश्चित्तिकम् ॥ श्र ॥ १७ ॥

(१८) असम्मताववादे ।

अपराजितं सूत्रविनयमाठकाधरमनूनविंशतिवर्षं नागरलपितमुपनामितकायत्वे  
भिक्षुण्याः कृतप्रतिक्रियां भिक्षुण्यववादकं संमन्वेरन् <sup>१२२</sup> । पोषधे पञ्चदशाना-  
मन्तः[ः]सीम्नि <sup>१२३</sup> । अभावे ब्रह्मादिधरस्य प्रवृत्तप्रतिमोक्षम् <sup>१२४</sup> । तस्यापि  
पाराजयिकसंप्रकाशनम् <sup>१२५</sup> । गुरुधर्माणां वा <sup>१२६</sup> । पश्चिमकः कचिद् वो  
भगिन्यः <sup>१२७</sup> । समग्रे भिक्षुणीसंघः परिशुद्धसमवेतोऽनवद्यो मा वः कश्चिदसंततः  
संघेन पुद्गलोऽववदते संघाद् आगच्छति पुद्गलोऽववादको न वः कश्चिदुत्सहते  
भिक्षुरववदितुं संघाद् वोऽववादानुशासनी अग्रमादेन भगिन्यः सम्पादये-  
तेत्यस्य <sup>१२८</sup> । मुत्तोत्तरधर्मप्रभावचन्तम् <sup>१२९</sup> । एकेनापि विनातस्त(नाऽस्त?)म्म-  
तस्य च भिक्षुण्यववादेन पूर्वं सम्मतस्यासम्मत्त्वम् <sup>१३०</sup> । निर्दोषमपूरो(?)  
संघस्यार्हस्य याज्ञायाम् <sup>१३१</sup> । तस्याञ्च <sup>१३२</sup> ।

॥ [इति] असम्मताववादे ॥ श्र ॥ १८ ॥

(१९) अस्तमिताववादे ।

अस्तमितायाम् <sup>१३३</sup> । मुत्तवा सर्वरात्रिकं धर्मश्रवणं भिक्षुण्यववादे <sup>१३४</sup> । न  
वेदपाठतद्धारस्तदा तद्भूतस्याग्रतो विहारस्य वर्षकः <sup>१३५</sup> ।

॥ [इति] अस्तमिताववादे ॥ श्र ॥ १९ ॥

(२०) आमिपकिञ्चित्काववादे ।

कुर्याद् वैशारद्याय धर्मपरिपृच्छायां भिक्षु[ः] भिक्षुण्यामिपोपसंहारम् <sup>१३६</sup> ।  
अञ्चुञ्चकपरट्टिकिलोठकमुरुचिकानाञ्च <sup>१३७</sup> । गृहीतादौ भिक्षुः <sup>१३८</sup> । भिक्षोर-  
तथाभूतस्यामिपकिञ्चित्कहेतोर्भिक्षुणीरववदतीति विवादे <sup>१३९</sup> ।

॥ [इति] आमिपकिञ्चित्काववादे ॥ श्र ॥ २० ॥

(२१) चीवरकरणम् ।

अज्ञातिकतायां भिक्षुण्याः <sup>१४०</sup> । स्युतौ चीवरस्य <sup>१४१</sup> ।

॥ [इति] चीवरकरणम् ॥ श्र ॥ २१ ॥

(२२) चीवरप्रदाने ।

दत्तौ <sup>१४२</sup> । अपटकप्रदाने <sup>१४३</sup> । न चेत् मुपितायै सौभाग्यिकस्योपसंपद्य-  
मानायै परिवर्चकेन वा <sup>१४४</sup> ।

॥ [इति] चीवरप्रदानम् ॥ श्र ॥ २२ ॥



( २३ ) भिक्षुणीकजलयानोढौ ।

[स]भिक्षुणीकजलयानोढौ वाहयेयुः पाथेयम् <sup>(१)</sup> । कल्पकारकल्पकारी-श्राम-  
णेश्रामणेरिभिः <sup>(२)</sup> । न्याय्यमितरेतरपाथेयग्रहणं भिक्षु-भिक्षुणीनाम् <sup>(३)</sup> ।  
अन्योऽन्यप्रतिग्राहणञ्च <sup>(४)</sup> । न ग्लानम् <sup>(५)</sup> । सत्रह्यचारिणोऽध्वनि छोरयेयुः <sup>(६)</sup> ।  
वहेयुरेनम् <sup>(७)</sup> । एवं भिक्षुष्यः <sup>(८)</sup> । कुर्युरत्र परस्परं साहाय्यम् <sup>(९)</sup> । शिरोन्त-  
ग्रहणेन <sup>(१०)</sup> । ग्रामप्राप्तानामदोषं प्रक्रमणम् <sup>(११)</sup> । सद्युदानीय ग्लानभैषज्यपिण्ड-  
पातञ्च <sup>(१२)</sup> । एकं च सरूपमुपस्थापकं स्थापयित्वा <sup>(१३)</sup> । मुत्तवौ (भुक्तौ)  
सभयतायां मार्गस्यैकसार्थपालमभिन्नप्रयाणतायामेकभिक्षुष्यापि सङ्गातिवा-  
हने <sup>(१४)</sup> । प्रतिकोशम् <sup>(१५)</sup> । प्रतितदद्वं (दृष्टं ?) दुष्कृतम् <sup>(१६)</sup> । सभिक्षुणीकाध्वो-  
रूढि (?) <sup>(१७)</sup> । सान्तरायतायामुभयकूलस्योऽनृज्या ( त्या ? ) सन्निधौ युगपदेक-  
नाथा तिर्यक्पारसंतरणादन्यत्र <sup>(१८)</sup> । बद्धवटवर्त्तपरिहृतिकर्णयष्टिदण्डवंशावमद्ग-  
कर्णधारवशाच्च तदर्थारूढौ प्रस्थानान्तरात् <sup>(१९)</sup> ।

॥ [ इति ] भिक्षुणीकजलयानोढिः ॥ २३ ॥

( २४ ) एकस्थाने ।

स्यैकाकितारहस्त्वमप्रवृत्तजनप्रचारतया प्रदेशस्य <sup>(१)</sup> । साधारणत्वमन्त-  
र्यामिता वेति कर्तृणि <sup>(२)</sup> । निपदने <sup>(३)</sup> । आनिपादप्रतिष्ठापनमेतत् <sup>(४)</sup> ।  
एकनिपथा <sup>(५)</sup> । भिक्षुष्यास्थाने <sup>(६)</sup> ।

॥ [ इति ] एकस्थानम् ॥ इति ॥ २४ ॥

( २५ ) पाचितोपभोगे ।

भिक्षुणीपरिपाचितायाम् <sup>(१)</sup> । अभूतैर्गुणैः <sup>(२)</sup> । अकृतनिमन्त्रणके <sup>(३)</sup> ।  
कृते चातिरिक्तस्य <sup>(४)</sup> । अभ्यवहार्यस्य <sup>(५)</sup> । प्रतिपत्तिसंपत्त्या <sup>(६)</sup> । तच्छृतेन  
या <sup>(७)</sup> । अस्यवहारे कण्ठेन तदेपः <sup>(८)</sup> । हासकृत्वं परार्थस्य <sup>(९)</sup> । देहि  
चोक्ते पिण्डाय प्रविष्टे <sup>(१०)</sup> ।

॥ [ इति ] पाचितोपभोगः ॥ २५ ॥

( २६ ) परंपरामोजने ।

अधिवासयेद् भक्तोपनिमन्त्रणमन्तर्गृहेऽपि <sup>(१)</sup> । कालं ज्ञात्वा प्रविशेयुः न  
सोत्र ( यं ? ) कालम् <sup>(२)</sup> । गण्ठीं दत्त्वा <sup>(३)</sup> । स्वर्षदं तत्रावलोकयेद् <sup>(४)</sup> ।  
आगन्तुकं स्वविरः <sup>(५)</sup> । न सहस्र (सा ?) भक्तच्छेदं कुर्यात् <sup>(६)</sup> । तिष्ठेयु-  
र्याचमानाः पानकाय <sup>(७)</sup> । समं पथाद् धानुपेतपीररलामद्वितीयनिमन्त्रण-  
लघ्विः <sup>(८)</sup> । मोजनीयेन <sup>(९)</sup> । अन्तर्गतेन पत्रके <sup>(१०)</sup> । अनेनैव चेदन्यत् <sup>(११)</sup> ।  
अग्लानस्याकृतकर्मणोऽनृदसाध्वनि <sup>(१२)</sup> । अधिवासनायां दुष्कृतस्य <sup>(१३)</sup> । अस्य-  
वहारे मौलस्य <sup>(१४)</sup> । सममामन्तरान् पर्षन्तभृत् पीररम् <sup>(१५)</sup> । अध्यार्दयो-

जनम् <sup>(१०)</sup> । अन्यत्रापि <sup>(११)</sup> । अत्र वा नौगमने वा <sup>(१२)</sup> । संमार्जनं किलिञ्च-  
मात्रस्योपलेपो गोपिटकमात्रस्येति कर्म <sup>(१३)</sup> । सांघिकता स्तौपिकत्वे चास्य <sup>(१४)</sup> ।  
अशक्तिर्लान्यस्य परिमाणम् <sup>(१५)</sup> । अनियन्त्रणकत्वं प्रज्ञेः <sup>(१६)</sup> । संदर्शनस्य  
च <sup>(१७)</sup> । असत्त्वं विहेटनकृतस्य <sup>(१८)</sup> । सांघिकस्य चाह (?) दंद्देशिकस्य निक्षेपे  
चान्यत्र पञ्चके <sup>(१९)</sup> । धर्मत्वमस्य <sup>(२०)</sup> । ग्रहणेऽप्यन्यस्य स्वीकरणं दुःभिक्षो  
यावत् संपत्तिनिमन्त्रणकानाम् <sup>(२१)</sup> । भुक्तिश्च <sup>(२२)</sup> । दानं वा <sup>(२३)</sup> । अनभिहृचि-  
संभावने दातुर्द्वित्रिप्रासासम्भवहारादूर्ध्वं गृहपते[ऽ]पं भिक्षुः पिण्डकेन विहन्यते  
सुमोदसासै ददामीत्यभिरोच्य <sup>(२४)</sup> ।

॥ [ इति ] परंपर[र]भोजनम् ॥ २६ ॥

( २७ ) आवसथपरिभोगे ।

अनेदंघर्मकः सगृहस्वामिको( कः ? ) सर्वपापण्डिक आवसथः <sup>(१)</sup> । अग्ला-  
नस्वाप्रचारितस्य दानपतिना <sup>(२)</sup> । भुक्तवत्स्तदीयमभ्यवहारं मौलस्य <sup>(३)</sup> ।  
उपितवतो वासे दुष्कृतस्य <sup>(४)</sup> । अस्वामिकश्च <sup>(५)</sup> । तीर्थ्यवत्त्रमत्रैदं प्रव-  
ज्य(ब्राह्म)स्य <sup>(६)</sup> । ज्ञातेश्च <sup>(७)</sup> ।

॥ [ इति ] आवसथपरिभोगः ॥ २७ ॥

( २८ ) अतिरिक्तग्रहणे ।

प्रवारयतः <sup>(१)</sup> । अपरिमितम् <sup>(२)</sup> । अकृतयथासुखस्य <sup>(३)</sup> । गृहिणः <sup>(४)</sup> ।  
अर्घपञ्चमानां पकृतण्डुलमागधकप्रस्थपरिमाणानां प्रस्थानामुत्सृज्य व्यञ्चन-  
मूर्ध्वं सहापि सहायप्रत्यंशेन पिण्डपातः <sup>(५)</sup> । अभ्यवहृतायुत्कृष्ट[ः] <sup>(६)</sup> ।  
अत्र दुष्कृतस्य <sup>(७)</sup> । परकृते च <sup>(८)</sup> । अन्यथानापत्तिः <sup>(९)</sup> । असंस्कृ(स्कृ?)तस्य  
च <sup>(१०)</sup> । ग्राह्यात् प्रभूतं चेद् भिक्षुं संविभजेत <sup>(११)</sup> ।

॥ [ इति ] द्वित्रिपात्रपूयतिरिक्तग्रहणम् ॥ २८ ॥

( २९ ) निरिक्तकरणे ।

भुञ्जीत यावदाप्तम् <sup>(१)</sup> । नोत्तिष्ठेद् विप्रकृतामिपः <sup>(२)</sup> । याव[त]स्तावतो  
यस्य कस्यचिदालवणमभ्यवहार्यस्यादाने तद्विधत्वम् <sup>(३)</sup> । स्थानोत्सर्गः प्रवा-  
रणम् <sup>(४)</sup> । निषण्णस्य <sup>(५)</sup> । विप्रकृतमूलखादनीयाद्यामिपस्य <sup>(६)</sup> । मूलगण्डपत्र-  
पुष्पफलखादनीयेभ्योऽन्यपै(पै?)याच्च कल्पिकमसंसृष्टमकल्पिकेनाभ्यवहार्यमभि-  
संभावनीयप्रदेशस्य प्रतिग्राहयतो निवाणं(?) कृत्वा <sup>(७)</sup> । देहीत्यस्यैतत् <sup>(८)</sup> ।  
गच्छेत्यपि <sup>(९)</sup> । भुक्तमिति च <sup>(१०)</sup> । न च तावत् शब्दोपसन्धाने <sup>(११)</sup> ।  
पर्याप्तमित्यपि <sup>(१२)</sup> । स्थानस्य कलाचिक्रया ऊर्ध्वमसंपादकत्वे यवाग्वाः  
पेयत्वम् <sup>(१३)</sup> । तर्पणस्याप्रज्ञायमानपञ्चाहुलस्य <sup>(१४)</sup> । अप्रतिग्राहणत्वं विहेट-  
नस्य <sup>(१५)</sup> । न चहिःसीमानभिसंभावनीयप्रदेशानप्रवस्ये निरिक्तकरण-

स्रोत्थानम् <sup>(१०)</sup> । नापाभिस्यं करणीये <sup>(११)</sup> । अकरणीयत्वमकल्पिकस्य संसृष्टस्य  
 वा तेन <sup>(१२)</sup> । अनुत्सृष्टस्य स्थानस्य कर्तृत्वम् <sup>(१३)</sup> । कृतवतोऽपि संकल्पमभो-  
 जने <sup>(१४)</sup> । याचितस्य <sup>(१५)</sup> । गच्छ तवैव भवत्विति वचनं करणम् <sup>(१६)</sup> । यथासुखं  
 परिभुङ्क्ष्वेत्येके <sup>(१७)</sup> । द्विद्यानभ्यवहृत्यालोपम् <sup>(१८)</sup> । न निर्वृतक्रियः परिभुञ्जीत <sup>(१९)</sup> ।  
 भुञ्जीतान्यस्य कृतनिरिक्तम् <sup>(२०)</sup> ।

[ इति निरिक्तकरणम् ] ॥ श्रु ॥ २९ ॥

( ३० ) एकासनभोजने ।

प्रवारितत्वाकृतनिरिक्तत्ययोः <sup>(२१)</sup> । अभ्यवहृतौ <sup>(२२)</sup> । आमिषमात्रस्य <sup>(२३)</sup> ।

॥ [ इति ] एकासनभोजनम् ॥ श्रु ॥ ३० ॥

( ३१ ) प्रवारितनियोगे ।

नियोगे[ऽ]स्य भिक्षोः <sup>(२४)</sup> ।

॥ [ इति ] प्रवारितनियोगः ॥ श्रु ॥ ३१ ॥

( ३२ ) गणभोजने ।

प्रतिनियतभक्तावासकेभ्योरन्वैरन्तःसीमस्यैर्मिभूमिः संघभूतैरसहभक्तता-  
 याम् <sup>(२५)</sup> । सहितस्य <sup>(२६)</sup> । सहभोक्तृतया <sup>(२७)</sup> । त्रयादिना <sup>(२८)</sup> । भिक्षूणां यद्वि-  
 धस्याचीवरद्वितीयभक्तलब्धेरनुदस्य च नाया <sup>(२९)</sup> । महासमाजादन्यत्र <sup>(३०)</sup> ।  
 अन्यास्थानिदं लिङ्गप्रव्रजितभक्तात् <sup>(३१)</sup> । अभ्यवहारे स्थितव्यागन्तव्यत्तानाम-  
 न्तःसीमास्थानामपि पृच्छागतत्वम् <sup>(३२)</sup> । भुक्तिरर्द्धातिक्रमः <sup>(३३)</sup> । संचारणे स्तोत्र-  
 खापि <sup>(३४)</sup> । यस्य कस्यचिदेकभक्तत्वम् <sup>(३५)</sup> । न गमिकागन्तुकम्लानतदुपस्थाय-  
 कोषधिवारिकादन्यो यवनोपन्वाहारादभुक्तवायां सर्वैरुत्कृष्टं भुञ्जीत <sup>(३६)</sup> ।

॥ [ इति ] गणभोजनम् ॥ ३२ ॥

( ३३ ) अकारुभोजने ।

स्वमध्याह्नपर्यन्तारुणोदत्यन्तरमकालः <sup>(३७)</sup> । तत्त्वे <sup>(३८)</sup> । श्रु । सादनीय-  
 भोजनीयामभ्यवहारे <sup>(३९)</sup> ।

॥ [ इति ] अकारुभोजनम् ॥ ३३ ॥

( ३४ ) सन्निहितवर्जने ।

पूर्वनके प्रतिशृहीतं पश्चाद् भक्ते तत्र यामातिक्रान्तमिति सन्निहितम् <sup>(४०)</sup> ।  
 नोदृहीतं गिलेत् <sup>(४१)</sup> । न पक्कमु(दंभ्यु)पितं चान्तःसीसि <sup>(४२)</sup> । मिश्रपक्कम् <sup>(४३)</sup> ।  
 सोऽत्र पाको य आमस्य <sup>(४४)</sup> । तद्यमसृद्नां प्राक् त्रिभागात् स्त्रिभत्वात् <sup>(४५)</sup> ।  
 पर्णपरिश्वचेर्मृद्नाम् <sup>(४६)</sup> । द्रवाणां द्वितीयमुत्थितत्वात् <sup>(४७)</sup> । नार्पिना (सर्पिणाऽ)  
 कल्पकरणं पाकः <sup>(४८)</sup> । न जन्मायत्तनिर्मितत्वं वाससानुपितवचम् <sup>(४९)</sup> । प्रदेशस्यत-

यापि पात्रस्य तद्भूमिपकता ॥१॥ । न पक्तुस्तद्भूतत्वेन ॥१॥ । नाग्नेरपात्रत्वम् ॥१॥ ।  
न ततो निष्कृष्टनिर्गतपोस्तत्रम् ॥१॥ । वासत्वमुपविचारस्य ॥१॥ । ध्यामम् ॥१॥ ।  
ऊर्ध्वञ्च नियतसंभाव्यस्य ॥१॥ । अभ्यन्तरस्य च ॥१॥ । तत्रं पुरान्तरस्योपरि-  
ष्टस्य ॥१॥ । नान्याधिष्ठितत्वेऽन्यवाप्तत्वम् ॥१॥ । न यावज्जीविकानामुद्गृहीतान्तः-  
पक्षभिक्षुपक्षेपु तत्प्रतिपेधे संशितत्वं कालं प्रति ॥१॥ । अर्धामिपं परिशुद्धे ॥१॥ ।  
पानादयो मलसासे ॥१॥ । बहिरस्य गोमयेन मृदा वा परिशुष्टोदकेन सम्मार्गो  
निर्मादनम् ॥१॥ । अन्तद्विश्रोदकगण्डूपछोरणम् ॥१॥ । निर्मादितत्वमाशयतो  
द्वित्रयधिकं दाने विखनतोऽपि पात्रस्य ॥१॥ । निर्दोषं विरलने ॥१॥ । निष्परिगोधे  
च संस्पृशे ॥१॥ । प्रक्षालितस्य च त्रिरूपगोमयमृत्तिकान्यतरेणास्निग्धतायाम् ॥१॥ ।  
अपनेयत्वमुत्थितस्य ॥१॥ । तस्यैव प्रदेशपरिगोधे प्रक्षाल्यत्वम् ॥१॥ । निःस्नेह-  
तापै स्निग्धस्य च घटादेर्गम्भीर उदके हृदे निधानम् ॥१॥ । आमत्स्यकच्छप-  
मण्डूकशिशुमारबुल्लुकैर्निर्लेहाधारणम् ॥१॥ । दारुतोऽपि निःस्नेहतापत्तिः ॥१॥ ।  
निर्मादने निःस्नेहितस्योपादुकेन गोमयेन वा शुद्धत्वम् ॥१॥ । अर्धत्वं लवण-  
धारकलुपोदकभूतस्य लवणादेः ॥१॥ । कल्पमानता च सर्वस्याकाले ॥१॥ ।  
असत्त्वमकरणे लवणधारयोः स्वकार्यस्य ॥१॥ । उत्पत्तौ प्रतिविम्बस्योत्तरस्य ॥१॥ ।  
कटकफलेनाम्भसः स्वाच्छयो(च्छयो?)पगमनम् ॥१॥ । क्षारेण सक्तुपिण्ड्या ॥१॥ ।  
स्नेहनमविशरणायासाः ॥१॥ । नाप्रज्ञायमानस्य सत्संख्यत्वमाकरेष्वनुप्रवि-  
ष्टस्य ॥१॥ । प्रदेशव्यवकरे तस्यैवापनेयत्वम् ॥१॥ । चञ्चुना काकेन स्पृष्टतायां  
सामन्तकस्य ॥१॥ । न तत्संयुक्तभारास्पृष्टौ न तस्य स्पृष्टता ॥१॥ । न भ्रान्त्या स्पृति-  
प्रमोपेण वा ॥१॥ । नाम्यां च्यावितस्य स्थापने ॥१॥ । स्वल्पतरमन्तरं स्थानमुप-  
नयेत् ॥१॥ । न वैतरिके नोद्गृहीतत्वं प्रतिग्राहित[ ] वा ॥१॥ । नानयेत् प्रतिग्राह-  
णाहिसम्बन्धस्य ग्रहणम् ॥१॥ । सम्बद्धत्वं तेनान्तररज्वादिसंबद्धतायाम् ॥१॥ । एकत्वं  
सन्निहितप्रतिगृहीतेषु तुल्ययोः[ ] संवरेणाभिन्नदृष्टोः ॥१॥ । परेण चावरस्य ॥१॥ ।  
गृह्णित् स्त्री-पुंसोः परस्परम् ॥१॥ । श्रामणोरिय स्पृष्टवा(?)गोपनात् तद्द्वेष-  
कारी ॥१॥ । न सापेक्षेण दत्तस्योत्स्पृष्टत्वम् ॥१॥ । अर्द्धत्वं निरपेक्षोत्स्पृष्टस्य सापेक्ष-  
तायां तस्मान्नैतद् याचेत् ॥१॥ । न गृहीत जानन् ॥१॥ । नाकल्पिकत्वं भागनयने  
स्पृष्टौ नीतस्य प्रवेशने तद्रूपेषु प्रत्ययेषु ॥१॥ । वाहासनं शकटे वर्ज्यत्वम् ॥१॥ ।  
पूरणेऽपि ॥१॥ । ग्लानाधिरोहे च ॥१॥ । कर्णस्य नावि ॥१॥ । आसनस्य च  
तद्धारणार्थस्य ॥१॥ । साधिकौपघयोश्चोद्बलतोर्धट्टनापनयनेनाग्निनिर्वापणेन चीवर-  
कर्णकादिभिर्वा तदानेनेत्यादौ प्रयतनम् ॥१॥ । कल्पिकमसम्पत्तौ विधेर्नदीसंसार-  
णार्थं नेतरि च संप्रापणार्थमुद्गृहीतमभावेऽन्यस्य पथ्यदनम् ॥१॥ । उत्साहनमभावे  
योढुरस्य दानपतेः ॥१॥ । वहनमसम्पत्तौ स्वयम् ॥१॥ । संपादनञ्च तत्र एव दान-

परिवर्चग्राह्यस्य <sup>१००</sup> । भोज्यत्वमस्याप्यसंपत्तावन्यस्य <sup>१०१</sup> । अप्रतिग्राहितस्य च प्रतिग्राहकाभावेऽस्य चान्यस्य वा कृतमक्तच्छेदस्य <sup>१०२</sup> । प्रथमेऽह्नि व्याघ्रमुष्टेः <sup>१०३</sup> । द्वयोः द्वितीये <sup>१०४</sup> । तृतीये यावदाप्तम् <sup>१०५</sup> । भोज्यत्वं फलानामकालेऽप्यकृतकल्प[र]ानामप्यप्रतिग्राहितानां च <sup>१०६</sup> । निर्मक्तस्य <sup>१०७</sup> । तैव्ये क्षुदः <sup>१०८</sup> । मूलानाञ्च <sup>१०९</sup> । स्वयं च पातनोत्पाद्यते साह्यत्वं च <sup>११०</sup> । उत्तरकौवर(स्व ?) प्रसिद्धेः सर्वत्राप्रतिगृहीतोपभोगादौ प्रारिप्सायामभिध्यानम् <sup>१११</sup> । न करके पानीयं पिबेत् संभवे हस्तनिर्मादिनर्पा[र]त्रयोः <sup>११२</sup> । असम्भवे चाप्रतिग्रस्तम् <sup>११३</sup> । नास्य सजलतायामपि तत्त्वं भजेत <sup>११४</sup> । त्रिविध्यमस्य पिधानके <sup>११५</sup> । काष्ठमयं शैलमयं मृण्मयमिति <sup>११६</sup> । धारयेत् करकस्थालकम् <sup>११७</sup> । काष्ठमयं शैलमयं वा <sup>११८</sup> । निर्दोषं भाजनत्वोपयोगे पत्राणामप्रतिग्राहितत्वम् <sup>११९</sup> । अविशेषोऽत्र मुक्तामुक्तयोः <sup>१२०</sup> । उपयोजनमसम्भवेऽन्यस्यामुक्तानाम् <sup>१२१</sup> ।

॥ [ इति ] सप्रतिग्राहितधर्जनम् ॥ ३४ ॥

( ३५ ) प्रतिग्राहितमुक्तौ ।

शुद्धीत त्यक्तमाश्रयतो दात्रान्यप्रतिग्राहकाभावे स्वयं प्रतिगृह्य <sup>१२२</sup> । सम्मुखान्तः-सीङ्ग्यतिसंभवनीये प्रदेशेऽवस्थितौ नोत्तानपाणिना काये तत्संबन्धे चोद्ग्रहणसमर्थतोऽनुपसंपन्नादमनुप्यादपि दित्तशो(त्से?)याङ्गेन तत्संबन्धेन चोत्सृष्टस्य प्रतीष्टिः प्रतिग्रहः <sup>१२३</sup> । जैगुप्यतायां जनपदस्योपनिक्षिपेत्युपदर्शिते मण्डलकेऽपि <sup>१२४</sup> । ऐक्यं पात्रतदधिष्ठानयोः <sup>१२५</sup> । गोचरः शाखामर्कटानां न ततस्तान् प्रत्यनभिसंभवनीयत्वं भूमेः <sup>१२६</sup> । न फलानां प(म ?)ञ्चपीठिकोत्संगपात्राधिष्ठानैः प्रतिग्रहप्रतीष्टेरन्याव्यत्यम् <sup>१२७</sup> । निःश्रितैरेषां प्रत्यवेक्षणं तूर्णोभावेन <sup>१२८</sup> । समप्रवृत्तिं चारकं रचयेयुः <sup>१२९</sup> । न्याय्यं भिक्षोश्चारकत्वं प्रतिग्राहित्वस्य <sup>१३०</sup> । घृततैलमधुफाणितयटांश्चारयंस्तृणपत्रप्रभृति[भि]श्चीवराणि व्यवदध्यात् <sup>१३१</sup> । पृथक् चापे ज्येष्ठमध्यमकनीयसां करणम् <sup>१३२</sup> । पृथक्कृत्य मृष्टाग्राणां चारणम् <sup>१३३</sup> । चारकस्याचार्यं उपाध्यो ( ध्यायो ) वा प्रतिगृह्णीयात् <sup>१३४</sup> । अप्राप्यप्राप्तावनन्तरस्थानः ( नम् ? ) <sup>१३५</sup> । अनेकत्वे यावतामासनमुक्त्वा प्रतिग्रहीतुं शक्तिः <sup>१३६</sup> । लुठितस्य शक्यतायां स्वयममुक्त्वा स्थानं ग्रहीतुमर्ध्वंसः प्रतिग्राहस्य <sup>१३७</sup> । सृष्टस्य च मक्षिकाकीटिकादिभिः <sup>१३८</sup> । अन्येनास्य मुक्तस्य भिक्षुणा <sup>१३९</sup> । ध्वंसकृन्मूपिकः <sup>१४०</sup> । न प्रतिग्राहितप्रतिग्रहणमन्याय्यम् <sup>१४१</sup> ।

॥ [ इति ] प्रतिग्राहितभुक्तिः ] ॥ इति ॥ ३५ ॥

( ३६ ) अप्रतिग्राहितमुक्तौ ।

अप्रतिग्राहितायाम् <sup>१४२</sup> । उत्सृज्योदकदन्तकाष्ठमाहार्यस्य <sup>१४३</sup> । मुखेनाभ्यवहारे <sup>१४४</sup> । अनुचरकुरौ <sup>१४५</sup> । प्रतीष्ट्य(ईच्छे)द् रत्नानोऽनुपसम्पन्नेन भोजनमभाव उपसंपन्नस्य <sup>१४६</sup> । भोजयेदनुपसंपन्नम् <sup>१४७</sup> ।

॥ [ इति ] अप्रतिग्राहितभुक्तिः ॥ ३६ ॥

( ३७ ) प्रणीतविज्ञापने ।

क्षीरं दधि नरनीतं मत्स्यं मांसं बद्धरा इति प्रणीतभोजनम् <sup>१००</sup> । एतत्कर्तृत्वं अज्ञातिगृहीता च दातुः <sup>१०१</sup> । स्वविज्ञप्त्याभ्यवहृतौ विज्ञप्तौ कारितत्वे चास्या दूष्कृतस्य <sup>१०२</sup> । अग्लानस्याकृतयथासुखप्रणारणस्य <sup>१०३</sup> । तस्माद्ब्रह्मानस्यापि चेदन्यद्ब्रह्मं प्रणीतं वा समं प्रकृष्टं वा विज्ञप्तिः <sup>१०४</sup> । अर्धताऽस्मिन् ल्हस्य <sup>१०५</sup> । यथासुखप्रणारणत्व भिक्षयादाय निर्गतेन तूर्णानि तिष्ठतः प्रतिक्षिप्तौ वा तर्किक याचस इति प्रश्नस्य <sup>१०६</sup> ।

॥ [ इति ] प्रणीतविज्ञप्त(विज्ञाप)नम् ॥ ३७ ॥

( ३८ ) सप्राणक्रोपभोगे ।

( क ) विभङ्गतम् ।

स्योपभोगार्थत्वे प्रवृत्तिप्रवर्चनयोः <sup>१०७</sup> । इत् । सप्राणितायाम् <sup>१०८</sup> । उदक-सर्पिलैलमधुफाणितक्षीरदधिनवनीतशुक्तशुल्लरुदधिमण्डकांजिकफलसाद्यकादेरु-पयोज्यस्य <sup>१०९</sup> । दृश्यैः <sup>११०</sup> । मृतौ <sup>१११</sup> । प्रतिप्राणि उपभोगः शरीर उपभोगः <sup>११२</sup> । तद्यथा स्नानं पानं दन्तकाष्ठविसर्जनं हस्तपादप्रक्षालनम् <sup>११३</sup> । उपकार्ये स उपयोगो य उपकरणेषु <sup>११४</sup> । अभ्यवहार्यपात्रचीरस्थानदन्तधारनाग्निप्रभृतीनि शरीरोप-करणानि <sup>११५</sup> । तेषां मृद्गोमपरङ्गवृषकाष्ठप्रभृति <sup>११६</sup> । तेषु उपयोगस्तद्यथा निर्मादनं भावनं रञ्जनं सैरुः सम्मार्ग उपलेपः <sup>११७</sup> । घृषमण्डयवागूनां करणम् <sup>११८</sup> । वन्धमोक्षयोस्दकमार्गस्य <sup>११९</sup> । काष्ठपुत्रयोः क्षेपारुर्षणीत्पाट-नानाम् <sup>१२०</sup> । अकपलसकादन्येन रोमविधादिना स्नानम् <sup>१२१</sup> । तेनास्य हि रिक्त-प्राणकधाताबुदक इति प्रयोगः <sup>१२२</sup> ।

॥ [ इति ] सप्राणक्रोपभोगः, विभङ्गतम् ॥

( ख ) धुद्रुदादिगतम् ।

धारयेद् दण्डपोषणम् <sup>१२३</sup> । दत्तप्रत्येष्ट्यभाण्डि(?)त्रमाकाशावस्थाप्याकीर्य-माणापच्यजलप्र(?)प्रत्येष्ट्यपवित्यसंयमार्थं(?)लोहकण्डकस्त्रिदण्डस्तदारुयः <sup>१२४</sup> । स्नानार्थं जलस्यास्तृतेः परिश्रावणे दानम् <sup>१२५</sup> । चालुक्या गोमयेन वा <sup>१२६</sup> । धारणपात्रस्य वा <sup>१२७</sup> । मृत्पात्र[?]पसपोरन्यतरस्य <sup>१२८</sup> । त्रिदण्डयष्टयामस्य चन्ध-नम् <sup>१२९</sup> । संगुल्य रन्ध्रे स्त्रेण पूंस्य <sup>१३०</sup> । उत्तरस्य श्लक्ष्णमृद्गुलिरुया <sup>१३१</sup> । धारणमस्य <sup>१३२</sup> । कम्पिकया मुहुर्मुहुर्दानेस्त्र(?)परिश्रावणस्य पराघातः <sup>१३३</sup> । अल्पप्रयत्नेन रव(?)णम् <sup>१३४</sup> । धारणमस्य <sup>१३५</sup> । मृदस्तात्रस्य वा <sup>१३६</sup> । कुम्भ-कृत्येतदघोनाडिषु पुष्टर(?)रवदन्तरविनरम् <sup>१३७</sup> । नदुषस्यैषु शोधकत्वम् <sup>१३८</sup> ।

परिश्रावणमुपस्थापयेत्<sup>१००</sup> । खल्लगं ध(च?)र्मकरकं मोचनपट्टकं वा<sup>१०१</sup> । आत्युहायां  
 कल्पिकजलस्य संभावदा(?)याश्च करककुण्डिकाभ्यामेतत् तद्वचम्<sup>१०२</sup> । न सान्त-  
 रेण सार्द्धम्<sup>१०३</sup> । तद्रूपश्चेत् प्रत्ययः क्षमयित्वा कार्यकरणेऽस्तित्वमास्तित्वम्<sup>१०४</sup> ।  
 तस्मात् तद्वचमत्र दाने प्रतिज्ञातेऽन्येन<sup>१०५</sup> । नैतज्जनपदचारिक(का?)यां विद्युक्तौ  
 दानाप्रतिज्ञाने संश्रयेत्<sup>१०६</sup> । नाविघातकृदन्तरसंचारश्चारिका<sup>१०७</sup> । क्रोशपञ्चकस्यैत-  
 [चद्व?]चम्<sup>१०८</sup> । न प्रमील्य गतस्य स्थाने तद्वचनाभावे कामजः<sup>१०९</sup> । नैकेनानेकस्य  
 तद्वच्यसंपचिरासंधात्<sup>११०</sup> । नाविघातकृच्चं शीघ्रस्रोतसः<sup>१११</sup> । क्रोशमजु गच्छतो-  
 ऽस्यामजुस्रोतोऽनुसंहितं प्रत्यवेक्षणात् तेन प्रवृत्तिः<sup>११२</sup> । सम्भेदश्चेदत्रोदकान्तरेण  
 प्राक् ततः<sup>११३</sup> । व्यामस्य परितः प्रत्यवेक्षितत्वम्<sup>११४</sup> । चक्षुषा शुद्धत्वमुदकस्य  
 शुद्धिः<sup>११५</sup> । प्राकृतेन<sup>११६</sup> । निष्कम्पत्वे प्रत्यवेक्षणमरजसः<sup>११७</sup> । पूर्णत्वे  
 घटस्य<sup>११८</sup> । नातिक्रियासंख्यामत्र चिरतां कुर्यात्<sup>११९</sup> । तुलिकया सुकरं प्राण-  
 कानां दर्शयनं श्लक्ष्णया<sup>१२०</sup> । नैनां कुमके च्वन्या किरेत्<sup>१२१</sup> । नान्याम्<sup>१२२</sup> ।  
 प्राणकपतनम्<sup>१२३</sup> । चेत् प्रदीपे तत्करणेनास्य प्रच्छादनम्<sup>१२४</sup> । पञ्जरं वंशविदलिकानां  
 शुक्लवस्त्रस्य वेष्टितमभ्रपटलेन वा तदाख्यम्<sup>१२५</sup> । शताक्षथ<sup>१२६</sup> । आद्यकृतित्वा  
 कर्परं वा घटादेशिच्छद्वितम्<sup>१२७</sup> । न बालपाशेन मर्पं बध्नीयात्<sup>१२८</sup> । अच्छटा-  
 शब्दं कृत्वा भद्रमुखादर्शनपथे तिष्ठेति वदेत्<sup>१२९</sup> । अस्थितावजपदकेन दण्डेन  
 शनैष्कुम्भे कुण्डके वा प्रक्षिप्य छिद्राणि कृत्वा मुखं पिधाय निष्कासनम्<sup>१३०</sup> ।  
 असंम(?)तौ पट्टिकया लौठिकया मुहुचिकया चारजु(ज)पाशेन वा नतु(?)के  
 वेष्टितेन ग्रीवायां बद्धा<sup>१३१</sup> । प्रक्षेपेऽप्येषां विनियोगः<sup>१३२</sup> । न द्वे छोरयेत्<sup>१३३</sup> ।  
 आशयप्रवेश(?)तिष्ठेत्<sup>१३४</sup> । नदुके युकानां स्थापनम्<sup>१३५</sup> । शुपिरे तस्य<sup>१३६</sup> ।  
 घादले मत्कुणानाम्<sup>१३७</sup> । शीतले वा<sup>१३८</sup> । मोचनघटिकायाः पूर्वावतारणार्थं वार-  
 णम्<sup>१३९</sup> । तेनैव वा परिश्रावणेनावतारणम्<sup>१४०</sup> । मोचनं परिश्रावणस्य लमप्रा-  
 णकापनीतावुपायः<sup>१४१</sup> । भावनं मलस्य<sup>१४२</sup> । शोष्य(?)णं यान्यानुपगतेः<sup>१४३</sup> ।  
 निष्पीडनस्य इयेऽप्यसिञ्जुपकरत्वम्<sup>१४४</sup> । निरावद्यालंभप्रत्ययसंधपुद्गलपरिश्राव-  
 णप्रवणप्रत्ययेन प्रवृत्तिः<sup>१४५</sup> । आसुर्योदयात् गृहीतोदपानयोः प्रत्यवेक्षितानु-  
 वृत्तिः<sup>१४६</sup> । पादधावनिकां रिक्तामुच्छोच्य पूरयेत्<sup>१४७</sup> । उपस्थापयेदन्यभाण्डम्<sup>१४८</sup> ।  
 भाण्डगोपकस्य तद्गतः साधिके व्यापारः<sup>१४९</sup> । नात्र दानग्रहणयोः नान्तर्भावः<sup>१५०</sup> ।  
 दानं गृहिणे याचितकत्वेन<sup>१५१</sup> । परिभुक्तस्य तत्सत्त्वे<sup>१५२</sup> । नानेन दानपतीनां विहारे  
 देयत्वस्य नोक्तता नवस्य भिक्षवे निद्दे(?)धे)पत्त्वेन<sup>१५३</sup> । भाण्डार्थे लयनस्य(?)  
 नियोजनम्<sup>१५४</sup> । पृथक्त्वेन मृत्ताभ्रभाण्डिकयोर्निक्षेपः<sup>१५५</sup> । उपस्थापनं पानी-  
 यस्य<sup>१५६</sup> । न यत्र कचन स्थापनम्<sup>१५७</sup> । मण्डपस्य तदर्थं करणम्<sup>१५८</sup> । दक्षि-  
 णपथिभे विहारस्य पार्श्वेऽभ्यन्तरतः<sup>१५९</sup> । वातापनमोक्षेष्टकास्तारदानोदकभ्रम-

मोक्षद्वारकर्णकरोटकटङ्गदानम् ॥ १० ॥ वंशस्य च परिश्रावणस्यापनार्थम् ॥  
 काष्ठम्मञ्जि(ष्ठमञ्जि?)कामु स्थापनम् ॥ इष्टरूपिण्डिकायां वा ॥ आधारकेषु ॥  
 चौक्यं पानीयभाण्डमापा(१५)रिभोगार्थान्(१६?)वुर्यात् ॥ शुचि ॥ पानीयञ्च  
 पेयम् ॥ नाकल्पिकरे[त?]द्वस्तचीरैश्चारयेत् ॥ कालेन कालमुदकभाण्डा-  
 नामन्तःशोचनम् ॥ गम्भीराणामुशीरकुर्वकेन पत्रनिभङ्गुर्नत्रकेन वा  
 यष्टयामुपनिद्धेन ॥ नातोऽरम्भृत्प्रमामिपोपदेहस्य ॥ शोषणञ्च ॥  
 तदा विधातार्थमपहत्वे(?)न ॥ नि[ः]श्रयकरणीयानामुदकगतो ध्यापारः ॥

॥ [ इति ] सप्राणयजलसवद्धधुद्रकादिगतः ॥ ३८ ॥

( ३९ ) निपदने ।

प्रवृत्ताद्यैन्मुखे वा ॥ सन्निपाते ॥ स्त्रीपुंसयोः(१७?) ॥  
 गृहित्वे ॥ अन्यस्थानतायाम् ॥ योग्यत्वे च ॥ निरस्यत्वे  
 संप्रयुक्तेः ॥ प्रत्यक्षकल्पेन निपदने ॥

॥ [ इति ] सभोजने निपदनम् ॥ ३९ ॥

( ४० ) स्थाने ।

स्थाने रहःकल्पेन ॥ सायणस्य ॥ न चेद् भयवशात् ॥  
 दुष्कृतस्यासंवेद्यसंवेत्तृत्वे ॥ अवधाने च स्थानान्तरे ॥ गोचरान्ताद्  
 दृष्टेः स्थानान्तः ॥ अन्तर्गतं गमज(ञ्ज)स्य ॥ भिन्नत्वं गृहान्तरस्य ॥

॥ [ इति ] सभाजने स्थानम् ॥ ४० ॥

( ४१ ) अधेलदाने ।

स्त्रिया पुरुषस्य वा ॥ उत्सृज्य ज्ञातिं प्रजजा(ज्या?)पेक्षं ग्लानं च ॥  
 अनिर्दलिङ्गप्रव्रजितस्याचेलकस्य काये कायसम्बन्धे वा ॥ खादनीय-  
 भोजनीययोः ॥ स्वस्य तस्य च ॥ उत्सृज्य पापकट्टिगताद् विवे-  
 चनार्थताम् ॥ स्वयं दाने ॥ अकल्पिकयोः दुष्कृतम् ॥ दापने ॥  
 संविभागे च ॥

॥ [ इति ] अधेलदानम् ॥ ४१ ॥

( ४२ ) सेनादर्शने ।

युद्धाभिनिन्दिसेनादर्शनार्थतया ॥ उत्सृज्य राजदेवीदुभारामात्यभटवला-  
 ग्रनैगमजानपदोक्तिम् ॥ अन्तरायोपपातशतां च ॥ प्रस्थापितस्य ॥  
 उपविचारान्तातिक्रमे दृष्टौ ॥

॥ [ इति ] सेनादर्शने [ प्रायश्चित्तिक ]म् ॥ ४२ ॥

( ४३ ) सेनावासे ।

विनैते तत्र रात्रिन्दिबद्वयपरिपूरैरूर्ध्वं वासे ॥ अनिमित्तं च पूर्वरात्रि ॥

॥ [ इति ] सेनावासः ॥ ४३ ॥



(४४) युद्धाङ्गप्रत्यनुभवे ।

युद्धाङ्गानां कर्तृत्वम् <sup>(१)</sup> । अनन्तरायवशगतस्य <sup>(२)</sup> । समस्तव्यस्तानाम् <sup>(३)</sup> ।  
सजीकृतानाम् <sup>(४)</sup> । मौले मौलस्य <sup>(५)</sup> । दुष्कृतस्य प्रयुक्तौ <sup>(६)</sup> । असजी-  
कृतानाम् <sup>(७)</sup> । उभयत्रापि दुष्कृतस्यैव <sup>(८)</sup> । सृष्टिरुद्बन्धनं प्रस्थाय दर्शनार्थ-  
मुपविचारान्तातिक्रमे दृष्टिरिति मूलानि <sup>(९)</sup> । न्यूनतामनुद्यतत्वे <sup>(१०)</sup> । न  
हस्त्यश्वकुक्कुटलावकवर्चकस्त्रीपुरुषयुद्धादि कुर्यात् कारयेन्निरिक्षेत वा <sup>(११)</sup> ।

॥ [ इति ] युद्धाङ्गप्रत्यनुभवः ॥ ४४ ॥

(४५) प्रहरणे ।

कल्पपञ्चितया <sup>(१)</sup> । कायतन्निःसृष्टसम्बद्धैर्षेन केनचिदन्ततः पादाङ्गुष्ठ-  
सर्पपतूलिक[र]भिः प्रहृतौ <sup>(२)</sup> । भिक्षोः <sup>(३)</sup> । परस्य <sup>(४)</sup> । उचरेषु त्रिषु <sup>(५)</sup> ।  
सृष्टो(र्षी) <sup>(६)</sup> । प्रतिनिपात्यम् <sup>(७)</sup> । अनिपाते दुष्कृतम् <sup>(८)</sup> । नान्यत्र प्रहर्चव्ये  
ऽन्यत्र प्रहरेत् <sup>(९)</sup> । न स्तम्भे प्रहारं दद्यात् <sup>(१०)</sup> । न भित्तौ भूम्यां वृक्षेऽन्यत्र  
वा <sup>(११)</sup> ।

॥ [ इति ] प्रहरणम् ॥ ४५ ॥

(४६) अवगुरणे ।

प्रहारावगुरणे <sup>(१)</sup> । प्रतिद्रव्यम् <sup>(२)</sup> ।

॥ [ इति ] अवगुरणम् ॥ ४६ ॥

(४७) अवद्यप्रतिच्छादने ।

पाराजयिकसंघावशेषयोरुत्सृज्यास्पर्शश्रामण्यत्रह्यचर्यान्तरायसंघक्षोभाशकवश-  
ताम् <sup>(१)</sup> । प्रतिच्छादने <sup>(२)</sup> । अन्तेऽहोरात्रस्य <sup>(३)</sup> । प्राग् दुष्कृतम् <sup>(४)</sup> ।  
अन्यसाधापत्तेः <sup>(५)</sup> ।

॥ [ इति ] अवद्यप्रतिच्छादनम् ॥ ४७ ॥

(४८) भक्तच्छेदकारणे ।

संचिन्त्य मुक्त्वा रोगप्रतिक्रियार्थतां गृही दातुं भक्तच्छेदस्य कारणे <sup>(१)</sup> ।

॥ [ इति ] भक्तच्छेदकारणम् ॥ ४८ ॥

(४९) अग्निवृत्ते ।

न सिंहं स्पृशेत् <sup>(१)</sup> । शास्त्वर्धसंघसत्रह्यचारिणां घर्म्यकरणीयतापेक्षा  
पात्ररंगकर्मणोश्च समयाधिष्ठानम् <sup>(२)</sup> । अधितिष्ठेद् दीर्घम् <sup>(३)</sup> । क्रीडायां  
चापरया चन्द्रसूर्यालातचक्रादिकरणतश्च <sup>(४)</sup> । अग्निना <sup>(५)</sup> । अनधिष्ठितसमयस्य  
अग्लान्यघशतार्थस्य स्पृष्टौ <sup>(६)</sup> । स्वयन्नियोगतो वा <sup>(७)</sup> । प्रज्वाल[न]निर्वापण-  
स्पृष्टास्पृष्टेन्धनसमवधानपुक्तनिष्कर्षणाङ्गारसमावर्चननिष्कर्षणेषु <sup>(८)</sup> । अर्द्धस्त-  
मितत्वं कुहूलस्य <sup>(९)</sup> । ज्वालानां च <sup>(१०)</sup> । समवधाननिष्कर्षणे तत्रेन्धनस्या-

ध्यन्तरवृत्तम् ॥१०॥ । केशरोमाश्विनखेटसंघाणकवान्तविरिक्तमुद्रमापतिलतैलम-  
घुसर्पिषामद्वेन्वनत्वम् ॥११॥ । अन्यस्य करणीयेऽन्यस्येत्यधिष्ठानमर्द्धाधिष्ठानम् ॥१२॥ ।

॥ [ इति ] अग्निवृत्तम् ॥ ४९ ॥

( ५० ) छन्दप्रत्युद्धारः ।

मिक्षुपर्याधे कर्मणि ॥१३॥ । वृत्तस्य महदानास्य(?) प्रत्युद्धारार्थायां  
वापि ॥१४॥ ।

॥ [ इति ] छन्दप्रत्युद्धारः ॥ ५० ॥

( ५१ ) [ शयने ] ।

नाचन्द्रसूर्यालोकवत्यववरकदेशे शयीत ॥१५॥ । मुक्त्वा ग्लान्यग्लानोपस्थानव-  
शताम् ॥१६॥ । प्रायश्चित्तिकमत्रेत्येके ॥१७॥ । अर्द्धत्वमनिपत्तेः पृथक्त्वञ्चाहः ॥१८॥ ।  
यद्भूपः ( यः ? ) परिवारितमगारपर्यन्तः ॥१९॥ । तद्गतत्वं संबद्धस्य तद् द्वारपार्श्वोप-  
चारसागारभूतस्य ॥२०॥ । पुरान्तरस्य च तद्गतद्वारस्थानन्तरस्य च ॥२१॥ । न  
सोपचारात् परस्य लयनमात्रात् पृथग्भूताध्यासितस्य ॥२२॥ । अर्द्धत्वं वृक्षमूल-  
कुड्यशुशि(?)सुपि, रवूर्त्त(?) मूलानाम् ॥२३॥ ।

[ इति शयनप्रायश्चित्तिकम् ] ॥ ५१ ॥

( ५२ ) स्त्रीसहस्रमे ।

सगहनानां स्त्रीसहस्रमे ॥२४॥ । अध्वनोऽत्र कुक्कुटस्योत्पात्य निलयनेऽन्तरम-  
भूतत्वम् ॥२५॥ । सर्वस्य सान्तरसंचारस्य निरनगारान्तरत्वे छदनसैकत्वम् ॥२६॥ ।  
पृथक्त्वं स्वभागगतचघनबन्ध(?)त्वे द्वारस्योपचारस्यापि ॥२७॥ । तद्द्वक्षितत्वं  
मिक्षुणापत्तेः ॥२८॥ । गुप्तत्वं च स्वामिना मातृग्रामस्य ॥२९॥ । उच्चृतत्वं च  
निश्चयपणेः पुरान्तरे ॥३०॥ । हासोऽनगारत्वेऽन्यभूतात् ॥३१॥ ।

[ इति स्त्रीसहस्रम् ] ॥ ५२ ॥

( ५३ ) अनुपसम्पन्नसहस्रमे ।

अनुपसंपन्नेन सार्द्धमगारे तृतीयस्यां रात्रौ स्वप्ने ॥३२॥ । अन्ते ॥३३॥ । प्राग् हुष्कृतं  
निर्दोषमध्वपरिश्रान्तस्य क्लान्ती ॥३४॥ । तथास्यान्तेऽपि ॥३५॥ । अकल्पिनि च भिक्षोः  
करणीये तत्संपादकेन सार्द्धं ग्लानस्य तदुपस्थापिनश्च ॥३६॥ । श्रामणरेण च तद्गतः  
सन्निहिततायां तत्रावासे पापभिक्षोः कृतकुर्वचभिवासाप्रयत्नस्य ॥३७॥ । उपगतौ  
पश्चिमकालयोद्ध(र्द्ध)योर्मासयोर्वर्तमानस्य ॥३८॥ । नोर्ध्वमस्य वस्तन्यत्वम् ॥३९॥ ।  
अकार्यत्वं पूर्वोपगतेः ॥४०॥ । अरक्षत्वं प्राग् ॥४१॥ । नैपोऽनुपस्थापितं श्रामणेरमु-  
पस्थापयेत् ॥४२॥ । मिद्धोपपातेनाध्वनि श्रामणेरमभिष्टुतं पुरतः कृत्वा गच्छेत् ॥४३॥ ।  
बुधक्षितश्चेत् सानुकालं दद्यादसौ तदाहारम् ॥४४॥ । पुनश्चेद् देलायां तदापि ॥४५॥ ।

॥ [ इति ] अनुपसम्पन्नैः सहस्रम् ॥ ५३ ॥

(५४) दृष्टिगतानुत्सर्गे ।

तथाहम्भगवतो धर्मदेशितमाजानामि यथा [ ये अधर्माः संक्लेशिकाः ]  
 आन्तरायिका धर्मा उक्ता भगवतोति प्रतिपे(रिसे)व्यमाने नालमन्तरायावेत्यादि  
 प्रवृत्तवचनतावसर्गे जैगुप्यमत एनं कुर्युः ज्ञापनेन ५४ ।

॥ [ इति ] दृष्टिगतानुत्सर्गः ॥ ५४ ॥

(५५) उरिक्षप्तानुप्रवृत्तौ ।

तथा विदितप्रक्षिप्तस्थाप्रतिकृततायां भिक्षोः ५५ । उद्देशदाने ५७ ।  
 परिप्र(रिपु)च्छनिकायाः ५५ । सनिःश्रयस्य ५५ । अनुशासत्याः ५७ ।  
 अववादस्य ५७ । आविष्करणे दृष्टेः ५७ । आसोप(रि)संभोगे ५७ । उपस्थापन-  
 स्वीकृतौ ५७ । अगारे च सहस्रमे ५७ । अन्ते रात्रेः ५५ । अन्यथा वासं  
 सन्दने ५७ । मुक्त्वा ग्लान्यदम्बिवेचनगतेनार्थेन ५७ ।

॥ [ इति ] उरिक्षप्तानुप्रवृत्तिः ॥ ५५ ॥

(५६) नाशितसंग्रहे ।

प्रवृत्ततद्वचनानुत्सर्गे श्रामणेरं नाशयेयुः ५६ । ज्ञप्तिचतुर्थस्य ते कर्मण इति  
 पूर्वत्रोत्तरनाशनीयस्य ते इत्युपक्रमं ज्ञप्तिः कृता निःसृजेदमेवरूपं पापकं दृष्टिमत्  
 प्रथमा कर्मवाचना कृता द्वितीयेति प्रत्येतदन्तमसै भिक्षुणा श्रावयेयुः ५६ ।  
 अनास्तावुत्तरं कुर्युः ५६ । नाशिततायां श्रमणोद्देशस्य ५६ ।

॥ [ इति ] नाशितसंग्रहः ॥ ५६ ॥

(५७) अरक्तबल्लोपभोगे ।

नील्या गैरिकेण बल्कलेनेत्यनुपरक्तस्य स्ववाससः ५७ । अन्ततः पात्र-  
 वस्यक(रि)स्थाविकापादचोडकायबन्धनानां प्रावरणादौ परिभोगे ५७ । न  
 निक्रायान्तरीयस्य पुनः कल्पनीयत्वम् ५७ । नाच्छिन्नस्य शृङ्गिणा ५७ । न  
 महारङ्गरक्तं प्राश्रुतिभजेत ५७ । नागारिकस्य ५७ । भजेद् विहाराभ्यन्तरे  
 प्रतिच्छादितस्य कापायेण ५७ । साधारणत्वमध्वनि याचितप्रावरणस्य ५७ ।  
 सहायकैः भिक्षुश्रामणैरैः ५७ । एकत्वे वृद्धान्तदारस्य यावत्संभावनामु-  
 परिदानम् ५७ । नानवच्छिन्नमपरतः प्राश्रुत्यं(रि) चक्रम्येत ५७ । अन्वाक्रामे-  
 दुपनिमन्त्रितः पुण्यकामेन नवमाच्छिन्नदशात् पराहत्यानित्यतामनसिकारेण ५७ ।

॥ [ इति ] अरक्तबल्लोपभोगः ॥ ५७ ॥

(५८) उद्धर्षवस्तुगते ।

स्पष्टो(ष्टौ) ए- स्पर्शनयोः कर्तृरत्न(वृत्त्व)मस्यम् ५८ । तत्सम्मतं च ५८ ।  
 शस्त्रमेतत् संग्रामावचरं भाण्डं च गन्धर्वावचरम् ५८ । श्राप्तं योग्यत्वमुपयोगाय  
 भूत्स्य ५८ । दुष्कृतस्याप्राप्तम् ५८ । मुक्त्वा स्वीकाराननुगतः तत्र द्रव्याविनाश-

चित्तस्य विहारतदुपचारगतम् ॥ न तदुपेक्षेत ॥ सप्ताष्टान् दिवसेनैतदुपविचारे  
 प्रकृन् (?) पांसुना वैमङ्गुर्कैर्वा छादयेत् ॥ नासमुदितचित्रा(जा?)य स्वाम्यह-  
 मिति ध्रुवते दद्यात् ॥ अनागमेऽस्योद्धं(र्ष?) सांघिके गज्जोः [उ]पनिक्षिपेत् ॥  
 आपष्टमासपर्यन्तं धारयेत् ॥ ऊर्ध्वमनागतौ यद् भूमी शुद्धसांघिकयोर्लब्ध  
 तत्रोपयुक्तिः ॥ अयोग्यत्वे क्रयणं योग्यस्य तेन स्वावरस्य ॥ तदा चेत्  
 स्वाम्यागच्छेदनुज्ञानमायाच्यानिच्छते दद्युः ॥ वृद्धिं चेत् मृगयेदेतदेव न बहु  
 मन्यसे यदस्माभिः परिपालितमिति द्रुयुः ॥ घटितविघ(द?)तायां मण्यादेर्यो-  
 ग्यत्वम् ॥ हर्षकटककेजू(यू)रहाराद्वाहारस्त्वविनिवेशे च ॥ वीणावेणु-  
 वहल्लिरिमहतिमुद्घोषकानां सतत्रीकत्वे ॥ वदत्ता(?)यां शङ्खभेरीपटहमुखा-  
 नाम् ॥ धनुषः सगुणत्वे ॥ तच्चेशील्येकतो धारककुन्तडाभाणेऽर्द्धानाम् ॥  
 शरनाराचार्द्धनाराचानां सफलत्वेः (त्वे ?) ॥ सघातुकत्वे प्रतिमायाः ॥  
 निर्घापमस्याः शास्त्रसंज्ञाश्लेषस्थाप्य ॥ काचमणिपलालमालकाण्डवीणिक-  
 तलमटुकपिञ्जनकतुलिकाक्रीण्डानामर्द्धत्वम् ॥ अयोग्यत्वं सुवर्ण-  
 पिण्डस्य ॥ गोपयित्वोश्रासे गृहीत्वा वानुपरोधे स्वस्य सांघिकं स्तौपिकं च  
 हिरण्यसुवर्णमपक्रमणम् ॥ स्ना(श्रा?)द्वेन श्रामणेरेण वा ॥ अमावे  
 स्वयम् ॥ खननमत्र ॥ अपगते दानम् ॥ उत्पाद्य तद्वत् ॥  
 निर्दोषममानुषभवने पुण्यानिर्जातं वेदेपां रत्नमयं भूमिसोपानादि ॥ भोजने  
 च भाजनमसम्भवेऽन्यस्य ॥ शयनासनं च निपादे ॥ गच्छेद् यानेन ॥  
 धर्मार्थवशतया ॥ नाटोपरता ॥ न जीर्णगलानाम्यामन्यः ॥  
 निपीडेद् धर्मश्र[?]णार्थं रत्नमये सिंहासने पराहत्यानित्यतामनसिकारेण ॥  
 निवेशने चागारिकीयाणी(?)ति संप्रेक्ष्य तत्प्रज्ञप्तौ ॥ सुवर्णराचितकं-  
 कणिकावृतेषु वस्त्रेषु ॥ अत्र च मणिप्रत्युत्तेषु सुवर्णरूप्यराचितेषु प्रवेशयेयु-  
 रेतानि ॥ नाकल्पिकत्वमुपस्थापितशास्त्रसंज्ञानामागारिकश्रामणेराभावे  
 बुद्धप्रतिष्ठ(प्रि?)तेर्धर्मार्थवशतया स्पृष्टौ ॥ त(न ?)द्रव्यस्य च ॥ नामरण-  
 प्रावृत्तिं भजेत् ॥ धारयेत् मुद्रान्म् (द्रा?) ॥ अप्रावरणिकीम् ॥ त्रपुता-  
 अरितीकजतुकाष्टशैलमृदन्तशङ्खेभ्यः ॥ चिह्नं सांघिकायां(याः?) मध्ये चक्रं  
 पार्श्वयोर्मृगायधत्वाद् विहारस्वामिनो नाम ॥ पैङ्गलिकायामस्त्रिसंकलाशिरः[?]  
 कपालं वा ॥ न फणिकया शिरः[?] प्रसाधयेत् ॥ निदर्शनमेषा ॥  
 नादर्शेन मुखं पश्येत् ॥ उदकात् ॥ अनापत्तिरुदकप्रत्यवेशणार्थतायां  
 व्रणवलीपलितदर्शने पूर्वोत्तरनिमित्तोद्ग्रहणे ॥ न त्र्यार्षं भजेत् ॥ न  
 रोचनाश्रक्षणम् ॥ न गन्धैः ॥ भजेत् पादयोर्गन्धाद्गदानं पुण्याधि-  
 नाम् ॥ न तस्य पुस्तो(१४ उ)पनयेत् ॥ नैभिर[?]क्तः संघे सन्नपतेत् ॥

न गृहिभ्यो धर्मं देशयेत् <sup>५१</sup> । न कुलान्युपसंक्रामेत <sup>५२</sup> । स्नानमन्ते  
 भजेत् <sup>५३</sup> । प्रतिगृहीतैनाम् <sup>५४</sup> । पुष्पमालां च <sup>५५</sup> । चैत्ये विनियोगः <sup>५६</sup> ।  
 श्रावकस्यापि <sup>५७</sup> । अनभिमतो दातुः शिरोन्ते पादान्ते वा <sup>५८</sup> । असम्मुखे  
 द्वारस्य <sup>५९</sup> । मित्रौ <sup>६०</sup> । लम्बनं मालाद्याशूच्यामत्राद्यत्सितायां कण्टके  
 वा <sup>६१</sup> । चक्षुष्यं सुगन्धीति कालानुकालं घ्राणम् <sup>६२</sup> । न ब्रह्मसूत्रप्रावृत्तिं  
 भजेत् <sup>६३</sup> । न सूत्रकस्य <sup>६४</sup> । मूलवाही चिकित्सापार्थस्य भजेत् वामे <sup>६५</sup> ।  
 न यत्र कचन छोरयेत् <sup>६६</sup> । सशेषं चेत चीवरकर्णके कुञ्चके बन्धनम् <sup>६७</sup> ।  
 न चेत स्तम्भशुपि(सुपि ?)रे कुञ्चस्य वा निक्षेपः <sup>६८</sup> । न नूर्त(त्य ?)गीतवादित-  
 माचरेत् <sup>६९</sup> । न शिक्षयेत् <sup>७०</sup> । नोपसंहरेत् <sup>७१</sup> । न दर्शनायोपसंक्रामेत् <sup>७२</sup> ।  
 न भिक्षुण्या नृचै (त्यं ?) कारयेत् <sup>७३</sup> । कुर्यात् शास्त्रगुणसंकीर्तने त्रिदण्डकदाने  
 च खरगुप्तिम् <sup>७४</sup> । शिक्षितैनां प्रतिगुप्तिप्रदेशे <sup>७५</sup> । न संचग्धनसंक्रोडनसंकि-  
 लिकिलायनौद्वत्सद्रवकायताद्यानि कुर्यात् <sup>७६</sup> । नौद्वत्सामिप्रायः कायवाचो  
 (चौ ?) विकुर्वीत <sup>७७</sup> । भागशो व्यवकेतसंसर्गः <sup>७८</sup> । न भाजन(नं) संचारके-  
 नाम्पचहृतं कुर्यात् <sup>७९</sup> । न वतंसकं ग्रथ्नीयात् <sup>८०</sup> । नाम(व)मुञ्चेत् <sup>८१</sup> ।  
 न लालाटिक[?]मनुप्रपच्छेत् <sup>८२</sup> । न समावस्थायां वा(या)चैत् <sup>८३</sup> । न जवनपुवने  
 कुर्यात् <sup>८४</sup> । नोरुवाहुमत्स्यपरिवर्तकं परिवर्द्धेत् <sup>८५</sup> । न जलशिविपिकां  
 विधेत् <sup>८६</sup> । न जलमण्डकभेरिके वादयेत् <sup>८७</sup> । न [ड]दकपिच्छिलिकां  
 पिच्छिलेत् <sup>८८</sup> । न हस्तिकुञ्चितश्वहेपितर्षभगजितमयूरकोकिलरुतानि कुर्यात् <sup>८९</sup> ।  
 न मुखसंसदुद्दुकभेरीवादनम् <sup>९०</sup> ।

॥ [ इति ] उद्धर्षवस्तुगतम् ॥ ५८ ॥

(५९) लाने ।

शिष्टादध्यर्षतो ग्रीष्मस्य पूर्वतश्च वर्षाणां मासात् <sup>९१</sup> । अचीवरद्वितीयस्य  
 लघौ यद्विधस्य <sup>९२</sup> । अनुद्भूतस्य वातेन <sup>९३</sup> । चीवरकण्ठकैरर्षं तत्पर्यन्तः <sup>९४</sup> ।  
 अनवगृष्टस्य <sup>९५</sup> । अस्य विन्दुद्वयनिपात[ः] काये <sup>९६</sup> । अन्यदा पञ्चदयाद-  
 स्नानदिवसादवार्कस्नाने <sup>९७</sup> । अभिषेकेण चावगाहनेन वा <sup>९८</sup> । नाभिप्राप्तौ <sup>९९</sup> ।  
 पुरस्ताद् दुष्कृतम् <sup>१००</sup> । सर्वत्र समयेष्वनधिष्ठाने <sup>१०१</sup> । नार्थान्तरपरो जलानुभवः  
 स्नानम् <sup>१०२</sup> । तस्मादुत्तरणं संचेत्तितया मूर्च्छितसेकेष्वनापत्तिः <sup>१०३</sup> । मन्येताश्मा-  
 परान्तकेष्वसाभावम् <sup>१०४</sup> । न संभवे परस्योत्खापकल्पं संश्रयेत् <sup>१०५</sup> ।

॥ [ इति ] स्नानप्रायश्चित्तिकम् ॥ ५९ ॥

(६०) तिर्यग्बधे ।

बधकचिचेन तिरश्चः प्रहृतौ <sup>१०६</sup> । तदाऽन्यदा वा तन्निदानं मृतौ दुष्कृतत्वं  
 सच्चाविग्रहस्य <sup>१०७</sup> ।

॥ [ इति ] तिर्यग्बधः ॥ ६० ॥

— ( ६१ ) कौकृत्योपसंहारौ ।

न ताम्रपुमम्पन्नः पाराजयिकामसापन्न इत्याद्यर्थं(र्षं) मिहनेयेन कौकृत्यो-  
पसंहारौ भिक्षोः ॥ अस्पृशोत्पादनचित्तेन ॥ हासनापि ॥ अनुत्पत्ता-  
वपि ॥ कौकृत्यस्य ॥ अन्येन दुष्कृतम् ॥

॥ [ इति ] कौकृत्योपसंहारः ॥ ६१ ॥

( ६२ ) प्रतोदने ।

भिक्षोः ॥ अहुलिमुद्यरतिस्कन्धशीर्षपार्थपृष्ठकटयूरजंघानुपादाहुष्ठा-  
दिभिः प्रतोदनतः स्पृष्टो विरुणचित्तेन ॥ तस्माद् व्रणमशपिल्प(शिशु)तिल-  
करोमावर्तादि दर्शनेनापत्तिः ॥ एके वानेकृत्वे निपात्यस्य ॥

॥ [ इति ] प्रतोदनप्रायश्चित्तिकम् ॥ ६२ ॥

( ६४ ) द्रवहर्षणे ।

जलविषयक्रियानुष्ठाने ॥ अजतीर्णस्य निमज्जनोन्मज्जनतीरान्तरसंचारानु-  
प्रतिस्रोतोच्ययामज्जलभेरिकामण्डूकनादनशिवियक्वावेधचक्रनाडवज्रकूपकानर्त्त-  
करणलेखाकर्षकाना मौलम् ॥ टिप्पकादानस्य दुष्कृतम् ॥ गोलघटवर्धनी  
शरावे ॥ क्षोलसूपयुपमण्डे च सत्यामपि वक्षतायाम् ॥ अजलहर्षणे  
च ॥ तद्दत्तं तद्भूतकारणम् ॥ औद्धत्यरतप्रत्यनुभवच्छन्देन ॥ तस्मात्  
प्रहादनच्छन्देनावतारणादानापत्तिः ॥ तरणशिक्षायां तिर्यगायतं वा  
व्यायामे ॥ जिह्वादायिषया तसेषु लेखकर्षणे ॥

॥ [ इति ] द्रवहर्षणम् ॥ ६४ ॥

( ६५ ) स्त्रीसहस्रव्यायाम् ।

मातृग्रामेण सार्द्धमेकस्त्रिचगारे मिद्वानकान्तौ निशयां(या?) ॥  
अन्तः ॥ प्राग् दुष्कृतम् ॥ कुकुटिप्रमाणमेतत् कृत्वेऽन्तः ॥

॥ [ इति ] स्त्रीसहस्रव्यायाम् ॥ ६५ ॥

( ६६ ) भीषणे ।

हासप्रेक्षयापि भीषणच्छन्देन भयनिमित्तोपसंहारपूर्वकं वित्तपने ॥ मयंकर-  
स्यामुज्जोष्यमिति भिक्षोः परेणाप्यनुत्पत्तावपि भयस्य ॥ मौलमन्सन(मन?)  
आपस्य ॥ तद् यथा प्रेतपिशाचकुम्भाण्डकटपूतनत्याख्यापिनां कीटनं(?)  
कीटकीटानामङ्गारिकावर्णानां दग्धस्पृणानिभानां रूपाणाम् ॥ सिंहव्याघ्रद्वीपि-  
कोकपटारुभ्रष्टोते(?)काशब्दानाम् ॥ उच्चारप्रसानस्यवतकटगन्धानाम् ॥  
किटकिलिजकुतपस्पर्शानाम् ॥ मन आपस्य दुष्कृतम् ॥ तद्यथा  
देवनागगन्धर्वयक्षकिन्नरभहोरगत्वख्यापिनाम् ॥ घनिश्रेष्ठिसार्थवाहादिरूपा-  
णाम् ॥ वीणादिशब्दानाम् ॥ अगुरुचन्दनकुंकुमतमालपत्रगन्धानाम् ॥

प्रद्वपटप्रावरंशुकदुकूलकौटुम्बकस्पर्शानाम् ॥१०॥ । उत्सृष्टसंवेजनार्थताम् ॥११॥ ।  
तस्मात् संवेजनार्थं नरकतिर्यक्प्रेतमनुष्यकथादावन[ि]पत्तिः ॥१२॥ ।

॥ [ इति ] भीषणम् ॥ ६६ ॥

( ६७ ) गोपने ।

इदं प्रग्रज्यासंतकपायचीवरपोणिकाकंसिकाकायबन्धनादिश्रामणकृजीवितपरि-  
स्कारनिर्दाने ॥१३॥ । निर्दापने च ॥१४॥ । उत्सृष्टहितकामतया ॥१५॥ ।

॥ [ इति ] गोपनम् ॥ ६७ ॥

( ६८ ) दत्तोपजीवने ।

दत्तस्य भिक्षोर्निर्देयं चीवरस्य विना तदनुज्ञानं परिभोगे ॥१६॥ । न चेदस्य  
तन्निदानं प्रीतेस्सम्भावनम् ॥१७॥ ।

॥ [ इति ] दत्तोपजीवनम् ॥ ६८ ॥

( ६९ ) अस्वास्थ्याने ।

ध्वंसतच्छन्देन भिक्षोर्विनिधायां संज्ञं संघावशेषापतनस्य विज्ञप्तौ ॥१८॥ । लेशे-  
नापि ॥१९॥ ।

॥ [ इति ] अस्वास्थ्यानप्रायश्चित्तिकम् ॥ ६९ ॥

( ७० ) स्त्रीसहगमने ।

कामतोऽध्वन्युद्धौ ॥२०॥ । प्रतिक्रोशम् ॥२१॥ । प्रतितदद्दं दुष्कृतस्य ॥२२॥ । उत्सृ-  
ज्यातियात्र[य]न्तीम् ॥२३॥ । नष्टञ्चे(श्चै?)नमध्वनोऽध्वन्यवतारयन्तीम् ॥२४॥ ।  
अशक्तस्य वा निर्बोद्धम् ॥२५॥ ।

॥ [ इति ] स्त्रीसहगमनम् ॥ ७० ॥

( ७१ ) स्तेयसहगमने ।

ग्रामयातकैथौरैः शुल्कमञ्जकैर्वा वणिग्भिः ॥२६॥ । कापटिकैः स्तेयप्रव्रजितैः  
दुष्कृतम् ॥२७॥ ।

॥ [ इति ] स्तेयसहगमनम् ॥ ७१ ॥

( ७२ ) ऊनोपसंपादने ।

ऊनविंशतिवर्षतायामुपसंपाद्यस्य ॥२८॥ । उपाध्यायत्वेनोपसंपादने ॥२९॥ । नासा-  
वेनं पूर्णतां न पृच्छेत् ॥३०॥ । नान्ये ॥३१॥ । नानि(वि?)ज्ञाप्येनामुपसंपादयेयुः ॥३२॥ ।  
सर्वथा परिपूर्वण(र्ण?)विंशतेरुपसंपा(प?)दो रूढिः ॥३३॥ । इतरस्य परिपूर्ण-  
संज्ञतायाम् ॥३४॥ । अमत्यस्मि(तिम?)तिविमतिषु च ॥३५॥ । ज्ञाने च तद्  
ध्वंसः ॥३६॥ । न चेदद्दः प्राप्तपुरेः ॥३७॥ । अपि गर्भाधिकमासकैः सावर्ध(र्?) ॥३८॥ ।

॥ [ इति ] ऊनोपसंपादनम् ॥ ७२ ॥

( ७३ ) भूमुद्घाते ।

खननखाननयोः ॥३९॥ । मृद्भवः ॥४०॥ । भुक्त्वा चतुरङ्गलमात्रकीलकनिखननं

नवरुमिकस्य नक्षत्रप्रयोगेनासन्निहितकल्पकारस्य ॥ जातिक्र(?)चेत् मौ-  
लम् ॥ न चेद् दुष्कृतम् ॥ श्रीन् मासान् पर्युपितासंहतिः पूर्वा ॥  
वृष्टिकान्तारं चेत् ॥ पठन्यदा ॥ नाभृत्वं(?)रुन्यायां मन्वेत् ॥  
प्रभृत्ये(ते?)न मधुदायेषु लक्षणां प्रभावरुम् ॥ तस्मात् फात्स्पर्शमेव स  
न्यूनान्यत्र घृतायाम् ॥ नष्टतादग्धत्वे ॥ अर्द्धत्वं नष्टस्य ॥ चटितकानां  
च पुरिवीपर्यटकरूलरुन्धातल्लेषानाम् ॥ गडकवाल्लुकाद्य[?]धिक्ये [ण]-  
व ॥ क्रियाणां च ॥ कीलोत्पाटनलेखरुर्षणभृत्कर्णकार्पिगोमयोत्पाटन-  
पंकारुम्पनतल्लप्रगोलाद्युत्पाटनलोणिकाशतनात्मिकानाम् ॥ विगोपनमतेर-  
श्रैतत् ॥ तस्माद् गणनन्यसनाद्यभिप्रायस्यानापत्तिः ॥

॥ [ इति ] भूम्युदातः ॥ ७३ ॥

( ७४ ) प्रवारितार्थागतिमेवायाम् ।

नातियाचेत् ॥ युक्तमनारोचितकालस्य तदसंमाननायां प्रतीष्टमोजनगृहो-  
पसंक्रमणम् ॥ उद्योजनं च परिवेषणेऽतिपचौ कालस्य ॥ न तत्र व्यज-  
नस्याद्रियेत ॥ स्त्रीवृथात् प्रत्येकप्रवारणाम् ॥ सप्रवारणेऽपि संघे ॥  
सर्वकालां च ॥ विना मर्यादास्थापनेन प्रवारितवतोऽन्यथा पौनःपुन्येनात्यर्थतया  
चोद्धमकृतप्रवारणात् चतुर्थमासपरिसमाप्तेरुद्धं प्रजाप्ताम्यवहृता ॥ विजज्ञौ  
दुष्कृतम् ॥ अनापत्तिः श्लान्धे ॥ ज्ञातो(?)च ॥ पृथक्त्वं पूर्वस्य विप्र-  
मात् ॥ अप्रवारितदोषकारित्वं तस्य ॥ पुरस्तादपि येन न प्रवारितः ॥

॥ [ इति ] प्रवारितार्थातिसेवा ॥ ७४ ॥

( ७५ ) शिक्षोपसंहारप्रतिक्षेपे ।

अभिज्ञातायाम् ॥ आख्यातुः ॥ शिक्षायाम् ॥ अस्यान्ते शिक्षितस्य  
मि(?)त्याख्या दयमानायामुद्देशेन वा भिक्षुणां न शिक्षिष्यामीत्येतत् कारणभावेन  
निवेदयितुरज्ञतामुत्थापयतो वचनस्योदाहृतौ ॥ सौम्यां दुष्कृतस्य ॥

॥ [ इति ] शिक्षोपसंहारप्रतिक्षेपः ॥ ७५ ॥

( ७६ ) उपश्रवणते ।

भिक्षोरधिकरणसंप्रधारणस्य भिक्षुभिरुपश्रुत्यर्थमुत्सृज्योपशमनञ्छन्देनाव-  
धाने ॥ प्रतिसंवेदनायां शब्दस्य दुष्कृतम् ॥ अर्थस्य मौलम् ॥ क्षो(?)  
पकरणप्राह्वये(?)ण चेत् ॥ अर्थान्तरवशांमामुपश्रुतौ चेतनादूर्ध्वम्पदच्छटो-  
त्काशनशब्दादिभिरचेतयतो न चेत् मुग्धः शमार्था वा नियतमात्तायां  
पातः ॥ न कलिमुपोद्बलयेत् ॥ नोपश्रुणुयात् नैनं दुर्बन्तमनुपरिचाल्य  
तिष्ठेत् ॥ नोपशान्त्यै न प्रयतेत् ॥

॥ [ इति ] उपश्रवणतम् ॥ ७६ ॥



( ७७ ) सामग्रीभङ्गे ।

ज्ञान्यादिकर्मणि संनिपतितस्यानवलोक्य भिक्षुं प्रक्रान्तौ श्रवणोपविचारातिक्रमे  
मूलम् <sup>११७</sup> । पुरस्ताद् दुष्कृतम् <sup>११८</sup> । विनाथेन युक्तेनाथेनापक्रान्तौ <sup>११९</sup> । कृतत्वे  
ज्ञेः <sup>१२०</sup> । अधर्म्येऽथे च कर्मणः <sup>१२१</sup> । श्रवणदेशानतिक्रमेच्छायामनापत्तिः <sup>१२२</sup> ।

॥ [ इति ] स[र]मग्रीभङ्गः ॥ ७७ ॥

( ७८ ) अनादरवृत्ते ।

स्थानगमनशयनासनविहारग्रहणभीष(?)तद्विपर्ययादेरुपनीतस्यार्थस्थानादराद्  
विना धर्म्यसंज्ञामिदाने व्यतिक्रान्तौ <sup>१२३</sup> । भिक्षुसंघेन मौलम् <sup>१२४</sup> । आचार्यो-  
पाध्यायैर्दुष्कृतम् <sup>१२५</sup> । अधर्म्यत्वे ज्ञेः तत्त्वं कथावपातनस्य <sup>१२६</sup> । सुखं  
संघस्य तद्व्यवहारकः <sup>१२७</sup> । संघवद् बुद्धः <sup>१२८</sup> । न राजाहंरसंघस्यविराणामाज्ञां  
कोपयेत् <sup>१२९</sup> ।

॥ [ इति ] अनादरवृत्तम् ॥ ७८ ॥

( ७९ ) मद्यपाने ।

पाने मदनीयस्य <sup>१३०</sup> । ज्युतिरस्य तत्त्वात् काथे <sup>१३१</sup> । विद्यते खोलवकस-  
भक्षणे तत्प्रवेशः <sup>१३२</sup> । अर्द्धत्वं किण्वपिण्डिकायाम् <sup>१३३</sup> । मदनीयानां मूलगण्ड-  
पत्रपुष्पफलानां मद्यगन्धरसानां वा मदघित्वाणां पेयानाम् <sup>१३४</sup> । निर्दोषो वर्णमात्रेण  
मद्यस्य सदृशम् <sup>१३५</sup> । प्रयोगवद् गण्डूषधारणगात्रभक्षणो <sup>१३६</sup> । ग्लान्येना-  
पत्तिः <sup>१३७</sup> ।

॥ [ इति ] मद्यपानम् ॥ ७९ ॥

( ८० ) अकालचर्यायाम् ।

अकालतायाम् <sup>१३८</sup> । अनवलोकितसद्भिक्षोः <sup>१३९</sup> । ग्रामप्रवेशे <sup>१४०</sup> । न चेद्-  
त्यात्ययिककार्यसन्निपातः <sup>१४१</sup> । अन्यत्र सञ्चारेऽत्र दुष्कृतम् <sup>१४२</sup> । अभावेऽत्र  
भिक्षोस्तद्वद् भिक्षुणी <sup>१४३</sup> । असाः श्रामणेः <sup>१४४</sup> । अस्य शिक्षमाणा <sup>१४५</sup> ।  
तस्याः श्रामणेरी <sup>१४६</sup> । असत्प्रमवोबुः <sup>१४७</sup> । सीमान्तरस्थोत्क्षिप्तान्यपक्षाणां  
च <sup>१४८</sup> । अद्वया त्वनापत्तिः <sup>१४९</sup> ।

॥ [ इति ] अकालचर्या ॥ ८० ॥

( ८१ ) कुलचर्यायाम् ।

चतुर्थादायकाले कुलोपक्रमणे <sup>१५०</sup> । तन्मुखिकया च संघोपनिमन्त्रणेना-  
सदनागमनवशात् परिवेषोऽतिपात्य इत्यपरिप्राप्य दावति तृतीयप्रभृतौ <sup>१५१</sup> ।

॥ [ इति ] कुलचर्या ॥ ८१ ॥

( ८२ ) राजकुलरात्रिचर्यायाम् ।

अप्रमीतत्वे <sup>१५२</sup> । अन्त्यारुणस्यैतदत्रानुद्गतत्वम् <sup>१५३</sup> । अन्तःपुरनिवासस्थान-

सम्बद्धतायाम् ॥ अतदा प्रस्तुतानपि ॥ प्रतिरात्रि ॥ तत्कीलोपवि-  
चारान्तोऽतदादिः ॥ एष राजकुलनगरयोः ॥ राजकुलस्थानेन च ॥  
नागरेण दुष्कृतम् ॥ तदर्थता चेत् ॥ द्वितीयं चेदत्राग्र्यम् ॥ न चेद्  
राजदेविकुमारामत्यान्तरायविनयनयन ॥ नानुश्राव्य राजकुलं प्रवि-  
शेत् ॥

॥ [ इति ] राजकुलसत्रिचर्या ॥ ८२ ॥

( ८३ ) शिक्षापदद्रव्यताध्याचारे ।

वर्त्तमाने प्रातिमोक्षोद्देशेऽनुभूततद्रसासंविद्येन मनसा संप्रति मया ज्ञातमय-  
मप्यत्र धर्मो विद्यत इत्यसोक्ती ॥ अन्यव्यञ्जनेनोद्देशे साधारणीं प्रति  
दुष्कृतम् ॥ मैत्र्यां च नोक्ता मापमाणायाम् ॥ अनापत्तिरसा-  
धारणी ॥ असत्कृत्य प्रातिमोक्षोद्देशश्रुतिश्रुपनयनं संवेजयेयुः ॥

॥ [ इति ] शिक्षापदद्रव्यताध्याचारः ॥ ८३ ॥

( ८४ ) सूचीगृहकसंपादने ।

दन्तास्थिविषाणमयसूचीगृहककरणकारणम् ॥ कृतलामपरिमोगयोर्ना-  
पत्तिः ॥ नाष्टाभिन्नता देशनां प्रतिगृहीयात् ॥ अदेशितत्वमभित्ता  
चेत् ॥ उत्तरेष्वप्येतत् पञ्चप्रच्छेदोपसंहितम् ॥ उद्गा(?)लेन द्वितीये ॥

॥ [ इति ] सूचीगृहकसंपादनम् ॥ ८४ ॥

( ८५ ) पादकसंपादने ।

न विकटपादिकायां खट्वायां शयीत ॥ न शय्यास्थानगतमञ्चानुपहिते  
प्रदेशे पादौ प्रक्षालयेत् ॥ सन्निहितपदत्राणः ॥ अन्यश्च मुक्त्वा शिरः  
पादान्तौ ॥ नोच्चशयनमहाशयने निपीदेन्निपद्येत ॥ कुर्वितासम्भवेऽन्यस्य  
पूर्वमन्तर्गृहे ॥ कल्पेत सप्रतिपादके शय्याम् ॥ न पीठातिपीठे निपी-  
देत् ॥ प्रमाणादूर्ध्वं करणकारणे ॥ परेषु च द्वितीयात् त्रिषु ॥  
मञ्चपीठयोः साधिकयोः ॥ उत्तरे च ॥ पादकानां ॥ हस्त एष माट-  
निकाप्रदेशवर्ज्यानां प्रमाणम् ॥ सौगततृतीये ॥ उत्तरेषु च ॥

॥ [ इति ] पादकसंपादनम् ॥ ८५ ॥

( ८६ ) अवनोहे ।

तूलेनोपनाहे ॥ पञ्च तूलानि शान्मलमाकं काशमयं धौकमैरकं च ॥

॥ [ इति ] अवनोहः ॥ ८६ ॥

( ८७ ) निषदनगते ।

निषदनस्य प्रमाणस्य दर्ध्यस्य हस्तत्रयम् ॥ अध्यर्द्धाचोर्ध्वमकारयतः ॥

वित्तरस्य हस्तद्वयं पद्माङ्गुल्यः ॥ ८० ॥ दुष्कृतमस्य न्यूनसाधिष्ठानम् ॥ ८१ ॥  
उत्तरस्य च द्वयस्य ॥ ८२ ॥

॥ [ इति ] निपदनगतम् ॥ ८७ ॥

( ८८ ) कण्डूप्रतिच्छादने ।

कण्डूप्रतिच्छादनस्य ॥ ८९ ॥ पदकं हस्तानां त्रयम् ॥ ९० ॥

॥ [ इति ] कण्डूप्रतिच्छादनगतम् ॥ ८८ ॥

( ८९ ) वर्षाशाब्द्याम् ।

वर्षाशाब्द्याः ॥ ९० ॥ नवकं त्रयमष्टाङ्गुलयः ॥ ९१ ॥

॥ [ इति ] वर्षाशाब्दीगतम् ॥ ८९ ॥

( ९० ) सुगतचीवरे ।

पञ्चत्रिकं शांस्तुः स्वहस्तेन चीवरम् ॥ ९२ ॥ तत्प्रमाणस्यातत् त(ति?)नोद्धं वा  
चीवरस्य करणकारणे ॥ ९३ ॥ नैतद् वारयेत् ॥ ९४ ॥

॥ [ इति ] सुगतचीवरगतम् ॥ ९० ॥

॥ शुद्धप्रायश्चित्तिकानि समाप्तानि ॥

### ॥ ५, प्रातिदेशनीयम् ।

अज्ञातिकायाम् ॥ ९५ ॥ मिश्रुष्याः ॥ ९६ ॥ स्वप्रतिपादितसांपरिवेषेण स्वयं  
शामस्येन प्रतिगृह्य स्वदनीय-भोजनीयसाम्यवहारे ॥ ९७ ॥ न वर्षकस्य  
शाम्यत्वम् ॥ ९८ ॥ न मिश्रवासास्य ॥ ९९ ॥ अर्द्धत्वमाकाशस्य ॥ १०० ॥ नासन्निधौ  
निक्षेपुरादानं निक्षिप्तस्य तस्मात् ॥ १०१ ॥

॥ [ इति ] मिश्रुणीपिण्डकग्रहणं नाम प्रथमं प्रातिदेशनीयम् ॥ १ ॥

सांधिमिह देहि पानकं भोजनं भूयः चेत्यादि तस्मिन् भिस्वन्तरे वा व्यप-  
देशप्रवृत्तमिश्रुष्यवस्थापनकर्तृ ॥ १०२ ॥ न चेत् तन्मुखिकया तज्जातिना वा  
निमग्नणकम् ॥ १०३ ॥ उत्सृज्य गन्धव्यपदेशमदत्तदापनं च ॥ १०४ ॥ आगमयस्य  
तावेद् भग्निनि यावेद् मिश्रुष्यो भुज्जंत इत्यनाज्ञायां तस्यां मिश्रुष्या येन केन-  
चिदसहभुजा पितृप्रभृतिमिश्रुनिमग्नणकमुक्तौ ॥ १०५ ॥ कुले ॥ १०६ ॥ उपचारप्राप्तं  
चेत् सावचनस्य मौल्याः ॥ १०७ ॥ न चेद् दुष्कृतस्य ॥ १०८ ॥ तदा (तोऽ?) प्राज्ञितयायां  
व्यवस्थापनम् ॥ १०९ ॥ तस्मात् प्रश्नार्थोत्सुक्यमोपधेत ॥ ११० ॥ वृद्धाप्रवृत्तावत्र नवकः  
प्रवर्तते ॥ १११ ॥

॥ [ इति ] पंकति(क्ति?) वैपर्ययादानयारित्तये भुक्तिद्वितीयं प्रातिदेशनीयम् ॥ २ ॥

श्रोत्रस्य विधातश्चेदस्य दाने कुलशिक्षासंगृहीतं दैत्युः ॥ ११२ ॥ प्रज्ञस्यां प्रतिग्र-  
हणं च ॥ ११३ ॥ दत्तैतदधिकं शुद्ध्या निवेशनगमनासनपरिभोगधर्मदेशनानि

कुर्यात् १०० । न रिक्तपात्रः प्रविशेत् १०१ । दद्यादस्य याचमानेभ्यो चालेभ्यः  
पिण्डपात्रात् पूषिकामसरूढाम् १०२ । अर्थिनि प्रतिप्रथमभणम् १०३ । दत्ताशिक्षा-  
संबृतेः कुलात् प्राकृतदानादनिमञ्चितश्च प्रतिगृह्य खादनीयभोजनीयपोरुत्सृज्य-  
कफटिकामूलकहरितकमविधात्यभ्यवहृता १०४ ।

॥ [ इति ] कुलशिक्षाभङ्गप्रवृत्तिः तृतीयं प्रातिदेशनीयम् ॥ ३ ॥

सम्मन्येरन् वनप्रतिसंवेदकः भिक्षुः १०५ । अर्थयोजनमसौ समन्ततः  
प्रत्यवेक्षेत् १०६ । सभयतायां धूमं कुर्यात् १०७ । पताक[ि] उत्स्र(च?)येत् १०८ ।  
पत्रवैभङ्गकानि मार्गे स्थापयेत् १०९ । दधुरसै सत्यार्थिकत्वे पुरोभक्तिकाम् ११० ।  
सहायकः १११ । वृत् । अप्रतिसंवेदिततायां वनस्य ११२ । अरण्ये वह्निरामस्य  
प्रतिगृह्य खादनीयभोजनीयं चाम्यवहरेत् ११३ । अर्थकृत्वं दक्षासम्वादे ११४ ।  
अन्यत्र च मयस्थानाद् वर्तमानतायाम् ११५ ।

॥ [ इति ] वनविषयगतं चतुर्थं प्रातिदेशनीयम् ॥ ४ ॥

॥ समाप्तानि च प्रातिदेशनीयानि ॥

### § ६, क्षुद्रशिक्षापदानि ।

तथा निवसनं निवसीत यथा परिमण्डलं संस्थितं स्यात् ११६ । न चाल्युक-  
ष्ट्रत्वात्पकृष्टम् ११७ । नांशेन शुण्डावलम्बितम् ११८ । नोद्गतम् ११९ । न फणवत्  
प्रत्यागतम् १२० । न सम्पत्तिकया स्थितम् १२१ । तथा चीररं प्रावृणीत यथाऽस्वाद्यं  
त्रयं स्यात् १२२ । सुसंबृतोऽन्तर्गृहं गच्छेत् १२३ । सुप्रतिच्छन्नोऽल्पशब्दोऽनुदिक्ष-  
त्तचक्षुः युगमात्रदर्शी १२४ । नोद्गुण्ठिकयाकृतिकया नोत्कृष्टिकया १२५ । न  
वितस्तिकया १२६ । न पर्यस्तिकया १२७ । नोत्कृष्टिकया १२८ । नोद्गुण्ठिकया १२९ ।  
नो लङ्घिकया १३० । नोत्कृष्टिकया १३१ । न स्तम्भाकृता १३२ । न काय-  
प्रचालकम् १३३ । न बाहुप्रचालकम् १३४ । न शीर्षप्रचालकम् १३५ । नांसे ढाँकि-  
कया १३६ । न हस्तसंरगि(लि?)कया १३७ । नात्रानसुज्ञाता त आसने  
निपीदेत् १३८ । नाप्रत्यवेक्ष्य १३९ । न सर्वकार्यं समवधाय १४० । न सक्थिनि  
सक्थि १४१ । न गुल्के गुल्कम् १४२ । न संक्षिप्य पादौ १४३ । न विक्षिप्य १४४ ।  
न विडङ्गिकया १४५ । न करे कपोलं दत्त्वा १४६ । न प्रतिपुटकमासनमुत्सर्ष-  
येत् १४७ । सर्वं सरकृत्य पिण्डपातं प्रतिगृह्णीयात् १४८ । न समतित्तिकम् १४९ ।  
समद्वेषिकम् १५० । सावदानम् १५१ । नानागते खादनीये भोजनीये पात्रयुपनाम-  
येत् १५२ । नोपर्यस्य धारयेत् १५३ । सत्कृत्य पिण्डपातं भुञ्जीत १५४ । नाति-  
सुहृत्कैरालोपैः १५५ । नातिमहद्भिः १५६ । नानागत आलोप मुखद्वार[वि]ः-

वृषीत् <sup>(१०)</sup> । न भूयस्कामतयौदनेन सूपिकं द्रूपिकेन चौदनं प्रतिच्छादयेत् <sup>(११)</sup> ।  
 ननुचुकारम् <sup>(१२)</sup> । न धुन्धुकारम् <sup>(१३)</sup> । न सुस्सुकारम् <sup>(१४)</sup> । न सालोपेन मुखेन  
 वाचं निश्चारयेत् <sup>(१५)</sup> । न सिस्थपृथक्कारं <sup>(१६)</sup> । नावर्णकारम् <sup>(१७)</sup> । न गच्छापहा-  
 रम् <sup>(१८)</sup> । न कवडच्छेदम् <sup>(१९)</sup> । न जिह्वास्फोटनिधारं <sup>(२०)</sup> । न स्तृपाकृत्यवमर्दम् <sup>(२१)</sup> ।  
 न हस्तपात्रावलेहसनधून(?)संतोलम् <sup>(२२)</sup> । पात्रसंज्ञी <sup>(२३)</sup> । नावध्यानप्रेक्ष्यन्तरि-  
 कस्य भिक्षोः पात्रमवलोकयेत् <sup>(२४)</sup> । न सामिपेण पाणिनोदकस्थालकं प्रति-  
 गृह्णीयात् <sup>(२५)</sup> । न सामिपेणोदकेनान्तरिकं भिक्षुं सिञ्चेत् <sup>(२६)</sup> । नैतदन्तर्गृहे  
 छोरयेदनवलोक्य गृहपतिम् <sup>(२७)</sup> । न पात्रेण विघसं छोरयेत् <sup>(२८)</sup> । त्रिः प्रक्षाल्य  
 पात्रमार्पिभिर्गाथाभिरभिमन्त्र(व्य?)पादोदकं दद्यात् <sup>(२९)</sup> । नानास्तीर्णं पृथिवी-  
 प्रदेशे पात्रं स्थापयेत् <sup>(३०)</sup> । नोत्थितो निर्मादयेत् <sup>(३१)</sup> । नास्तिदुभयमतदो(?)  
 कुर्यात् <sup>(३२)</sup> । न प्रपातेन प्राग्भारेण न चतुष्पथे <sup>(३३)</sup> । नानुश्रो(स्रो?)तोनेन  
 नद्याहार्यहारिण्याः पानीयं गृह्णीयात् <sup>(३४)</sup> । प्रागुच्चारप्रस्तावाद्ग्लानाय <sup>(३५)</sup> ।  
 तत्रारलानः <sup>(३६)</sup> । नोत्थितो निपण्णाय धर्मं देशयेत् <sup>(३७)</sup> । न निपण्णो  
 निपन्नाय <sup>(३८)</sup> । न नीचतरासने निपण्ण उच्चतरके निपण्णाय <sup>(३९)</sup> । हीनप्रणीत-  
 तोऽप्येते <sup>(४०)</sup> । न पृष्ठतो गच्छन् पुरतो गच्छनेते(?) <sup>(४१)</sup> । नोत्पथेन पथम् <sup>(४२)</sup> ।  
 नोद्ग्रन्थिकादिकृताय <sup>(४३)</sup> । न हस्त्यथयानशिष्टिकामञ्चपादुकारूढाय <sup>(४४)</sup> ।  
 न सौलसौल्युष्णीपवेष्टितमालाशिरसे <sup>(४५)</sup> । न छत्रदण्डशस्त्रखट्वायुधपा-  
 णये <sup>(४६)</sup> । न सन्नद्धाय <sup>(४७)</sup> । नोत्थित उच्चारप्रसावं कुर्यात् <sup>(४८)</sup> । न हरिते  
 पृथिवीप्रदेशे <sup>(४९)</sup> । न छोरयेत् <sup>(५०)</sup> । खेटसिंघानकवान्तं रिक्तञ्च <sup>(५१)</sup> ।  
 नोदके <sup>(५२)</sup> । न पुरुषदम्भादूर्ध्वं वृक्षस्थाधिरोहैदन्यत्रापदः <sup>(५३)</sup> ।

अथ भिक्षुणीविभंगः । पाराजयिकम् ।

प्रागापत्तियोमे वचनाद् भिक्षुण्याम् <sup>(१)</sup> । चतुष्टयं स्वीकारे <sup>(२)</sup> । चक्षुर्जा-  
 न्वन्तरालेन <sup>(३)</sup> । स्पर्शस्य <sup>(४)</sup> । पुंसः <sup>(५)</sup> । मैधुनरागेन <sup>(६)</sup> । अङ्गान्तरेण <sup>(७)</sup> ।  
 स्पूलम् <sup>(८)</sup> । हासोऽन्येन चेतसा <sup>(९)</sup> । पुंसश्चेत् तदानीं तत्र विज्ञायमानं तथै-  
 तत् <sup>(१०)</sup> । न चित्ततोऽपि <sup>(११)</sup> । अनापत्तिरस्त्रीकृतौ <sup>(१२)</sup> । अदुष्टं पुंसस्पर्शनम् <sup>(१३)</sup> ।  
 न बालमप्यन्यत्र स्पृशेत् <sup>(१४)</sup> । प्रतिबलत्वे सेवायां पुंसः[ः]कामोपसंहिते <sup>(१५)</sup> ।  
 तद्दत्तार्थपरिज्ञाने वाचि परिपूर्णकारित्वम् <sup>(१६)</sup> ।

॥ [ इति ] स्पर्शपाराजयिकम् ॥ १ ॥

पञ्जरोपनिशेषे <sup>(१)</sup> । रक्तया <sup>(२)</sup> । प्रत्युपस्थितं सेवायां रक्तं तस्यां पुमांसं  
 तत्राप्यन्तायाम् <sup>(३)</sup> । औद्धत्यस्य रक्तेन सार्द्धं रक्तया करणे स्पूलम् <sup>(४)</sup> । द्रव्यस्य  
 कादर्पस्य <sup>(५)</sup> । उद्देशस्य <sup>(६)</sup> । अत्र प्रतीष्टौ च <sup>(७)</sup> । संकेतस्य <sup>(८)</sup> ।  
 निमित्तस्य <sup>(९)</sup> । आगमनगमनप्रवृत्तस्य चास्य <sup>(१०)</sup> । स्वीकारे <sup>(११)</sup> ।

॥ [ इति ] पञ्जरोपनिशेषपाराजयिकम् ॥ २ ॥

पाराजयिकस्य भिक्षुण्याः प्रतिच्छादने १७ ।

॥ [ इति ] प्रतिच्छादनपाराजयिकम् ॥ ३ ॥

निश्चितस्यावसारणयात्रापामुत्क्षिप्तस्य १८ । भिक्षोः कृतानन्दनार्हसंबृतः (?)  
ज्ञात्वाऽतो निवारकत्वस्य प्रतिनिःसर्गे १९ । परकन्त(?)त्वसेन भेदेन २० ।

॥ [ इति ] निवारणपाराजयिकम् ॥ ४ ॥

सघावशेषाः ।

संचारित्रम् २१ । आमारिकत्वे भिक्षुण्याः प्रलोभनं स्थूलम् २२ । वेशस्य  
चान्यया वाहने २३ । नातः पण्येन दास्याः प्रेषणस्य बहिर्भारः २४ ।

॥ [ इति ] भिक्षुणीसांचारित्रसंघावशेषः ॥ १ ॥

अमूलरुलेशिके २५ । पुंस्त्वेऽस्तित्वमत्र पुंस्त्वम् २६ । किञ्चित्कक्षीकारे २७ ।  
रक्तया २८ । पुरुषात् २९ । रक्तादरक्ताच्च ३० । अरक्तया स्थूलम् ३१ ।  
दुष्कृतमरक्तात् किञ्चित्कग्रहः ३२ । न रक्तादरक्तायाः किञ्चित्कक्षीकारे दोष  
इति भिक्षुर्णानोधने ३३ ।

॥ [ इति ] किञ्चित्कग्रहसमादापनम् ॥ २ ॥

चतुर्षु उत्तरेषु विना भिक्षुण्याः ३४ । न तृतीयत्वं शिक्षमाणत्वं तृतीयोद्यः  
श्रामणेरी ३५ । निर्दोषः कामविप्रयोगः ३६ । अन्तरायापातनशतया च ३७ ।  
प्रयोगत्वं प्राच्यन्ततः काले गतस्य ३८ । अस्तद्गमान्तो दिवसान्तः ३९ ।  
रात्रौ बहिर्वर्षकाद् भावे ४० ।

॥ [ इति ] राधिविप्रवासः ॥ ३ ॥

दिना ४१ । चीर(विच)रेदेकाकिनी ज्ञातिगृहशुक्तिनिमित्तं दुर्भिक्षे लब्धायां  
ज्ञातिभिस्साद्धं सन्बन्धोपविचारसंश्रुतौ ४२ । द्युरेनाम् ४३ ।

॥ [ इति ] विवाचिप्रवासः ॥ ४ ॥

। अन्नप्रतिपत्तौ ४४ । अध्यामत्तारः ४५ । नदीपारसन्तरणे ४६ । पारप्राप्तौ  
बानुभ्याम् ४७ । स्थूलमर्वाक् ४८ । दुष्कृतं हल्यापारस्य ४९ ।

॥ [ इति ] नदीलघनम् ॥ ५ ॥

प्रवाजने ५० । गणसंभतस्वामी परित्यक्तराजा स्वानुज्ञतायाः ५१ । मारणं  
प्रति ५२ । लुपाध्यायिकत्वेन ५३ । जानन्त्येत् ५४ ।

॥ [ इति ] प्रवाजनम् ॥ ६ ॥

मृतधनोद्ग्रहणे ५५ । अनापचिः साधिकस्य ५६ । अल्पायासेन चेत् ५७ ।

॥ [ इति ] उद्ग्रहणम् ॥ ७ ॥

चहिःसीद्भ्यवसारणे १७ ।

॥ [ इति ] अवसारणम् ॥ ८ ॥

रत्नप्रत्याख्यानमिदं तुल्यत्वमन्यश्रमणानां तत्र ब्रह्मचर्यं चरिष्यामित्यस्या-  
पचनप्रवृत्तेरविरतौ १८ । संघभेदप्रवृत्तेरिव १९ । उत्तरायश्च १९० ।

॥ [ इति ] प्रत्याख्यानम् ॥ ९ ॥

छन्दादिगामितानुयुक्ते भिक्षुणीनाम् १९१ । कलहभण्डनविग्रहविवादाद्  
भिक्षुणीभिः सार्द्धं विचारणम् १९२ ।

॥ [ इति ] कलहवृत्तम् ॥ १० ॥

संसृष्टविहृतौ भिक्षुण्याः १९३ । औद्धत्यद्रवकातर्यहेतुभूतयोः १९४ ।

॥ [ इति ] स्त्रीसंसर्गगतम् ॥ ११ ॥

तत्संसर्गसमादापने १९५ ।

॥ [ इति ] समादापनम् ॥ १२ ॥

संघभेदादेश्चतुष्टया[द्] भिक्षुणी(?)गतात् १९६ ।

॥ [ इति ] संघभेदादिचतुष्टयम् ॥ १३-१६ ॥

॥ [ इति ] संपाकशेषः समाप्तः ॥

नैस्तस्मिन्नाः ।

जातरूपरजतरूपिकफयविक्रयं नहनतत्रवायद्वयाल्लेद(?)परिणमनसन्निधिगतं  
च १९७ ।

॥ [ इति ] जातरूपरजतादिदत्तकम् ॥ १-१० ॥

मिक्षोर्धावनादावतः प्रतिग्रहे १९८ ।

॥ [ इति ] प्रतिग्रहः ॥ ११ ॥

भिक्षुण्यै दत्त्वा १९९ । न देवच्छन्दं धारयेत् २०० । अतिरेकपात्रस्यैकाहा[द्] इ-  
रुर्ध्वं धारणे २०१ ।

॥ [ इति ] पात्रधारणम् ॥ १२ ॥

प्रत्यर्द्धमासमायेंऽहन्यनधिष्ठितावाधिष्ठानिकस्य २०२ ।

॥ [ इति ] अनधिष्ठानम् ॥ १३ ॥

फल्गुनान्त्यदिवसादवाक् कठिनोद्वारे २०३ । अनापचिश्चिरमुपितक-  
भिक्षुण्यर्थतायाम् २०४ ।

॥ [ इति ] कठिनोद्वारः ॥ १४ ॥

अनुद्वारे २०५ । तन् २०६ ।

॥ [ इति ] कठिनानुद्वारः ॥ १५ ॥

हिरण्य-मुयर्णाविज्ञापने २०७ ।

॥ [ इति ] रत्नविज्ञापनम् ॥ १६ ॥

अन्वार्थं लब्धस्य चीवरसामिपीकृत्याम्यवहरणार्थमधिष्ठानम् <sup>१०७</sup> ।

॥ [ इति ] चीवरमहरणगतम् ॥ १७ ॥

चीवरशयनासनवर्षकार्यञ्च <sup>१०८</sup> । यस्य कस्य चित् <sup>१०९</sup> ।

॥ [ इति ] चीवरदिभक्षणगतम् ॥ १८ ॥

भिक्षुणी महाजनार्थं समादाप्य स्वत्र(तः?) परिणमनम् <sup>११०</sup> ।

॥ [ इति ] महाजनोद्देशिकाधिष्ठानम् ॥ १९ ॥

संघार्थञ्च <sup>१११</sup> ।

॥ [ इति ] संघोद्देशिकाधिष्ठानम् ॥ २० ॥

वचनस्वीकारार्थं वद्वस्यार्थस्य मोचने <sup>११२</sup> ।

॥ [ इति ] मोचनम् ॥ २१ ॥

पलशतिकेऽद[दो?] विंशतिकार्षापणादिमूल्यस्य वाससः स्त्रीकारैः(रे?) <sup>११३</sup> ।

॥ [ इति ] शुड(?)यस्त्रसंभजनम् ॥ २२ ॥

पञ्चपल्लिकपर्यन्तस्य च <sup>११४</sup> ।

॥ [ इति ] लघुवस्त्रसं(स्त्रसं)भजनम् ॥ २३ ॥

॥ नै सर्पिंसा. समाप्ता ॥ \* ॥ द्विसप्तति. ॥

शुद्धकप्रायश्चित्तिरुम् ।

असम्मतादिदशकनिष्कर्षणपरंपरप्रणीतनिपद्यास्थानात् न प्रत्युद्धृतौ <sup>११५</sup> ।

॥ [ इति ] शादीगतवर्जम् ॥ १ ॥

कल्पिकं भिक्षोरामिपमो(पो?)पसंहरणं प्रव्रजितायै <sup>११६</sup> । पत्नीचरितत्वेऽपि <sup>११७</sup> ।

ग्रहणं च तस्याः <sup>११८</sup> । न स[ह]शय्यायानमहतः पुत्रस्य वर्ज्यत्वम् <sup>११९</sup> ।

लब्धसंवृतेः <sup>१२०</sup> । दानमस्याः <sup>१२१</sup> । प्रव्राजनोपसंपादनयोः <sup>१२२</sup> । अपरिपूर्णाद्वादश-

वर्षतायाम् <sup>१२३</sup> । आत्मोपसम्पन्नतायाः <sup>१२४</sup> । ऊनोपस्थानम् <sup>१२५</sup> । दधुः पर्यदन-

लपर्यदुपस्थापनसंवृती <sup>१२६</sup> । प्रतिघटायै तदुपस्थापने <sup>१२७</sup> । पूर्णतायां द्वादश-

त्वस्योपसंपद् वर्षाणाम् <sup>१२८</sup> । नान्या याचेत् <sup>१२९</sup> । अलब्धप्राक् संवृतेः

पर्यदुपस्थापने <sup>१३०</sup> ।

॥ [ इति ] अलब्धसंवृत्युपस्थापनम् ॥ २ ॥

अमितपर्यदः परस्याम् <sup>१३१</sup> । ऊनलोपस्थापनम् <sup>१३२</sup> । उपसंपादने द्वादशवर्ष-

त्वादवर्षा परिणीतायाः <sup>१३३</sup> ।

॥ [ इति ] ऊनद्वादशवर्षोपसंपादनम् ॥ ३ ॥

विंशतेरन्यसाः <sup>१३४</sup> ।

॥ [ इति ] ऊनविंशतिवर्षोपसंपादनम् ॥ ४ ॥

उपाध्यायिकत्वेनादशशिक्षयोः <sup>१३५</sup> । पर्वलंघने <sup>१३६</sup> । अचरितत्वेऽस्याः <sup>१३७</sup> ।

॥ [ इति ] अशिक्षितशिक्षोपसंपादनम् ॥ ५ ॥



चरिततायां नो <sup>(१७)</sup> ।

॥ [ इति ] चरितशिक्षानुपसंपादनम् ॥ ६ ॥

स चेन्मे चीवरं ददासि ततः स्वोप(त्वाप्तु?)पसंपादयामीत्युपसंपत्प्रेक्ष-  
याचने <sup>(१८)</sup> ।

॥ [ इति ] धर्मपणनम् ॥ ७ ॥

प्रवाजानानुकूल्यसंदर्शनेन संक्षेप्य गृहविस्तरमग्रवाजने <sup>(१९)</sup> ।

॥ [ इति ] विप्रवाजनम् ॥ ८ ॥

प्रवाजनेऽनुवर्षम् <sup>(२०)</sup> । सन्तानव[?]हृल्यम् <sup>(२१)</sup> । अननुज्ञातायाः स्वामिना <sup>(२२)</sup> ।

॥ [ इति ] अननुज्ञातोपसंग्रहः ॥ ९ ॥

व्यभिचारिण्याः <sup>(२३)</sup> । गर्भिण्याः <sup>(२४)</sup> । शोकहतायाः <sup>(२५)</sup> । भण्डनकारिण्या  
उपसम्पादनेऽपि <sup>(२६)</sup> ।

॥ [ इति ] सापक्षालोध्वं(?)संग्रहगतम् ॥ १० ॥

प्रवाजितोपसम्पादितयोरनुपग्रहे <sup>(२७)</sup> । अनपकपर्णेऽन्तरायदृष्टौ <sup>(२८)</sup> ।  
अशिक्षणे <sup>(२९)</sup> । अनुपस्थापने ग्लानयोः <sup>(३०)</sup> । सान्तेवासिन्योः <sup>(३१)</sup> ।

॥ [ इति ] अच्युपेक्षणगतम् ॥ ११ ॥

स्वयं सेव्ये जतुलोठकस्यान्तरा धारणे <sup>(३२)</sup> । न प्रतिस्तोतो व्यायच्छैत <sup>(३३)</sup> ।  
न योनद्वारे शुक्रं प्रतिक्षिपेत् <sup>(३४)</sup> । न चर्मपट्टेन पार्श्वबन्धनं कुर्वीत <sup>(३५)</sup> । न  
वैमपट्टेन स्तनयोः <sup>(३६)</sup> । न सुगतान्तरायेनान्तरणम् <sup>(३७)</sup> । निदर्शनमेतत् <sup>(३८)</sup> ।

॥ [ इति ] अनङ्गसेवा ॥ १२ ॥

अङ्गलिपर्वद्वयादूर्ध्वं व्यञ्जनस्यान्तःशोचने <sup>(३९)</sup> । अनङ्गमेव प्रतिकृतिः <sup>(४०)</sup> ।  
पाणितलघातस्यात्र दाने <sup>(४१)</sup> ।

॥ [ इति ] अनङ्गसेव[?]विधिव्यावाधवृत्तम् ॥ १३ ॥

रोमापनीतेरतः करणकारणयोः <sup>(४२)</sup> ।

॥ [ इति ] सेव्योपकल्पनम् ॥ १४ ॥

गृहिणा सार्द्धं स्थितौ प्रतिच्छन्ने <sup>(४३)</sup> । कुड्यवाटवस्त्रगहनान्धकारैरेतत्वं  
संपत्तिः <sup>(४४)</sup> । मिथुणा <sup>(४५)</sup> । अम्यवकाशे पूर्वण <sup>(४६)</sup> । उत्तरेण <sup>(४७)</sup> ।  
ऊनापत्तिः सद्वितीयतायामस्य <sup>(४८)</sup> । सपथात्सञ्जमणिकाल्वे मिथुण्याः <sup>(४९)</sup> ।  
गृहिण उपकर्णकेन सन्देशदाने <sup>(५०)</sup> । गृह(हि?)णेऽस्यैव मतः <sup>(५१)</sup> । मिथोः <sup>(५२)</sup> ।  
अतश्च <sup>(५३)</sup> । विद्योद्ग्रहणे गृहिणः <sup>(५४)</sup> । पाठनेऽस्यास्याः (?) <sup>(५५)</sup> । वधवध(?)  
व्रणमोचने <sup>(५६)</sup> । व्यालेन <sup>(५७)</sup> । तस्मादनापत्तिः भूततायामर्षस्य <sup>(५८)</sup> ।

॥ [ इति ] असंख्यशिक्षंसंगमगतानि ॥ १५ ॥

सन्तानधारणे <sup>(५९)</sup> ।

॥ [ इति ] प्रसवामिष्यङ्गः ॥ १६ ॥

गृहस्वामिनमनवलोक्यान्तर्गृहे रात्र्यतिनयने <sup>(६०)</sup> । अनापत्ति(?) रूपपीनतायां

तदवलोकने ॥१॥ । रात्रेरप्रत्यवेक्ष्य प्रतिच्छन्नेऽतिनामनम् ॥१॥ । लयने विना परया  
 भिक्षुष्या ॥१॥ । अनापत्तिः हतादित्वे(?)ऽस्थाः ॥१॥ । अवष्टम्भायतद्वारपरिहर-  
 णानि ॥१॥ । संस्पृष्टंशुष्याकल्पने ॥१॥ । अनापत्तिरनया सार्द्धमनेकयापि कृतावर-  
 णतायां घृश्या(?)दिनोपस्थितस्मृतिरनास्वादानेऽङ्गसंस्पर्शस्याचलमश्वे प्राकृते संस्तरे  
 वा ॥१॥ । दुष्कृतं संभवे ॥१॥ ।

॥ [ इति ] संभोगसंवासरप्रतिशेषः ॥ १७ ॥

कारणे भिक्षुष्या स्वाङ्गोद्वर्तनस्य शिक्षमाणया ॥१॥ । श्रामणेरीकया गृहिष्या ॥१॥ ।  
 तीर्थर्षया ॥१॥ । उल्कटिकाकारणे ॥१॥ । सुगन्धद्रव्यैः स्वाङ्गोद्वर्तने ॥१॥ ।  
 पिण्याकेन ॥१॥ ।

॥ [ इति ] परिकर्मगतम् ॥ १८ ॥

स्नाने हस्तसंलग्नकया ॥१॥ ।

॥ [ इति ] जलसंभोगः ॥ १९ ॥

प्रसाधनार्थं निष्पुक्ताशुशीरस्य ॥१॥ । फणकूर्बन्ध्या(?)रूपप्रतिशीर्षिकाणाञ्च ॥१॥ ।  
 गृहालंकारप्राश्रुतौ ॥१॥ ।

॥ [ इति ] प्रसाधनगतम् ॥ २० ॥

मुचो(त्ते ?)येन केनचिदङ्गेन ॥१॥ । गाने ॥१॥ । यत्र तत्र तदभिप्रायेण  
 स्वरविकारे ॥१॥ । वादने वादित्रस्य ॥१॥ ।

॥ [ इति ] उद्धर्षणगतम् ॥ २१ ॥

छत्रस्य परिभोगभूते धारणे ॥१॥ । उपानहोश्च ॥१॥ । अनापत्तिः वर्षके  
 शयनासनगुप्त्यर्थम् ॥१॥ । आसन्दी परिचर्ययोः प्रत्यनुभवने ॥१॥ ।

॥ [ इति ] लीलायितत्वगतम् ॥ २२ ॥

निपादेऽननुज्ञातेऽन्तर्गृहमासने ॥१॥ ।

॥ [ इति ] प्रागल्भ्यानुप्रस्कन्दनम् ॥ २३ ॥

परिशुष्य धर्मश्रवणदानावस्थायागारिकशयनासनमुत्सृज्यानवलोक्य गृहिणे  
 प्रक्रमणे ॥१॥ । त्यक्तिरसोपविचारस्य पर्यन्तः ॥१॥ ।

॥ [ इति ] विप्रवादनम् ॥ २४ ॥

कर्त्तुं स्रजस्य ॥१॥ । अनापत्तिः[?]लोठकाष्ठञ्च(?) कस्यार्थं प्रतिगुप्ते  
 प्रदेशे ॥१॥ । स्त्रीकारे भिक्षुणीगणचोरस्य ॥१॥ । कृतावाभिपविक्रयस्य ॥१॥ ।  
 गृहन्पाकुलिकायाश्च ॥१॥ । न मद्यकर्म कुर्यात् ॥१॥ । न पानागारं वाहयेत् ॥१॥ ।  
 पक्तावामस्य ॥१॥ । अनापत्तिः भिक्षुसंपस्य आचार्यसमक्षचारिणामर्थं प्रतिगुप्ते  
 प्रदेशे ॥१॥ ।

॥ [ इति ] गृहिणीशिल्पगतम् ॥ २५ ॥

सुक्तवस्त्रेष्व्युत्वासनादभ्यवहारे <sup>(१७)</sup> ।

॥ [ इति ] लेहडं(?)वृत्तम् ॥ २६ ॥

लसुनस्य <sup>(१८)</sup> ।

॥ [ इति ] असभ्यगन्धोपभोगः ॥ २७ ॥

रजश्रोडस्यानाधारणे <sup>(१९)</sup> । सूत्रके नास्य चद्रस्यावस्थापनम् <sup>(२०)</sup> । क[ ]लासु-  
कालमस्य शोचनं रञ्जनञ्च <sup>(२१)</sup> । [ उ ]दकशाटिकायाञ्च <sup>(२२)</sup> । धारयेद्देने <sup>(२३)</sup> ।  
धावकेन चीवरधावने <sup>(२४)</sup> ।

॥ [ इति ] शुक्तिमङ्गगतम् ॥ २८ ॥

दाने श्रमणचीवरस्यागारिकायावसुंठनार्थम् <sup>(२५)</sup> ।

॥ [ इति ] धर्मध्वजानादरगतम् ॥ २९ ॥

भिक्षुणा सार्द्धं संघाद्याः परिवर्तने <sup>(२६)</sup> ।

॥ [ इति ] ध्वजपरिवर्तनगतम् ॥ ३० ॥

वर्णमात्सर्यकरणे <sup>(२७)</sup> । कुलावासलाभधर्ममात्सर्यानाञ्च <sup>(२८)</sup> ।

॥ [ इति ] मात्सर्यगतम् ॥ ३१ ॥

निष्कासने भिक्षुणीवर्षकात् <sup>(२९)</sup> । यथातथा भिक्षुण्याः <sup>(३०)</sup> । पूर्वोप-  
गतायाश्चान्तर्गृहात् <sup>(३१)</sup> ।

॥ [ इति ] निष्कर्षणगतम् ॥ ३२ ॥

चोदने दुर्दृष्ट्यादिना <sup>(३२)</sup> ।

॥ [ इति ] विहेठनगतम् ॥ ३३ ॥

शपथकरणे <sup>(३३)</sup> ।

॥ [ इति ] विपर्ययोर्दर्शनगतम् ॥ ३४ ॥

व्यथने क्रोधेनात्मनः <sup>(३४)</sup> ।

॥ [ इति ] अधीरवैकृतम् ॥ ३५ ॥

अवस्यण्डने भिक्षुणीगणस्य <sup>(३५)</sup> । आक्रोशने च <sup>(३६)</sup> । ज्येष्ठपर्यदः पानीयेन  
सेके <sup>(३७)</sup> । अनापचिर्मूर्च्छितस्य <sup>(३८)</sup> । न भिक्षुमवष्टीषेत् <sup>(३९)</sup> । नेदं प्रव्राजितमा-  
श्रोशेत् <sup>(४०)</sup> । द्वयेऽप्येत् <sup>(४१)</sup> । न भिक्षोः पुरस्ताद् गोचरे चरेत् <sup>(४२)</sup> । नास्थिर-  
संक्रमेण भिक्षुणा सार्द्धं गच्छेत् <sup>(४३)</sup> । सहदर्शनाद् भिक्षोरासनं मुञ्चेत् <sup>(४४)</sup> ।  
निपाद एनां स्थितातिनामने निपण्णो निमुञ्चीत् <sup>(४५)</sup> । अकरणेऽवलोक्य  
निपण्णत्वेऽस्य भजेत् <sup>(४६)</sup> ।

॥ [ इति ] गुरुभूतरालीकरणगतम् ॥ ३६ ॥

अनुपशमने सति सामर्थ्ये भिक्षुणीकलेः <sup>(४७)</sup> ।

॥ [ इति ] संक्षोपशु(?)वेशणम् ॥ ३७ ॥

पर्युषितच्छन्ददाने <sup>(४८)</sup> ।

॥ [ इति ] साम्प्रत्यरोलागतम् ॥ ३८ ॥

अन्वर्द्धमासप्रत्यनुभवने भिक्षुभ्योऽववादानुशासन्याः १०० । विना भिक्षुभिः  
पोषधकरणे १०१ । वर्षोपगतावभिक्षुकावासे १०२ । संचद्वये वर्षोपितायास्त्रिभिः  
स्थानैरप्रवारणे १०३ ।

॥ [ इति ] गुरुधर्मातिक्रमणगतम् ॥ ३९ ॥

दरिद्रस्य कठिनसमादापने १०४ । कठिनोद्धारार्थमदापने प्रसव्धौ साम-  
द्र्याः १०५ । धीवरमाजनार्थञ्च १०६ । नास्या जिष्टृक्षायां कृतत्वम् १०७ ।

॥ [ इति ] परविघाताचरणगतम् ॥ ४० ॥

वर्षकमननुपरिन्द्य(?) प्रक्रान्तौ १०८ । उपचारत्यागे १०९ । न वर्षकमु[त्?] ]  
क्रमेण दद्यात् ११० । न गृहवस्तुवापणवस्तु वा १११ ।

॥ [ इति ] वर्षकस्त्री(?)तिकरणगतम् ॥ ४१ ॥

जनपदचर्याचरणेऽन्तर्वर्षम् ११२ । अनापत्तिरन्तरायप्रत्युपस्थापने ११३ ।  
वर्षोपितत्वादचरणेऽस्याः ११४ । चरणे साशङ्के राष्ट्रे ११५ । प्रतिविरुद्धे च ११६ ।

॥ [ इति ] प्रव(च)रणाप्रचरणगतम् ॥ ४२ ॥

देवकुलादौ तीर्थ्याश्रये गत्वा वादस्य करणे ११७ । पृच्छार्यां प्रशस्याकृताव-  
काशस्य ११८ । दत्त्वासनं प्रति सम्मोद्य पृष्ठागमाभियोगमवकाशं कारयेत् ११९ ।

॥ [ इति ] संजल्पगतम् ॥ ४३ ॥

वहिःभूम्ये(म्यामे ?)काकिनीगमने १२० । छोरणायामुच्चारस्य हरिते तृणे १२१ ।  
अनापत्तिः ग्लान्ये स्फुटत्वे च नीलतृणैः सर्वस्य १२२ । तिरश्च प्राकारमनव-  
लोक्य १२३ । अनापत्तिः वरण्टकप्रतिक्षिप्ततायां प्राकारस्य १२४ । न शुचौ लोष्ठं  
क्षिपेत् १२५ ।

॥ [ इति ] उच्चारप्रतिसंयुक्तम् ॥ ४४ ॥

॥ शुद्धप्राथम्यसिद्धानि समाप्तानि ॥

प्रातिदेशनीयानि ।

न श्रोणीनि वस्तं निवसीत १२६ । नावष्ट(सु)तान्तर्गृहं गच्छेत् १२७ ।  
भैक्षवांध १२८ । शैक्षाः १२९ ।

॥ भिक्षुणीविभङ्गसूत्राणि समाप्तानि ॥

प्रकीर्णशिक्षापदानि ।

( १ ) शमथगताः ।

दुष्कृतमापत्तियोगे घ्वस्ताप्ररूढयोः १३० । अनुपसम्पत्कप्रव्रजितस्य च ममा-  
नातिक्रमे १३१ । तत्पक्षाणां मानसम् १३२ ।

धारणं विप्रवासञ्च स्पर्शमग्नेर्निवारिते ।  
 भोजनं धीजाघातञ्च देशे च हरिते शुचैः ॥  
 उत्सर्गं वृक्षरोहञ्च शैक्षा उद्देशयोस्तह ।  
 रत्नस्पर्शनं(?)भुज्या च रजतसान्निध्यनाशयोः (?) ॥  
 भूमिप्ररोहघातान्यामृत्सृज्यान्तं च पुत्रगम् ।  
 प्रावृष्येकत्रवसनं पोषधः सप्रवारणः ॥

इत्याद्यस्यान्तभाग् लिङ्ग अनाशयत(?)कान्तारिकागतां तालिकामालंढ्य  
 तत्सं वा स्रजकम् ।

न सोपानत्कथंक्रयेत् १० । प्रज्ञपनं खलमानकस्यादिग्धै पांसुना पादयोः ११ ।  
 वृतीयेऽङ्गि प्रहाणिकः पादौ अक्षयेत् १२ । असक्तोऽस्त्रप्रस्तत्रापि १३ ।  
 आशुतद्वारे १४ । पार्श्वमपि दत्त्वा १५ । सम्मन्येरन् प्रहान्(?)प्रतिजाग-  
 रकम् १६ । तद्वृत्तमुत्थायैव सेकसन्मार्गसुकुमारी गोमयाकार्पां प्रहाणम् १७ ।  
 आसनप्रज्ञपनम् १८ । अशुचिकुड्यो(?)द्व्याः)शोचनम् १९ । सेकादिशुन्धनमृत्ति-  
 कापानीयस्थापनम् २० । गण्डीदानञ्चागमाय २१ । कारणपृष्ठमत्र स्थापनम् २२ ।  
 संघसन्निपातार्थं तिस्रो घुमास्तावन्तः प्रहाराः २३ । कर्मदानार्थञ्च घुम[र]  
 त्वेका २४ । तिस्रः परिवृत्तयोर्द्वौ प्रहारमित्यपरम् २५ । मृतस्यांसदानाय  
 मुण्डिका २६ । एकपरिवर्त्तः प्रहारश्चेत्यपरम् २७ । सक्खरकः प्रहाणिःकार्यम् २८ ।  
 कटिकेत्यपरः २९ । यावदाप्तमापदि ३० । सुकन्वर्थसन्निपातार्थमुभयोः कटि-  
 कागण्ड्योर्दानम् ३१ । अन्तरितयोर्विलम्बेन ३२ । असंपत्तौ गण्डीदानेन  
 संघोधनस्य महासन्निपाते यमलशंखयोरारूपणम् ३३ । मेर्यात्ताडनम् ३४ । न  
 गण्डीं नाभ्युद्गच्छेत् ३५ । न न क्षिप्रम् ३६ । संभाविनि कार्यस्य कालेऽवशिष्टे  
 यथासुखं करणं दत्तत्रिदण्डके ३७ । परिमण्डलस्यास्य दानम् ३८ । दक्षिण-  
 देशनकरणम् ३९ । परिमण्डलस्य ४० । पृष्ठतः[ ] परिजागारितुः गमनम् ४१ ।  
 आगमनमग्रतः ४२ । तद्वरूपधेत् प्रत्ययः कृतकोपनापावरणीव्यपदेशः ४३ ।

॥ [ इति ] पोषधवस्तुनि शमथपोषधगतम् ॥ १ ॥

(२) स्थानगताः ।

सम्मन्येरन् पोषधाश्रयम् १०० । सर्वजातकृतनिष्ठितं वस्तु १०१ । स बहिव्या-  
 मोपविचारम् १०२ । अभिलषितसंघस्य १०३ । कर्मान्तराणामपि तत्स्थानम् १०४ ।  
 यशीयुः सीमानमार्द्रवृतीययोजनपर्यन्तात् १०५ । शैलकुड्यस्तम्महृक्षप्राकार-  
 प्राग्भारतिमार्गोदपानादौ प्रतिदिशं संलक्ष्य तत्(?)जैः मिश्रुभिः परिकीर्तिते  
 सन्निधौ संघस्य स्थावरे चिद्धे कर्मणः करणम् १०६ । कृतायां संघृतावत्र विप्रवा-  
 सधीवरः १०७ । कुर्बुरेनाम् १०८ । सन्नोद्देशकं करणं मण्डलसंसंमतेः १०९ ।  
 नाप्रसूये पूर्वं घन्धान्तरस्य रुटिः ११० । सुश्रेयुः सीमानम् १११ । युज्यते द्वयोः

सीमोरेकेन वचसा वन्दो मोक्षो वा ॥ १३ ॥ कुञ्चं कर्मण्यवद्वसीश्यावासे  
सीमा ॥ १४ ॥ यत्र वाशिष्यवहनी(?) परिभ्रष्टोदकपातः ॥ १५ ॥ उपविचारान्तो  
ग्रामे ॥ १६ ॥ क्रोशान्तः प्रतिदिशमरण्ये ॥ १७ ॥ ।

॥ [ इति ] पोषधवस्तुनि स्थानगतम् ॥ २ ॥

( ३ ) सामग्रीगताः ।

सम्पद्यते छन्ददानतस्तेन सामग्र्यम् ॥ १८ ॥ न सीमावन्द्ये ॥ १९ ॥ कल्पिकं  
शिक्षादचकात् तद्ग्रहणमुपस्थापिततद्भिस्तुसंज्ञस्य ॥ २० ॥ न दानम् ॥ २१ ॥ भवति  
संयुतैरुमतकेनाप्यग्रत्वम् ॥ २२ ॥ परिशुद्धिदानेन चैक्यं पोषधे ॥ २३ ॥ प्रवारणा-  
याञ्च ॥ २४ ॥ तद्दानेन कुर्वतेवमेते ॥ २५ ॥ प्रतीच्छेपुरेवंविधिम् ॥ २६ ॥ न गणश-  
श्छन्दादिसंगत्या कर्मकरणमन्याप्यम् ॥ २७ ॥ न तुल्यप्रक्रमाणां वचनीयानाम-  
वियुत्यवचनम् ॥ २८ ॥ नैकेनानैकैः तदानयनम् ॥ २९ ॥ आख्यानशक्तेरत्र  
परिच्छेदः ॥ ३० ॥ यथाकथंचिदेतद्दानानामशक्तौ संपादनम् ॥ ३१ ॥ अपि  
कायेन ॥ ३२ ॥ कथंचिदप्यशक्तौ संघस्य वा तत्र गमनं तस्य वा मञ्चेनानयनम् ॥ ३३ ॥  
नैतान् गृहीत्वा धावेत् ॥ ३४ ॥ न जवेत् ॥ ३५ ॥ न पुवेत् ॥ ३६ ॥ न वाट्टां लंघ-  
येत् ॥ ३७ ॥ न परिपण्डाम् ॥ ३८ ॥ न खे तिष्ठेत् ॥ ३९ ॥ न बहिः ॥ ४० ॥ नान्तरित्या-  
न्यन्निःश्रयणीपदकमाक्रामेत् ॥ ४१ ॥ न सोपानकडेवरम् ॥ ४२ ॥ न कण्ठ(ण्ठ?)मात्र-  
मुदकमवगाहेत् ॥ ४३ ॥ न खम(प?)न् समापत्तिं कुर्वीत ॥ ४४ ॥ वै(?)तरिकत्वेनास्य-  
नयोः गर्हत्वं भिक्षोरारोचयेत् ॥ ४५ ॥ संघस्येत्यपरम् ॥ ४६ ॥ समन्वाहरत भदन्ता  
इत्युपक्रमः ॥ ४७ ॥ असंप्राप्तस्य संघमध्यं कालक्रियामागारिकादित्वप्रतिज्ञात्वेना-  
नीतत्वम् ॥ ४८ ॥ आनीतत्वं संप्राप्तस्य ॥ ४९ ॥ परेण पञ्चदश्यां गृहीतत्वे भिक्षोर्मुञ्चनं  
भिक्षुं सग्रहचार्येप(पो?)स्माकमिति ब्रूयुः ॥ ५० ॥ अमुक्तावस्त्वस्माकमनेन सार्द्धं  
किञ्चिदेव करणीयमिति सार्धं(?) ॥ ५१ ॥ तथापि मण्डलके कुर्वीरन् ॥ ५२ ॥  
नोर्द्ध(?)ध्वं)मस्य मोक्षाय न व्यायच्छेयुः ॥ ५३ ॥ भवत्युत्प्रेक्षितेन व्यग्रत्वम् ॥ ५४ ॥  
पृथग्भावरुचिमिभिनिरूप्य कर्मणः कृता स्थूलात्ययः ॥ ५५ ॥ न विचिकित्सितं  
निश्चितं वा कल्पमानत्वेऽनुत्थितेर्दोषस्य कर्तुं ॥ ५६ ॥ कर्तुंशुद्धेः पर्य(?)पितं भावतो  
न कल्पतः ॥ ५७ ॥ मार्गणशब्दनोचस्थदिगवलोकने चे(?)चै?)तत् ॥ ५८ ॥ ।

॥ [ इति ] पोषधवस्तुनि स्थानगतम् ॥ ३ ॥

( ४ ) परिभाषाः ।

पोषधं कुर्वीरन् पञ्चदश्यामन्वर्द्धमासं प्रातिमोक्षसूत्रोद्देशेन ॥ ५९ ॥ न प्रवारणेऽस्वा-  
संपन्नत्वम् ॥ ६० ॥ ज्ञापनव्यवस्थोद्ग्रहणपूर्वकं तद्गुदेशः ॥ ६१ ॥ भाषणेनैव निदानोद्दे-  
शस्योच्चारणेन संपादनीयत्वं ज्ञेयञ्च ॥ ६२ ॥ श्रुतभाषणेनापि शिष्टस्य ॥ ६३ ॥  
आरब्धस्य समापनं नर्गस्य ॥ ६४ ॥ कृत्स्नस्य तुयंस्पृष्टौ ॥ ६५ ॥ प्रत्य(?)याञ्चाभाण्डोप-

भुद्रव(?) ॥ कामोपघातसंवासानादरासो(?)धवस्तुकम् ॥ तुल्यत्वं  
 शिक्षादत्तकस्य ॥ अनुपसंपन्नमन्त्रश्च ॥ न तत्र ॥ शिक्षमाणायाश्च ॥  
 गत्यन्तराकारभजने लब्धौ भिक्षुसंज्ञानस्य ॥ अलब्धौ न्यूनत्वम् ॥ पूर्व-  
 प्रयुक्तश्च ॥ तत्त्वं परस्य ॥ द्रव्यस्य च प्रतिक्षिप्तात् ॥ तुल्य-  
 स्थापि ॥ व्यञ्जनस्य प(?)क्षेत्रत्वम् ॥ यत्प्रयोगत्वं न्यूनार्थात् ॥ तत्त्वं  
 कृतस्य ॥ स्वत्वं न्यूनस्य ॥ न्यूनेऽंशत्वं दशाहं ॥ ध्वंसो(?)क्षेत्रत्वे ॥  
 नैतन्न प्रतिच्छाददोषस्य ॥ नैष्कृत्यं चरितस्य मानास्यस्य ॥  
 परिवृत्तिरत्र कल्पानाम् ॥ तदातनस्यात्मनः कर्तृत्वम् ॥ नाशगतित्व-  
 मन्यजस्य ॥ गत्यन्तराकार[र?]भजने च घाते ॥ नावस्थान्तराप्रतिपत्ताव-  
 न्यत्वम् ॥ छेदो(?)तद्दोषमागमनम् ॥ उत्सर्गश्च ॥ अनेकत्र एकत्र  
 वस्तुनि ब्रह्मतेः यावदेव तद्दोषः ॥ तच्छेदस्तद्गतम् ॥ सर्वत्र मुक्तापन-  
 न्त्य(?)त्वे संघावशेषः ॥ नानेककृ(?)कियाफलेनापत्तिव्यवधानम् ॥  
 अर्धत्वंकारे दु[प]कृतस्य ॥ न्यूनांशत्वं न्यूनेऽवशेषु ॥ सर्वत्र  
 विचिकित्सतः प्रवृत्तौ सञ्चान[?]म् ॥ संज्ञानं प्रयोगेऽङ्गम् ॥ न  
 त्वसंधाने ॥ नावद्यचर्यशुक्रविमृष्टयोः ॥ श्रोतुधासत्त्वे ॥ योग्यत्वं  
 सर्वाङ्गेषु ग्रहणमने(ना?)सेवायां प्रतिफलत्वम् ॥ ऊनत्वं परप्रान्यस्य ॥  
 ततोऽप्यनेकवैकल्ये ॥ मनुष्ये च तिरश्च(?) ॥ अन्यद्वि धर्मकत्वम-  
 स्पर्शनेऽङ्गे ॥ अधिकृतं स्पृश्यम् ॥ प्रतोदे च ॥ अन्यवत्त्वं नस्यदन्त-  
 निर्मांशास्थिरोम्भ्याम् ॥ म[?]नुपगतेर्व्यवहार्यत्वं न नष्टप्रकृतेः ॥ तद्वत्त्वं  
 पण्डकोभयव्यञ्जनयोः ॥ व्यवहारवत् संसर्गः ॥ अर्धत्वं बाह्यके  
 प्रयाजिते गृहीत्वस्वारूढिध्वस्तयोश्च ॥ सोपसंपत्कमव्यस्तं भिक्षुभिक्षुणी-  
 त्वम् ॥ स्वपक्षोपसंपद्ध्यञ्जनो(नयोः?)योगमाभ्याम् ॥ लिङ्गत्वमेतद्गते  
 गृहिण ऊनम् ॥ कल्पिकत्वं अवजितद्रव्येषु प्रमाणिकादित्वश्च ॥ स्वार्धत्व-  
 मतन्युख्ये ॥ घोघोऽर्धस्य विज्ञप्ति ॥ तं कृत्वे(?)स्थितौ वधस्वार्धहा-  
 रयोः ॥ नैतत् समादातरि ॥ पात्रमस्य ॥ वाक् च ॥ स्वा ॥  
 आत्मोपसंहिता ॥ स्वाधिष्ठितत्वं कारणे ॥

॥ विभक्तगतमायाः परिभाषाः समाप्ताः ॥ ४ ॥

(५) पोषधविधिः ।

न गोचरप्रसू(?)तो योगं वाच(?)पेत् ॥ नाभ्यागमे ॥ युक्तं  
 विक्षिप्त(स?)कुरोद्गण्डकानां परिहरणम् ॥ भाषवेयुः प्रहाणशालाम् ॥  
 सरुद्ग(?)मर्ष्यं लयनद्वयम् ॥ पञ्चके पदके वा ॥ द्वाररुपाटशब्दाकरणा-  
 कर्षणोपायांश्च ॥ वातायनश्च वि(?)वृत्तौ ऊर्ध्वं महिस्संश्रुतमन्तर्विशालं

साधु ॥ जालिकाकवाटिकासूचीघटिकाचक्रिकाजपादकदण्डांश्च ॥  
 करणमण्डपस्योपर्यमाने पुरान्तरसा(?)वा ॥ सोपानस्याधिरोहाय ॥  
 परिक्षेपो(?)प्रपातार्थं वेदिकया ॥ कीलनं लोहकण्टकैरकम्पनार्थमस्याः ॥  
 घटिर्वा(?) च प्रहाणमण्डपस्य लयनपंक्तेर्वा ॥ न द्वारसम्मुखं द्वारं  
 कुर्यात् ॥ करणं द्वारकोष्ठकस्य ॥ कुर्युर्गुहामपि ॥ मृण्मयान्यासनार्थं  
 संहतानि ॥ पीटिकाश्च ॥ चतुर्हस्ताऽस्ता समन्तपरिक्षेपेण साध्वी ॥  
 पांचविध्यां वाने ॥ मौञ्जं सार्णं बाल्यजं पट्टिका वेश्रवैभद्रुकमिति ॥  
 प्रज्ञपयेयुरत्र तलिकाम् ॥ गृष्टिपरितोऽस्यामधिकत्वं साधु ॥ अर्कका-  
 शेरकयूकशल्मलीनां तूलं पूरणम् ॥ ऊर्णां शणः कर्प्पासो नतुकानि  
 पत्रवैभद्रुकश्च ॥ काकपदकानामन्तरोऽन्तरे यथार्थमवस्थापनाय दानम् ॥  
 मिदूध्वागमे(?) घटिकाधारणम् ॥ सूत्रकेण कर्णो(?)पनिवध्य ॥ यष्टेः  
 सारणम् ॥ सनैः(?) अदुःस्वार्थमार्द(?)कं छित्तेवेष्टितायाश्च नतुकैः ॥  
 कण्डुसक(?)क्षेपः सूत्रकेन (ण ?) बध्व(?)स्य पुनारान्त्यैः ॥ प्रदीपस्याप्रतः  
 स्थापनम् ॥ पादस्यावतारणम् ॥ अपरस्यापि ॥ चङ्क्रमणम् ॥  
 वेश्रणमत्रार्द्धमासवृचस्य ॥ सनिपत्सचायाम् ॥ प्रतिकृत्य चेतितं सर्वत्र  
 सन्निपीदेत् ॥ सन्निपण्णतायां स्मृतिविमत्योरनन्तरेऽधिष्ठित ॥ चित्तेन  
 कर्मकारकः ॥ स्वं चेदेकमतद्वन्तं पञ्चदशां मन्येत सप्रेमकप्रागुष्ये प्रयतेत् ॥

य आयुस्सनि(?)मानि)दं चेदं च करोति किं तस्य भवति सापत्तिको  
 नृत्वायुस्स(?)त्वयाम्)तेदं चेदं च कृतं कृतमेवं सत्यायुस्सा(?)म्)नृ सापत्तिको  
 नाहमायुस्स(?)म्)त्रेकोऽपि तु सर्वसंधोऽनेनाथेनाह्मतावच्च(?)मायुस्सा(?)म्)नृ  
 स्वामापत्तिं यथाधर्मं प्रतिकुरु किं ते करिष्यति सर्वसंध इति प्रक्रमेण दर्शनपथे  
 शिष्टानामिच्छायां देशयेत् ॥

नाकाममत्रैतं चोदयेत् ॥ सर्वे चेत् पञ्चदश्यामापत्तिं प्रतीयुर्विमतिं वा  
 स्वप्रतिक्रियार्थमावासान्तरं कश्चित् प्रस्थापयेयुः प्रतिगृहीत्वसंव(?)म)त्यर्थम् ॥  
 असंपचावधिष्ठानं प्रतिज्ञपनं कामयेरन् ॥ चतुष्कतोऽर्वागुभावे विहारकरणीयं  
 स्थितमेव ॥ अहापनमासनप्रज्ञप्तेः ॥ संकसंमार्गसुकुमारीगोमयकार्पा-  
 प्रदानसिंहासनासनप्रज्ञपनप्रदीपधर्मश्रवणदानेषु कृतेषु चतरके प्रदेशे स्थित्वा  
 चतुर्दिशव्यवलोकनम् ॥ दर्शनं मिधूणामङ्गु वावदायुस्स(?)म्)न्तस्त्व-  
 रित्तरित्तमागच्छतामार्थसंधस्य पोपधः प्रव[?]रणा वा पाञ्चदशिक[?] इति  
 वचनम् ॥ अपरिपूरो(?)चतुष्कस्याधिष्ठानम् ॥ वेलं यावदागमस्य ॥  
 निपद्य केवलस्य ॥ सान्यत्वे शिष्टे सन्निधौ ॥ सन्निपद्य त्रया-  
 णाम् ॥ तद्वत् प्रवारणं चतुर्णाम् ॥ नासत्प्रतिमोक्षश्लोदेशके तदास्थाने  
 ज्ञात्वा पोपधमागमयेत् ॥ न यत्रास्तातिक्रमस्तत्रोपगच्छेत् ॥



नोपगतिमनु रक्षेत् ॥१०॥ । प्राक् परातः ॥११॥ । तश्चोर्ध्वं (१) ध्वं म्मासद्वयात् ॥१२॥ ।  
 वस्तु कर्मलाभोपस्थापकपरिहारेणोद्देशकं परीच्छेद्युः आगच्छन्तं द्वाधरं प्रत्युद्ग-  
 च्छेद्युः छत्रध्वजपताकाभिः ॥१३॥ । विनयस्य मातृकायाश्च ॥१४॥ । अर्धतृतीयानि  
 योजनानि ॥१५॥ । अशक्तौ क्रोशपञ्चकम् ॥१६॥ । त्रिकमर्द्धयोजनं क्रोशमर्द्धक्रोशं  
 परिपण्डं वा ॥१७॥ । वाक्साखिल्यकेन प्रत्युद्गम्य पात्रचीवरं प्रतिगृह्णीयुः ॥१८॥ ।  
 स्नानं कुर्युः ॥१९॥ । स्नेहलाभश्च संघे ॥२०॥ । वस्त्रादिपरिहारं दद्युः ॥२१॥ ।  
 धर्मश्रवणञ्च ॥२२॥ । शास्त्रधरत्वमेपां भिक्षुमीर्ष्यन्तं बोधयेयुः ॥२३॥ । नाकृतपोषध-  
 प्रसारणस्तद्दिने प्रज्ञायमान स्वतः(?)दः स्थानात् प्रक्रामेन चेत् तदैव तद्रथे प्राप्तिः  
 कलिकृद्भ्यो विमुक्तिरनुप्राप्तिः सत्(?)दृचानामेतत्परायन(?)त्वं वा ॥२४॥ ।  
 न कलिकृद्भिक्षुकं सद्भक्तभिक्षुकाद् गच्छेत् ॥२५॥ । नाभिक्षुकं समिक्षुकादसद्वितः  
 शिष्टैरन्यत्रापदः कायचित्प्रसन्नविवक्षता न(?) वा ॥२६॥ । नाकृतपोषधप्रवारणं  
 [प्र]क्रान्तौर्निःश्रितमवसृजेत् ॥२७॥ । तद्रूपतायां प्रत्ययस्य सद्गुणोद्देशवन्तमुद्दिश्य  
 वासं तत्रावतारे निपुञ्जीत ॥२८॥ । नैनाद्युक्तिमतिलक्ष्ययेत् ॥२९॥ । कल्पता-  
 पश्चादागतानामर्थं पुनः करणमनयोः ॥३०॥ । कामोऽयं प्रवृत्तो[?]स]त्म्यक्ता  
 चेत् ॥३१॥ । समानयात्रेण्यपि ॥३२॥ । सामग्र(?)मितरं याचेरन् ॥३३॥ । अलाभेऽस्य  
 सीमान्ते करणम् ॥३४॥ । संपत्तिः शेषानुभवेन क्रियमानतायामागतौ ॥३५॥ ।  
 नियमो[?]स] प्रक्रान्तत्वे कस्यचित् तत्स्थानात् ॥३६॥ । बहुतरत्वे चागतानाम् ॥३७॥ ।  
 कालं प्रति बहुतराणामनुवर्त्यत्वम् ॥३८॥ । समत्वे नैवासिक्तानाम् ॥३९॥ ।  
 अत्र च ॥४०॥ ।

॥ [ इति ] पोषधविधिगतम् ॥ ५ ॥

(६) विमङ्गादिगतम् ।

न समाधेर्न्युत्थापयेत् ॥१॥ । नानववादकं ध्यायेत् ॥२॥ । न्याय्यो घटिकाक-  
 न्दुकप्रयोगः ॥३॥ । न वीर्यं संसरेत् ॥४॥ । पुत्रवदेतत् ॥५॥ । अविष्ट(?)क्षि)ताङ्ग-  
 पित्तचीवरतयापि शय्य[?]कल्पनम् ॥६॥ । नाग्लानो दिवा शयीत ॥७॥ । धारयेत्  
 शृङ्गाधिरु आयपदम् ॥८॥ । अन्तर्गतैश्चक्रन्पेतेन्द्रियैरवहिर्गतेन मानसेना-  
 विलम्बितम् ॥९॥ । स्पष्टमृजुः ॥१०॥ । अशक्तौ सूत्रकेणाक्षिप्य ॥११॥ । द्वादश  
 स्वाध्यायकारकस्य हस्ताश्रमः ॥१२॥ । अष्टादश प्रहाणिकस्य ॥१३॥ । सूत्रयित्वास्य  
 करणम् ॥१४॥ । देशयेद् भिक्षुधर्मं निषद्य ॥१५॥ । अनेकता चेदेकः ॥१६॥ । यः कश्चित्  
 नानाधिष्ठो न चेत् तन्मुद्रिकया निर्गतिः ॥१७॥ । न मण्डलकेन ॥१८॥ ।  
 नार्धमण्डलकेन ॥१९॥ । न द्वावेकत्र ॥२०॥ । पृष्ठान्ते ॥२१॥ । प्राभूत्वं चेद् द्वित्राण्यु-  
 त्तुज्यात्तनानि ॥२२॥ । अतदासनधेत् ॥२३॥ । तिहामने च ॥२४॥ । स्थापयेत्  
 खेटकटहकम् ॥२५॥ । आस्तरमन दद्यात्, चालुकाञ्छाधिकं वा ॥२६॥ । काले घेतत्

फालं शोचयेत् <sup>(१)</sup> । धर्मश्रवणं कुर्युः निशायाम् <sup>(२)</sup> । अष्टम्यां चतुर्दश्यां  
 पञ्चदश्याञ्च <sup>(३)</sup> । नैतदकरणे ग्लानस्य दोषः <sup>(४)</sup> । नाध्येष्यमाणोऽस्य भाषणार्थं  
 न प्रतीच्छेत् <sup>(५)</sup> । अशक्त्यादावध्वेषकं संज्ञपयेत् <sup>(६)</sup> । असति भाषणके परिपाटि-  
 कयोत्सार्थं भाषेरन् <sup>(७)</sup> । अन्तत एके(?) कै)कां गाथाम् <sup>(८)</sup> । प्रदीपस्थानु-  
 करणम् <sup>(९)</sup> । अर्धचन्द्राकारेण प्रक्षि(?) क्षी)रिष्याकारेण वा धर्मश्रवणसंगतिं  
 प्रज्ञपयेत् प्रक्षीरिष्याम् <sup>(१०)</sup> । अभ्यवकाशे धर्मश्रवणे वितानकदानम् <sup>(११)</sup> ।  
 घातवर्षे प्रवेशनम् <sup>(१२)</sup> । न ततो धर्मश्रवणमुत्सृजेयुः <sup>(१३)</sup> । गृहृतं स्वविरोऽप्रेगतं  
 तूष्णीमागमयात्र धर्मे भाषेतान्यं वार्धीच्छेद्-वद भिक्षो धर्मम् <sup>(१४)</sup> । भाषमाण-  
 [म]न्यार्थं धर्मश्चेदुत्साहयेत् <sup>(१५)</sup> । न चेद् धारयेत् <sup>(१६)</sup> । गृहिणामत्रागतानां  
 धर्म(?) र्म)कथां कुर्यात् <sup>(१७)</sup> । तीर्थ्यञ्च प्रत्यत्रतिष्ठमानं सुनिगृहीतमदर्शयत्कोप-  
 मननुस्रयम् <sup>(१८)</sup> । न पर्षदमादाप देशको गच्छेत् <sup>(१९)</sup> । निर्गतामेनां धर्ममुखै  
 निवेशयेत् <sup>(२०)</sup> । सगौरवः सप्रतीशो नीचचित्तोऽवगाहेत् <sup>(२१)</sup> । सत्कृत्य देशवेत् <sup>(२२)</sup> ।  
 सगौरवो धर्मे स्थिरः <sup>(२३)</sup> । अविक्षिप्तमानसः <sup>(२४)</sup> । युक्तयुक्तैः पदैः <sup>(२५)</sup> ।  
 अव्यवकीर्णैः सानुसन्धि <sup>(२६)</sup> । मैत्रानुकंपानिरामिपचिचः <sup>(२७)</sup> । हर्षरुचितुष्टीः  
 कुर्वन् <sup>(२८)</sup> । तिष्ठेदममाप्तेऽर्धवशेन <sup>(२९)</sup> । भाषेत स्वरेण धर्मम् <sup>(३०)</sup> । कुर्यादुत्थाय  
 विभागम् <sup>(३१)</sup> । उद्धृत्य चार्थः(र्थ?)रूयाम् <sup>(३२)</sup> । भङ्गसन्धी च <sup>(३३)</sup> । दिवसस्य  
 गणनं संघस्यविरेण सूत्रप्रोतबंधशलाकासंचारणेन <sup>(३४)</sup> । उपधियारिकेन तत्  
 आगम्यारोचनं संघे <sup>(३५)</sup> । विशेषितस्य <sup>(३६)</sup> । पक्षभेदेन <sup>(३७)</sup> । विहारस्वामिदेव-  
 सार्थञ्च गाथाभाषणे भिक्षुणां नियोगस्य वचनम् <sup>(३८)</sup> । अनन्तरम् <sup>(३९)</sup> । अद्य  
 शुक्लपक्षस्य प्रतिपद् विहारस्वामिनो विहारदेवतानां चार्थाय गाथां भाषध्वमिति <sup>(४०)</sup> ।  
 विहारस्वाम्युपनिमन्त्रणवचनम् <sup>(४१)</sup> । एवं नाम दानपतिः[ः] श्वो भिक्षुसंघं मन्त्रे-  
 नोपनिमन्त्रयते तं भदन्तः[ः] कल्याणैः मनोभिः प्रत्यनुकम्पन्तामिति <sup>(४२)</sup> ।  
 ऊनरात्रपादनं अर्धमासावशेषतायामृतोः <sup>(४३)</sup> । अधिकमासककरणं राजानु-  
 वृत्त्या <sup>(४४)</sup> । ज्योतिषिकानुवृत्त्या नक्षत्रतानुगतिः <sup>(४५)</sup> । नाविचार्यानागमन्य  
 पोषधं शून्योऽयमिति सीमानं वक्षीयुः <sup>(४६)</sup> । अनङ्गमरूढो ज्ञातवावद्धत्वस्य <sup>(४७)</sup> ।  
 निस्तत्वयापि प्रसन्नविधः <sup>(४८)</sup> । कल्पिकत्वस्य च कुटेः <sup>(४९)</sup> । न कल्पते सीमा  
 सीमाः परिक्षेपः <sup>(५०)</sup> । कल्पते भण्डलकभिक्षुणीवर्षकयोर्द(?) कान्तं च <sup>(५१)</sup> ।  
 व्यवतिष्ठते सीमायाचतुष्टयादेकवृक्षेऽनेका मर्यादा <sup>(५२)</sup> । व्यवहारिकस्यात्र  
 चिह्नत्वम् <sup>(५३)</sup> । अनेवंभूतत्वमृद्धिभाषाकृतयोः <sup>(५४)</sup> । अस्थिरत्वं चन्द्रार्कितारा-  
 किरणोर्मितरङ्गाणाम् <sup>(५५)</sup> । सीमान्तरं वद्य(?)कं सीमा <sup>(५६)</sup> । असत्त्वमेकत्वस्य  
 विच्छेदे <sup>(५७)</sup> । विषपत्वं संक्रमस्य शिरश्चेत् <sup>(५८)</sup> । अनुवृद्धिस्य घस्तो पुनः  
 कृतो (?) <sup>(५९)</sup> । अप्रतिप्रसन्नप्रयोगतायाम् <sup>(६०)</sup> । नोर्ध(?) घं)सत्तरात्रादविच्छेद-

भूतं नभः ॥१॥ । सत्त्वेनैवात्र न व्यवहारः कुतः सवर्द्धतया ॥१॥ । नो(?) र्ध्व-  
 मध्यतोऽर्ध्वतृतीययोजनान्तात् सीमो वन्धस्य रूढिः ॥१॥ । एतस्मादधोर्ध्व(?) र्ध्व  
 स्तरसांबन्धस्य तलवन्धम् ॥१॥ । अरूढिरविप्रवा संवृतेरवद्धसीमतायां भूमेः ॥१॥ ।  
 अपेति पाशे(?) र्ध्वस्य ॥१॥ । नास्यास्याः ॥१॥ । स्तूपग(?) गृहाङ्गणपोषधा-  
 मुखेष्वपि पोषधे संसृज्यता ॥१॥ । दत्तत्वं छन्दादेः संधे दत्तता ॥१॥ । यस्य कस्य-  
 चिदतस्तदारोचकत्वेन भवनीयत्वम् ॥१॥ । नैनं वहिःसीमस्यो ददीत दापयेत्  
 वा ॥१॥ । न परंपरया ॥१॥ । दुष्कृतं ग्लानावशच्च(?) प्राणव्रह्मचर्यान्तरायमीता-  
 दन्यस्य दाने ॥१॥ । अनारोचनेऽनादरात् ॥१॥ । निर्दोषं वहिःसीमा(इय?)नया  
 मीत्या नयनम् ॥१॥ । मिश्रुणां गणनमुपधिवारिकेण पोषधे शलाकाचारणेन ॥१॥ ।  
 सुप्रवृत्तस्या(स्यो?) र्ध्वपदेऽप्यस्तरन्तायामुद्देशः ॥१॥ । संघस्या(?) र्ध्वविरस्य ॥१॥ ।  
 अप्रतिबलत्वे द्वितीयस्य ॥१॥ । तृतीयस्य तस्यापि ॥१॥ । तस्यापि धारेण ॥१॥ ।  
 अन्यस्याशक्तावधेयणम् ॥१॥ । अप्रतिपत्तौ संधेन ॥१॥ । साततिकस्यापि ॥१॥ ।  
 विष्टाने शेषस्यान्वेन ॥१॥ । खण्डधरतायां यावद्भिः संपत्तिः ॥१॥ । अनयस्त-  
 प्रत्यपोपतायां प्रासादिकस्थानलोभेनासमीपे ग्रामस्य योध्व(?) करणम् ॥१॥ ।  
 करणमनवस्थाने सार्धेऽस्य गच्छद्भिः ॥१॥ । अनिष्टौ शब्दनस्य संक्षेपेन ॥१॥ ।  
 तावतोऽप्यधिष्ठानम् ॥१॥ । निरवद्यं सा(?) श्रो)दस्य प्रधानस्य च तुष्टिभावनाया-  
 माचारानुश्रावणम् ॥१॥ । करणश्च सन्निधौ पोषधस्य ॥१॥ । आपदि गृहिसन्निधौ  
 देशनम् ॥१॥ । अनुश्रावणश्चास्याचारस्य ॥१॥ । संज्ञस्ये च राजः ॥१॥ ।  
 नानिर्वाहणे परस्यारूढिः ॥१॥ । उद्देश्य सदिद्यन्तकालोद्देशुणां तन्वानुपगृहीति-  
 रत्रार्धमः ॥१॥ । श्रमणोपविचारादपेतत्वं प्रकान्तता ॥१॥ ।

॥ [ इति ] विभक्तादिगतम् ॥ ६ ॥

॥ समाप्तं पोषधवस्तु ॥ २ ॥

### ३. वार्तिकवस्तु ।

(१) तद्वाक्यसम्मतिः ।

वर्षा उपगच्छेत् ॥१॥ । त्रैमासीम् ॥१॥ । प्रतिपदि ॥१॥ । आपाट्वानन्त-  
 रायाम् ॥१॥ । श्रावणाया[म्] वा ॥१॥ । विहारं कलायैः दशाहार्दमासेन  
 भविष्यत्तायाम् ॥१॥ । सप्ताहैरित्यपरम् ॥१॥ । पूर्वाह्ने शयनासनस्य पावनम् ॥१॥ ।  
 आपादकटिच्छकात् ॥१॥ ।

॥ [ इति ] तद्वाक्यसम्मतिः ॥ १ ॥

(२) शलाकाचारणम् ।

अपारणेऽनेकस्य ॥१॥ । अक्तगन्धेधाज्ञेरीपटलकगने शुद्धेः वामस्युपनिक्षिप्ताः  
 शलाका शृद्धान्ते निवेश्य याज्ञायां च "अस्मिन्नावासे क्रियाकारो यो मुष्मा-

(१) कर्मोत्सर्गहे तेन क्रियाकारेणासिन्नावासे वर्षावस्तुं शलाकां गृह्णातु, न च वः केनचिदन्तर्वेषे संघमध्ये रणमुत्पादयितव्यो यो वः कस्यचित् किञ्चि-  
ज्ज्ञानाति स इदानीं वदतु यो योऽन्तर्वेषे संघे रणमुत्पादयिष्यते तस्य संघ उच्चर  
उपपरीक्षितव्यं मत्स्य (१ मंस्य) त” इति भिक्षून् वेदयेत् ॥ १ ॥ ग्रहणोपशमनं प्रति  
संघं ज्ञापयेदन्यः ॥ १ ॥

॥ [इति] शलाकात्र(व)चारणम् ॥ २ ॥

(३) वासवस्तुग्रहणम् ।

शास्तुरग्रे ग्रहणम् ॥ १ ॥ अर्धमुक्तेनामनेनान्यैः ॥ १ ॥ आचार्योपाध्यायैः  
श्रामणोरामाणां ॥ १ ॥ नैवासिकानामस्ये (१ स्व) तदन्ते शनैः स्थापनम् ॥ १ ॥  
गर्णयित्वा प्रवेदनमियद्भिर्भिक्षुभिरसिन्नावासे शलाका गृहीतेति ॥ १ ॥

॥ [इति] वासवस्तुग्रहणम् ॥ ३ ॥

(४) पात्रतद्ग्रहणादि ।

अन्ततः (१ तः) तस्य तचारककुञ्चिकेन पुरतः स्थित्वा रोचनोपक्रमं “स्वविरामु-  
कविहारः सलाभः सचीवरिको गृहाण” इति यथागुणम् ॥ १ ॥

॥ [इति] पात्रतद्ग्रहणादि ॥ ४ ॥

(५) शयनासनादिदानम् ।

ज्ञात्वोद्देशमुख्य (१ स्व) स्तूपसंघार्थे गतस्य गत्या भागित्वं वृक्षमूलहरितशाद्वल-  
स्थण्डिलेष्वपि यथावृद्धिकोद्देशः ॥ १ ॥ द्वादि (१) भ्योऽसंभावनं लयनस्यान्ततो  
निष्यन्दनप्रामाण्येनास्य भूमेः ॥ १ ॥ पात्रकरकोशरु (१ ट्टु) कदन्तकोष्ठस्थानस्था-  
पेक्षणम् ॥ १ ॥ द्वारकोष्ठकसोपानकोष्ठिकाप्रासादोपस्थानभक्तजेन्ताकशाला  
नोद्देशेषुः ॥ १ ॥ न रात्रौ शयनासनम् ॥ १ ॥ नाच्युपितं ग्लानेनान्यसै  
लयनम् ॥ १ ॥ नैतद् द्वाप्र (१) स्यभावेन ददीरन् ॥ १ ॥ नैनमुपस्थापकं वा कर्म  
कारयेन् ॥ १ ॥ न कुष्ठी सांचिकं शयनासनं परिभुञ्जीत ॥ १ ॥ प्रत्यन्तेऽस्य  
विहारं दद्युः ॥ १ ॥ न सप्तवेऽन्यत्र सांचिके तिष्ठेदाप्रासादपुष्करिणीद्वारकोष्ठ-  
परिषण्डचक्रमस्थानवृक्षात् ॥ १ ॥ न वर्चःप्रस्रावकुट्योः प्रविशेत् ॥ १ ॥ उपास्थाय-  
कदानेनैनमनुकम्पीरन् ॥ १ ॥ पात्रचीवरस्थानार्थमारण्यकेभ्यः सर्वदा लयन-  
मुद्देशेषुः ॥ १ ॥ वर्षोपगमने स्युः केचिदागन्तव इति वस्तु शयनासनञ्च  
स्थापयेद्युः ॥ १ ॥ प्रभूतागतावुपगतैः पुनरुद्देशः ॥ १ ॥ नोर्ध्व (१ ध्व) मुपनायिकातः ॥ १ ॥  
व्यादेरसंभावनाभूय्येकस्य ॥ १ ॥ नैकाहस्यार्थे शयनासनं गृह्णीत ॥ १ ॥  
न लाभलोभात् विहारम् ॥ १ ॥ सर्वे परिभुञ्जीत ॥ १ ॥ पूर्वाह्ने क्वचित्  
पाठस्थाध्यायावस्थानचक्रमाणां क्वचिद् मध्याह्ने परत्रान्यत्र चीवरस्थापनमावा-  
सोऽपरत्रै रत्रावित्यसं योगः ॥ १ ॥ एण्डकुल्लमुपगतो वासवस्तुनः प्रति-  
संस्कुर्वति ॥ १ ॥ वर्षकस्य वर्षोपिताभिक्षुणीभिरभिसंस्करणम् ॥ १ ॥ कलिकर-

निवेशासंपत्त्यर्थम् <sup>(१)</sup> । हेमन्तिकग्रौष्मावपि शयनासनग्राहो(?) कुर्वीरन् <sup>(२)</sup> ।  
 काले(?) तले(?)न चोद्देशम् <sup>(३)</sup> । तद्यथा सामन्तकस्यापि विहारपरिवेणयोः <sup>(४)</sup> ।  
 प्रासादस्यापि सैतदः(?) <sup>(५)</sup> । नोर्ध्वमेनां प्रक्रान्तत्वादेपामनुवर्त्तयेरन् <sup>(६)</sup> ।  
 न प्रकृतिस्थार्थे घट्टे(?) कुर्वीरन् <sup>(७)</sup> । न भाविनार्थेन <sup>(८)</sup> । अपममुत्रत्वावि-  
 होरात्रे तदवपये वा भविष्यत्ययममुत्रायमाचार्यस्य भविष्यत्ययमुपाध्यायस्य  
 सार्द्धम्ब्रह्महारिणोऽयमन्तेवासिन आलम्बकादेरयमिति विहारानुद्दिशेयुः <sup>(९)</sup> ।  
 न प्रतीच्छेत् <sup>(१०)</sup> । लतापारिकस्यालयप्रतिविधानार्थं सम्मतिः <sup>(११)</sup> । [न]र-  
 ष्ढानां सातनम् <sup>(१२)</sup> । शौद्राणां सूत्रकेणाधुच्य वेष्टनम् <sup>(१३)</sup> ।

॥ [ इति ] शयनासनादिदानम् ॥ ५ ॥

(६) उद्देश्यत्वादि ।

सत्त्वेऽनेकस्य वृद्धपीठानामप्युद्देशत्वम् <sup>(१)</sup> । संस्तराणां च <sup>(२)</sup> । न सांघिकम-  
 वनदं नाशनधर्मेण शुचिना श्रामणेराय शयनासनं कश्चिद् दद्यात् <sup>(३)</sup> । न  
 भिक्षुण्यै <sup>(४)</sup> । दानमसौ विहारस्यात्र वाससम्पत्तौ पर्यन्ते <sup>(५)</sup> । शयनासनस्य च  
 शिष्टस्याप्रणीतस्य <sup>(६)</sup> । “न वदकेनचित् सांघिकं शयनासनम्बिना प्रत्यास्तरणेन  
 परिभोक्तव्यं न कल्पप्रत्यास्तरणेन न मलप्रत्यास्तरणेन” इति वेदयेत् <sup>(७)</sup> ।  
 अन्वर्धमासं च प्रत्यवेक्षेत् <sup>(८)</sup> । समयमुत्क्रम्य परिशुक्तावाच्छिन्द्यादौ रोच्य  
 निःश्रवे निःश्रितस्यान्यस्य संघे <sup>(९)</sup> । “अमुकेन दानपतिनामुकेन वैद्याधुच्य-  
 करेणामुकेन गोचरग्रामकेन श्वः संघो वर्षा उपगमिष्यति” इत्यारोचयेत् <sup>(१०)</sup> ।  
 अनुत्नादित्प्रतिविनोदित्वयोः कौकृत्यस्थान्यस्य च दुःखदार्मनस्यस्य सुखसौ-  
 मनस्यस्य चेत्यादित्प्रतिविनोदित्वयोः ग्लानोपस्थायकत्वस्य च सन्नद्धचारिषु भूतेः  
 प्रत्याशंसनेनावासं गोचरश्च पिण्डकभेषज्यदात्रोरयलोकयोपगमनम् <sup>(११)</sup> ।  
 छत्रे भिक्षोः पुरस्तात् <sup>(१२)</sup> । नानेकत्र विहारे <sup>(१३)</sup> । न यस्मिन्नभिक्षुकत्वमकपाट-  
 कत्वञ्च सहितम् <sup>(१४)</sup> । सत्त्वे दानपतिवैष्याधुच्यगोचरग्रामिकोपस्थायकानामु-  
 त्कीर्त्तनम् <sup>(१५)</sup> । न वहिःसीरुपरुणसुद्वमयेदनधिष्ठितम् <sup>(१६)</sup> । सप्ताह-  
 मधिष्ठितम् <sup>(१७)</sup> । सप्ताहमधितिष्ठे[द]र्थे धर्म्ये <sup>(१८)</sup> । तद्यथा नाम निर्वाचनविहा-  
 रप्रतिष्ठापनशयनासनदानधुवभिधान्नपनचैत्यप्रतिष्ठाप[न]यधिध्वजारोपणपूजाकर-  
 पालचन्दनकुंकुमसेकदानपाठकौकृत्यप्रतिविनोदनदृष्टिगतप्रतिनि[स्]सर्गपक्षसंप-  
 त्यवसारणपरिवासादिचतुष्कदानावत्तनग्लानप्रघसनेषु भिक्षोः <sup>(१९)</sup> । भिक्षुष्या  
 गुरुवर्ममानास्यदाने च <sup>(२०)</sup> । ब्रह्मचर्योपस्थानसंघृतेः शिक्षमाणायाः <sup>(२१)</sup> ।  
 उपसंपादने च <sup>(२२)</sup> । अत्र श्रामणेरस्य <sup>(२३)</sup> । श्रामणेरिकायाः शिक्षासंघृतिपाने <sup>(२४)</sup> ।  
 शिरोवेष्टनरजोदरणसीमन्तोन्नपनजटापहरणकुण्डलबन्धनेषु गृह्णिगृह्णिष्योः <sup>(२५)</sup> ।  
 संपावशेषगतमनुपसंपन्नानामपूर्वम् <sup>(२६)</sup> । उन्मजनमवसारणे गृह्णिगृह्णिष्योः <sup>(२७)</sup> ।

लङ्घयेदेतद् भक्तभैषज्योपस्थापकाभावे शक्तौ तैर्विना यापयितुम् <sup>(६)</sup> ।  
 श्रामण्यजीवितब्रह्मचर्यान्तरायसंभावने <sup>(७)</sup> । अनुलोमिकचित्तोत्पादनपापिक-  
 वाग्निश्चारणयोः भेदाय पदाक्रममाणे संघस्य <sup>(८)</sup> । नैतच्छान्त्यै स सम्भावनो  
 न गच्छेत् <sup>(९)</sup> । गतो न लङ्घयेत् <sup>(१०)</sup> । न प्रतिश्रुता(?) वर्षावासे नावासस्य  
 सम्बन्धनम् <sup>(११)</sup> । न कुर्वीत नास्त्यस्यैकपोषधतायामावासयोरुत्थानम् <sup>(१२)</sup> ।  
 अस्त्येकलामतायाम् <sup>(१३)</sup> ।

॥ वार्षिकवस्तु ॥ ६ ॥

(७) निदानादिगतम् ।

पञ्चानामपि निकायानामुपगन्तव्यत्वम् <sup>(१)</sup> । न शुद्धानां श्रामणे-  
 राणाम् <sup>(२)</sup> । अवापिकानाञ्च <sup>(३)</sup> । नैषामेव रूढिरुपगतेः <sup>(४)</sup> । न ग्राह्यत्वं  
 शयनासनस्य <sup>(५)</sup> । नासत्त्वे ग्राहस्य <sup>(६)</sup> । नासंमतेन ग्राहणम् <sup>(७)</sup> । नातुत्पादि-  
 तादौ पिटकधरकालिकृत्सदसत्तयोरसंश्रितत्वम् <sup>(८)</sup> । उपितत्वमनुपगतस्य  
 स्थानामोक्षे <sup>(९)</sup> । नाकाशे रूढिरुपगतेः <sup>(१०)</sup> । न नान्युत्सृज्य प्राप्तपृथिवीमुप-  
 निबद्धां वा भूमिस्थे स्थिरे संजनतोऽन्तरापयापित्वम् <sup>(११)</sup> । ध्वंसस्त[?]दशमभि-  
 निःसृत्याधर्मपक्षसंक्रान्तावरुणोद्गतेः न संदिग्धतायाम् <sup>(१२)</sup> । नान्ये(?न्ये)धिष्ठा-  
 नस्य पडहे रूढिः <sup>(१३)</sup> । ध्वंसोपगतनिष्कार्यं तस्याप्रतिनिर्मुक्त्यवस्थानयोः <sup>(१४)</sup> ।  
 पर्यन्तं परमत्र सप्ताहत्वम् <sup>(१५)</sup> । अलङ्घसंप्रतेरेप पर्यन्तः <sup>(१६)</sup> । अन्यस्य चत्वारि-  
 पद्मात्रः <sup>(१७)</sup> । दानमस्याः <sup>(१८)</sup> । नात ऊर्ध्वं वहि[?]वस्तव्यता <sup>(१९)</sup> । पञ्चानामपि  
 निकायानामेतत् <sup>(२०)</sup> । अन्तःसीम्नस्य रूढिः <sup>(२१)</sup> । मिश्रोः पुरस्तात् <sup>(२२)</sup> ।  
 अनाशंक्यमनादिसत्त्वं तीर्थस्य दृष्टेर्विवेचनार्थं ज्ञातेः करणीयेनागमाधिगम-  
 योरात्मनः कांक्षाविनोदार्थं गमनायैतत्कृतेः <sup>(२३)</sup> । अनुत्क्षेप्यत्वमुपगता-  
 स्य(?)स्य <sup>(२४)</sup> । निदर्शनं वासः <sup>(२५)</sup> ।

॥ [इति] निदानादिगतम् ॥ ७ ॥

॥ समाप्तञ्च वार्षिकवस्तु ॥ ३ ॥

## §४. प्रवारणवस्तु ।

(१) प्रवाराणाविधिः ।

न मौनं समाददीत <sup>(१)</sup> । शुद्धिमुक्त्योरनेन प्रत्यवगतौ स्थूलात्ययः <sup>(२)</sup> ।  
 दृष्टिश्रुतपरिशुद्धकाभिः वर्षोपितः संधं प्रवारयेत् <sup>(३)</sup> । पश्चिमेऽह्नि वर्षाणाम् <sup>(४)</sup> ।  
 गोचरा रोचयेयुः <sup>(५)</sup> । “यत्तः प्रभृति केलापनमिषद्भिः दिवसैः संघस्य  
 प्रवारणा भविष्यति गुप्ताकमारोचितम्भवतु” इति <sup>(६)</sup> । विहारस्य  
 मण्डनम् <sup>(७)</sup> । कृतागाराणां बन्धनम् <sup>(८)</sup> । राहानां चित्रणं स्तूपानां मोचन-  
 मोलनं च <sup>(९)</sup> । सिद्धासनस्य मण्डनम् <sup>(१०)</sup> । “अथ सर्वरात्रिकं धर्मश्रवणं

भविष्यति तत्र युष्मामिः सामग्री देया” इति गोचरारोच्य स्रजविनय-  
 मातृक[१]धर्मश्रवणदापनम् ॥१॥ परस्वान्तैः प्राक्कर्मतो धर्म्या विनिश्चय-  
 कथया रात्रेरतिनामनम् ॥२॥ प्रागरुणसंभेदात् प्रवारणात् कर्म ॥३॥ प्रवारणकं  
 संमन्थेरन् भिक्षुम् ॥४॥ अपारणे नैकम् ॥५॥ न्याय्यमत्रांशसः पंक्तौ व्यापा-  
 रणम् ॥६॥ दर्मानसौ चारयेत् ॥७॥ प्रवारणं प्रत्यन्वेन संवस्य ज्ञपनम् ॥८॥  
 प्रतिभिक्ष्या प्रवारणात् पुरतस्तिष्ठेत् ॥९॥ तस्मै प्रवारणं त्रिः ॥१०॥ द्विस्तावता  
 ग्लानकृान्तिशयनासनसंभेदकालातिक्रान्तिसम्बाधसंपत्तिसंभावने ॥११॥ ताव-  
 वापि सकृत् ॥१२॥ तेनापरस्मै निष्ठितायां पंक्तौ ॥१३॥ अभावेऽन्यस्मै ॥१४॥ सर्व-  
 संघेन प्रतिवारिते एतन्वस्य संघे निवेदनम् “साधु प्रवारितं सुष्ठु प्रवारितं”  
 इति ॥१५॥ सर्वे समर्थयेयुः ॥१६॥ येन तेनाश्वेः “स्वकेन वस्तुना वस्त्रप्र-  
 वारणमारभेत वचनतो गृहीत्वा संघेन लभ्यं भदन्ता एवं रूपेणापि वस्तुना  
 वर्षोपितं भिक्षुसंघं प्रवारयितुं” इति ॥१७॥ अतः श्रामणेरात् प्रवारयेत् ॥१८॥  
 ततो भिक्षुणीः ॥१९॥ प्रवारितत्वमधिष्ठाय गतस्वार्वाकृतप्रवारणायासह-  
 कृता ॥२०॥ न स्त्रियां परिवृत्त्यापि ॥२१॥ अशक्यतायामवस्थातुं भागप्राप्तं भिक्षु-  
 मचलोकयेद् गणप्रवारणेन ॥२२॥ प्रवारयेदन्तर्वेषं प्रक्रमिष्यन् करणीयेन ॥२३॥  
 स्थापयित्वापि वस्तुपुद्गलमुभयं वा ॥२४॥ प्रतीच्छेपुरेनाम् ॥२५॥ स्थापनेऽनन्त्य-  
 तामुपनीय “न ह्येव वयमायुस्म(१८८)नित्यर्थे सन्निपण्ण[१:] सन्निपतिताः  
 कश्चिदायुष्मन् वस्तु स्थापयेन्न पुद्गलमित्यपि तु शीलविशुद्ध्यर्थं पोषण उक्तौ  
 भगवता धर्मविशुद्ध्यर्थं प्रवारणा, चेदाकांक्षसि प्रवारय” इति ॥२६॥ पुद्गलं  
 स्थापयेन्न न वस्त्विति वस्तु स्थापयेत् पुद्गलश्चेति अभद्रः प्रतीष्टैः व्यपलाये  
 स्थापनस्य प्रतीष्टतायां स्थापितस्य वा ॥२७॥ नैवंविधं किञ्चिदस्तीतिनादे मृषा-  
 त्वमत्र पूर्वस्यास्य वा ॥२८॥ कलिकृतां चेद् भिक्षुणामाग[मन]मुपगताः मृष्टयुः,  
 द्वित्रिपोषधाक्रान्तियेद् प्रवारयेयुः ॥२९॥ असंपत्तौ यश्च पाणिमण्डकानि  
 संमन्थेरन् ॥३०॥ काव्यस्त्रलपकेन प्रत्युद्गम्य पात्रचीररप्रतिधमनं लयनमालंक-  
 कृदागारोद्देशः ॥३१॥ स्नानलेहलाभकरणम् ॥३२॥ करणधर्मश्रवणदानमित्येषां  
 श्लोभनानि प्रयुञ्जीरन् असंपत्तात्तमीभावस्य पोषणं कुर्वीरन् मण्डलकेषु ॥३३॥  
 ननु युष्माकमद्य प्रवारयेति धुराणानाम् “आगमयतायुष्मन्त आगन्तुका यूयं  
 नैवागसिक्वा अनेनाथेन” इति प्रतिवदेयुः ॥३४॥ प्रक्रान्तेषु प्रवारणम् ॥३५॥

॥ [ इति ] प्रवारणावस्तु ॥ १ ॥

(२) छुद्रकादिगतम् ।

नाकृतक्षमणः(१०)सान्तरस्य प्रवारयेत् ॥३६॥ दशार्दमासेन भविष्यत्तायामस्ता-  
 स्वत्कालः ॥३७॥ सप्तारैरित्यपरः ॥३८॥ न मन्निपातः ॥३९॥ नासावसान्ता-  
 वि. ११

नाकृतसंभोदनसंनिहितानां सर्वस्तदा ॥१॥ । न रुपितं क्षमयेत् ॥२॥ । न भिक्षुणी  
भिक्षुं वहिरावासात् ॥३॥ । न पादयोर्निपत्य ॥४॥ । क्षान्ते निपत्य गमनम् ॥५॥ ।  
नैनां क्षमयन्तीमनादृत्य भिक्षुर्गच्छेत् ॥६॥ । न विलम्बयेत् ॥७॥ । संज्ञतेः  
क्षमनीयस्य पुरस्तादापनमभिव्रान् ॥८॥ । नानिष्टावुपायपर्येषणं नार्थ-  
येत् ॥९॥ । न चीरयेत् ॥१०॥ । न पर्यवस्थानापगतिं नोदीक्षेत् ॥११॥ । न क्षम्यमाणो  
न क्षमेत् ॥१२॥ ।

॥ [ इति ] छुद्रकादिगतम् ॥ २ ॥

॥ समाप्तञ्च प्रवारणवस्तु ॥ ४ ॥

§ ५; कठिनवस्तु ।

( १ ) छुद्रकादिगतम् ।

आस्तीणी(?)रन् कठिनम् ॥१॥ । यथा त्रयमेवमास्तीर्णस्य परभोजनमपि  
निर्दोषं गणभोजनमनामव्य ग्रामप्रवेशश्चीरविज्ञपनञ्च ॥२॥ । साधारण्यमस्य शिष्टैः  
लामस्य ॥३॥ । अनुत्थानमस्यापि कच्छिन्नपर्यधि मवर्षस्थानान्तरोपितवर्षेषु  
भूम्यन्तरस्थेषु च ॥४॥ । वि(?)ष्ठानमेतत्प्राप्ती ॥५॥ । भागिनो व्यनत्यथामणोरभू-  
म्यन्तरस्थालामे ॥६॥ । नोत्क्षिप्तः ॥७॥ । तत्प्राप्तिसिद्धधर्मपक्षेपु यातो भिक्षुषु ॥८॥ ।  
मौलकालप्रवारणपर्यन्तपर्यानिमित्तकास्तारकादिपर्यन्तसम्बन्धी चीररलामसंख्यं  
च त्रिचीवरम् ॥९॥ । सांघिकममृदितमविलिखितमपैलोतिकम् ॥१०॥ । न न  
वर्णितकम् ॥११॥ । अपरिभुक्तम् ॥१२॥ । दृढम् ॥१३॥ । असंबन्धानिमपट्टिकगण्डू-  
कपट्टि(?)रुपरिपण्डन (?) ॥१४॥ । अनैःसर्गिकसन्ततिशस्कन्नगतप्रत्याग-  
तम् ॥१५॥ । छिन्नस्यूतम् ॥१६॥ । निष्ठितं पञ्चकम् ॥१७॥ । उचरे वा ॥१८॥ । अनास्तीर्ण-  
पूर्वञ्च ॥१९॥ । आस्तीर्णम् ॥२०॥ । अनेकमपि ॥२१॥ । यावत्तदास्तारकः ॥२२॥ । चीवरा-  
न्तराधिष्ठानमेतत्तस्मादुद्धृत्याधिष्ठितानि ॥२३॥ । रोचयेन् सामग्र्याम् ॥२४॥ ।  
अनुपितम् ॥२५॥ । संमन्येरन्नन्तःसीम्नि ॥२६॥ । अस्तारकञ्च ॥२७॥ । यत्रास्योत्था-  
नम् ॥२८॥ । तस्यै ददीत ज्ञप्त्याधावनस्पृतिरजनेभ्रसौ पूर्वगमः स्यात् ॥२९॥ । द्वित्रा-  
नुष्ठानेन ॥३०॥ । निष्ठितं संपत्तौ द्वित्राणां स्वयं सूचीपदकानां दानम् ॥३१॥ ।  
आदानस्वयंकृति (?) तदन्तेप्यास्तरिप्याम्यास्त्वणोम्यास्त्वृतं मयेति यथासंख्यं  
चित्तस्योत्पादनम् ॥३२॥ । नायस्य हानावनुत्थानम् ॥३३॥ । “श्वोऽहमायुष्मन्तः  
कठिनमास्तरिप्यामि युष्माभिः स्वकस्वकानि चीवराण्युद्धर्तव्यानि” इति साम-  
ग्र्यामारोचनम् ॥३४॥ । सन्निपातगतानुष्ठानम् ॥३५॥ । गन्धपुष्पार्चितं सुरभिषूप-  
धूपितं चांगेरिपटलकस्यमेकं त्रिवा (?) नेकमादाय इद्वान्तेऽवस्थितेनास्त्वृतेस्त-  
म्पादनं प्रतिपदि ॥३६॥ । कार्त्तिकस्य ॥३७॥ । त्रिरुज्या ॥३८॥ । आस्त्वृणोमीति ॥३९॥ ।  
प्रतिभिक्षुमाप्रवः सित्वा “आस्त्वृतं” इति निवेदनम् ॥४०॥ । “साध्यास्त्वृतं सुधृत्वा-



सूतं योज्य लम्भश्चाशुशंसश्च सोऽस्माकं" इतीतरः ॥१॥ । प्रत्यनुभूतिवदस्यानुमो-  
दनम् ॥२॥ । सम्मुखीभूतेन ॥३॥ । कालेन कालं शोपयेदातापथेत् स्फोटयेत् ॥४॥ ।  
न धूमरजोगारे स्थापयेत् ॥५॥ । न राज्ञः ॥६॥ । नातो विप्रवसेत् ॥७॥ । नादा-  
यान्यत्र गच्छेत् ॥८॥ । नाशुचिकुटिं प्रविशेत् ॥९॥ । अम्पवकाशे तिष्ठेत् ॥१०॥ ।  
द्विविध उद्धारः स्वयं विपत्तीं(?)शुचिः)कृत्रिमश्च ॥११॥ । स्वयम्बिशुचिः प्राप्ते  
सीमान्तरस्य कठिनेन ॥१२॥ । उद्गतौ निराधिष्टन्ते(?)ऽन्तःसीम्नो रणस्य ॥१३॥ ।  
विच्छेदे तन्मण्डलान्तर्भावस्य ॥१४॥ । तमत्र प्रति ॥१५॥ । सीमातिक्रान्तावस्य  
संपाचिः ॥१६॥ । अप्रत्यागमनचित्तेन ॥१७॥ । अस्य चोत्पत्तौ बहिःसीम्नि ॥१८॥ ।  
अभावे चीवरकरणाभिप्र[?]येणानुस्यूतेस्तदेव ॥१९॥ । करिष्यता विच्छिन्नौ  
भावे ॥२०॥ । पत्यागतेषु (?) ॥२१॥ । त्रये करिष्यमाणस्यैवत् संस्थानमाशासमुच्छेदे  
प्रारब्धनष्टौ निष्ठान इति ॥२२॥ । उद्धर्तुनिधयवद् विमतिः ॥२३॥ । न कर्मणो  
न्यङ्कारमनुतिष्ठेयुः ॥२४॥ । फाल्गुणी तःकालः ॥२५॥ । अन्तरा ॥२६॥ । मुपित-  
कार्यतायामयोचीनोऽपि ॥२७॥ । आशुतेरस्मिन्ननुभूतवन्तं प्रत्यनुवृत्तिरनुशंसे ॥२८॥ ।  
असत्त्वेऽनुस्यूतेः ॥२९॥ । आच्छित्तेः सत्त्वे ॥३०॥ । नानुद्धृते सर्वेषां तात्कालिकं लाभं  
भाजयेत् ॥३१॥ ।

॥ [ इति ] कठिनवस्तु ॥ १ ॥

(२) पृच्छागतम् ।

यथाप्रधारणमास्तारः ॥१॥ । नापौषधान्ते ॥२॥ । उद्धारश्च ॥३॥ । तद्दिनत्व-  
मस्य ॥४॥ । उद्धृतत्वं पुनः पोषधकृतौ ॥५॥ । पृथगस्यास्तीर्य भिक्षेषु संपाचिः ॥६॥ ।  
धर्मवादिनां स तथा(?)स्तारः ॥७॥ । कृतेऽप्यत्रेतरैरेपामावासे लाभेऽर्हत्वम् ॥८॥ ।  
नोतिक्षसकानां प्रकृतिस्थकावासेऽस्थोत्थानम् ॥९॥ । भावयन्निवेशनमास्तारः ॥१०॥ ।  
भयति छन्ददानवशात् सहितेन करणीयस्य शिष्टैः कृतौ कृतत्वम् ॥११॥ ।  
तदपञ्चुतिरुद्धारः ॥१२॥ । तस्माददत्ता छन्दं स्वमसमापत्तयोः संनिपण्णेऽस्यानुत्था-  
नमास्तारस्योद्धृतेश्च प्राक्त्र(?)वणात् ॥१३॥ । उपितत्वमेकसीमतायां तत्रावासान्त-  
रौपितानामास्तारे ॥१४॥ । तत्स्थानत्वमास्तारकालेऽस्यामस्य ॥१५॥ । यत् तदास्त्वत्य  
पृथक् सीम[?]कृत्ये चास्य स्थानम् ॥१६॥ । प्रत्यागतं पृथक्त्वेऽस्यैपामुद्धारः ॥१७॥ ।  
प्रतिपक्षं भिन्नतायाम् ॥१८॥ । नानुद्धृतिरनास्तारोद्धारः ॥१९॥ । नानुत्थानकृत्वाद्-  
पूरकत्वम् ॥२०॥ । नानास्तारत्वादुद्धारः ॥२१॥ । निर्दोषमास्त्वत्कठिनस्य ॥२२॥ । विना-  
सांघाट्या ग्रामप्रवेशान्मृद्गाढके निपादात् ॥२३॥ ।

॥ कठिनवस्तुनि पृच्छागतम् ॥ २ ॥

॥ समाप्तश्च कठिनवस्तु ॥ ५ ॥

## § ६, चीवरवस्तु ।

(१) चीवरवस्तु ।

नाशस्त्रलूनं वासः परिभुञ्जीत ॥ छिन्नस्पृतं चीवरत्वायाधिष्टेत् ॥  
 भक्तिचित्रताशेषसममध्यान्यत्तद्गतपत्रमुत्पत्त्वपरिमाण्डितत्वं ॥ अन्तरवासं  
 उत्तरासंघं संपाटीञ्च ॥ कसुलकसंघ(?)क्षिके च यत् तद्विधे भिक्षुणी ॥  
 मतसंभवे याञ्जाया(?)पि ॥ नैतद्विहासरुतोद्गतिमागमयेत् ॥ रोहत्वन्या-  
 संपत्त्वापरककस्याधिष्ठानम् ॥ अच्छिन्नकस्य च ॥ आसेवकानामत्रदानं  
 संभवश्चेत् ॥ आगारिकविधस्य च ॥ नमतकौचवप्रावारस्थूलकम्बलपै-  
 लातिकमच्छिन्नमासैव(?)कदानसूतम् ॥ उत्क्षणादेवाशुचित्रक्षणं सम्पत्तौ  
 शयनासनं शोचयेत् ॥ नैनं सांघिकमखरमंचपीठप्रत्यास्तृतमतेनानिपादात्  
 संवरणं वा दवान्तर्दानमुपभुञ्जीत ॥ सर्वञ्च चित्रमभूयो विनष्टम् ॥ न  
 कल्पभूतेन मलवय(?)ता वा ॥ धारणं प्रत्यास्तरणस्य येन एकपुटं  
 न्याय्यम् ॥ द्विपुटं पैलौतिकम् ॥ अकल्पिकं चित्रोपचित्रम् ॥ पत्रमुख-  
 मस्य कुर्वीत ॥ अधस्तृतीयभागादां ॥ नैकरूपडमधितिष्ठेत् ॥  
 कण्डूप्रतिच्छादनं तद्वान् धारयेत् ॥ पञ्चपैरेनद्विसैः शोचयेत् ॥  
 कल्पते कोशेयमूर्णकं शानकं धौमकञ्च ॥ नातन्तोतमागेयम् ॥  
 केशमयनाभ्यौलूकपक्षित्वसमादानम् ॥ स्थूलमत्र ॥ अन्यदेतद्  
 भजनम् ॥ केशलुञ्चनपर्णशाब्जजिनसान्तरौचरया(?)पनतिरिटाङ्गनाडी-  
 सर्वनीलप्रवारणदीर्घदशफणदशकंचुकोष्णीपशिरोषेष्टनकुतपोष्टकंबलतीर्थकृध्वज-  
 ञ्च ॥ पु(?)लासपत्रपूरदीपवर्तिकामात्रतयापि समतयै[व?] विभजनम् ॥  
 विक्रीयकौचवद्विधानाम् ॥ न पाटयित्वा ॥ पञ्चानां लाभे भाजन-  
 करणम् “अद्यत्नाभो भाजयिष्यते तत्र युष्मामिः सन्निपतितव्यम्” इत्यारोचनं-  
 संघे ॥ गण्ड्या फोदनम् ॥ शलाकाचारणम् ॥ गणनम् ॥ प्रत्यंश-  
 प्रवारणम् ॥ ईशित्वक्रियमाणतायामान्त्यादिगतस्य ॥ नावसितत्वे ॥  
 कुलाभकेऽप्येतत् ॥ नानर्हः प्रक्रान्तायां तच्छाभक्रिया प्रविष्टेः ॥ तस्मान्नि-  
 युञ्जीत ग्रहणे प्रक्रामन् ॥ दस्युत्वमग्रहणे प्रतिज्ञातवतः ॥ पणपञ्चकात्  
 प्रभृति कुलाभके ॥ नानुक्तो गृहीयात् ॥ गृहीपादाचार्योपाध्यायो  
 वा ॥ विश्रम्भस्थानार्थञ्च ॥ नास्वपक्षार्थम् ॥ शयनासनेऽप्येतत् ॥  
 भक्ते वा ॥ परस्परार्थे गृह्णन् विज्ञपयेत् ॥ नानाभवन्तमन्तर्भूयः ॥  
 नैकत्वमर्द्धस्य सुवृहता च लब्धेरनर्हप्रवेशे कारणम् ॥ अनर्हः संघला-  
 भस्याधर्मपक्षेषु पतितो भिक्षेषु ॥ उपेतत्वं बहुवरमुपितस्य तत्कालके लाभे  
 हानायास्याश्चौ मृत्यौ च ॥ यथाविनियतिलाभस्य व्यवस्था ॥ लब्ध-

भिद्य ॥ । कृत्स्नप्रतिपादनेऽपि ॥ । कर्मसीमा संवस्थापरिच्छेदे परि-  
 च्छेदः ॥ । तत्त्वमत्रैकादेः ॥ । धर्मलाभे तद्ग्राणकानामीशित्वम् ॥ । एकार्प-  
 णायाधारणं तत्त्वेऽत्र पर्यन्तः ॥ । अनर्हत्वं भिन्नव्यञ्जनस्येतरसन्निधौ मृत-  
 परिष्कारे ॥ । तथोत्क्षिप्तस्य ॥ । असांनिधौ वा निवृत्ते निमित्ताद्येतसि ॥ ।  
 अभिन्नत्वमस्य तारा(?)दीयैतद्ग्राह्यतायाम् ॥ । भिन्नत्वं भिन्नस्य ॥ । नान्यस्य  
 प्रव्रजितात् सन्नद्धचारिणस्तदीशित्वम् ॥ । न ज्ञप्त्याधिष्ठिते प्राप्तस्य पूर्व-  
 चरमेण वा ॥ । कस्यचित् ततः संवष्टुद्धनवकयोः दानं तदाख्यम् ॥ ।  
 यत्राधिष्ठेयस्य गतता तस्सीमान्तर्गतानामधिष्ठा[?]तृत्वम् ॥ । अकरणमत्र मरण-  
 स्थानता ॥ । सीमान्तरीकात् स्थल(?)प्रे कायेऽन्यत्र वा यातामाक्रान्तिस्तावद् गता-  
 नाम् ॥ । सप्रतिवस्तुकत्वे यत्रासौ तद्गतत्वं परिष्कारस्य ॥ । प्रतिवस्तुकेनान्य-  
 स्थमधिधिष्ठेयुः ॥ । प्रेषितस्याप्रतिक्षिप्तस्य संप्रदानेन तदीयत्वम् ॥ । प्रतिक्षिप्तस्य  
 प्रेषयितृत्वम् ॥ । प्रतिक्षिप्तस्यापि तेन ॥ । बहिरस्य रुढिः ॥ । सीम्नोऽन्तः  
 संज्ञिना केवलाधिष्ठानम् ॥ । नाकृते निर्हारसत्करणधर्मश्रवणदक्षिणादेशने  
 ऽधिधिष्ठेयुः ॥ । अन्तर्गृहस्थत्वे पात्रचीवरस्य यस्यै गृहपतिना दानं तस्ये-  
 शित्वम् ॥ । अर्हश्चेत् ॥ । विहीनश्च तेन ॥ । अदाने याचितवतः ॥ ।  
 क्रमे प्रथमम् ॥ । असत्त्वेऽनुदेशत्वात् शृष्टौ गतवतः ॥ । तद्वत् क्रमे ॥ ।  
 एनिकोद्भूतो तद्देयपरिमाणस्य तद्गामित्वं मृतपरिष्कारस्य ॥ । विभक्त-  
 स्यापि ॥ । यत्तेन सार्द्धमवस्थितं तस्य देयत्वं ग्राह्यता वा न तस्यैव ॥ ।  
 नानेन सन्नद्धचारिणामृषित्वम् ॥ । रात्रा(?) दीपित्वं संभावने यावच्च  
 एतत्तावत्सु नावकर्मिकस्य विनियोगः समं स ग्लानोपस्थायकत्वरत्नगामित्वं  
 परिष्कारपट्टकस्य नाधिष्ठेयत्वम् ॥ । सोत्तमाथममध्यमस्य ॥ । साधारण्य-  
 मनेकत्वे तस्य ॥ । प्रक्रान्ततायां ग्लानस्य मृत्यौ तादर्थ्यं देयत्वम् ॥ ।  
 नैतन्मृतद्रव्येऽनर्हस्य ॥ । न नान्यत्रोपगते ॥ । सर्वाहृत्वमत्रानु[प]संपन्ने ॥ ।  
 हायते ग्लानस्योक्तोक्तेन दाने यथोक्तेन दाने यथोक्तं कार्यत्वम् ॥ ।  
 अप्रगमो मृतकालखत्वसंपादने धनिनः ॥ । प्रगमो गृहस्थस्य ॥ । निर्यात्य  
 गृहिणि मृते पुत्रदारस्य यथासुखकरणम् ॥ । हस्त्यश्चोष्ट्ररवेसरसन्नाहानां  
 राशि निर्यातनम् ॥ । त्रये हिरण्यसुवर्णान्यकृताकृतानाम् ॥ । रत्नानाञ्च ॥ ।  
 स चेदन्यदेतत् तदंशत्वेनार्थि(?)रिक्तत्वेऽपि न चेदेवमेव बुद्धे मुक्तानाम् ॥ ।  
 महारत्नस्य च ॥ । लेपस्य विष्ट्रा(?)भिर्गन्धबुद्ध्यां दानम् ॥ । अतर्दा(?)त्रौधि-  
 कस्य प्रतिमागन्धकुट्टिचैत्योपस्तरणे विनियोगः ॥ । शुद्धवचनलेखन-  
 सिद्धापयोर्धार्मिकस्य ॥ । यानस्य प्रतिमायाम् ॥ । प्रजार्थं तदंशानाम् ॥ ।  
 यष्टीनाञ्च तद्योग्यानाम् ॥ । अन्यासान्ना(?)शुचानां संघे ॥ । खकवचरकश्चची

शस्त्रकं कृत्वेपां शरणम् ॥१॥ । यथार्हमन्यस्य साधिकस्य निक्षेपभाजनं भोजनानि  
क्षेत्रगृहापणशयनासनापस्कारलोहनापितकुलालतक्ष-चरुटभाण्डदासी-दासकर्मकर-  
पौरुषगोमहिष्यजैडकभैषज्यबुद्धशास्त्रपुस्तकानां सुसाध्यलेखानां प्रथमार्हत्वम् ॥२॥ ।  
श्राद्धकपटकपावरकोप्यनरपुला(?) तैलकुतुपकरकुण्डिकान्यपुस्तकलेख्यवर्णकानां  
द्वितीयस्य ॥३॥ । तृतीयस्य पञ्चतिलत्रोहिष्टुद्रभापावरधान्यान्नपानानाम् ॥४॥ ।

॥ [ शक्ति ] चीवरवस्तु ॥ १ ॥

( २ ) छुद्रकादिगतम् ।

सम्रत्वं (?) मण्डलार्धमण्डलमेपु कुर्वीत ॥१॥ । मानार्थं तत्प्रमाणयाष्टि-  
धारणम् ॥२॥ । पत्रमुखेषु च ॥३॥ । तत्प्रमाणशलाकाधारणम् ॥४॥ । पर्यन्तोऽस्य  
प्रकर्षे चत्वार्यङ्गुलानि ॥५॥ । काकवितस्तिर्वा ॥६॥ । अपकर्षे द्वे सार्धे बांगुष्ठोर्न  
वा ॥७॥ । न भूमौ चीवरं वितन्वीत ॥८॥ । कठिनस्यतदर्थं करणम् ॥९॥ ।  
दारुमयं वंशमयं वा ॥१०॥ । चतुरस्रकं कृतवन्धार्थं स्रजकावकाशार्थं छिद्रं तदा-  
ख्यम् ॥११॥ । यावचीवरम् ॥१२॥ । शस्त्रकेन पाटकम् ॥१३॥ । धारयेदेनम् ॥१४॥ ।  
काकचञ्चुकाकारं कुकुटपक्षकाकारं वा ॥१५॥ । नान्यदायसात् ॥१६॥ । न कमनमृष्टेन  
चित्रोपचित्रेण वा दण्डेन ॥१७॥ । न षडङ्गुलातिरिक्तस्य प्रमाणम् ॥१८॥ । नाष्टेत्य-  
परः ॥१९॥ । निष्प्रयोजनत्वमूनचतुरंगुलस्य ॥२०॥ । दत्तगोमयोपलेपे सेव-  
नम् ॥२१॥ । अस्मावे गोमयस्य शिक्तसंमृष्टे ॥२२॥ । सीव्येदेनम् ॥२३॥ ।  
सूच्यापि ॥२४॥ । धारयेदेनम् ॥२५॥ । नान्यां रीतिताम्रकंसभोमयीतः ॥२६॥ ।  
ताम्रापसोस्तीक्ष्णयोरित्यपरम् ॥२७॥ । धारयेदस्यागृहकं नाडिकं मृष्टिकं वा ॥२८॥ ।  
नैतदलज्जिथामणेरयोरधीनं कुर्वीत ॥२९॥ । मधुसिक्थम्रक्षिते सूचीशस्त्रकाणां  
कौटकाभक्षणापनतुके स्थापनम् ॥३०॥ । पायकस्थानपगमाय चीवरे दानं बलकं  
दत्त्वा ॥३१॥ । ग्रन्थिकायाश्च ॥३२॥ । न रजकेन रक्तमरक्तं वा वस्त्रं शोचयेत् ॥३३॥ ।  
न तद्वत् स्वयम् ॥३४॥ । नास्यास्तरे न काष्ठमित्तके ॥३५॥ । कुण्डालके शोचयेत्क्षुण्णे  
मुखोदकेन शनैः ॥३६॥ । परिवर्चनं हस्ताभ्याम् ॥३७॥ । अशकौ पदाभ्याम् ॥३८॥ ।  
कल्पते एवं गृहिणां शोचनम् ॥३९॥ । अन्यथात्वं चरणमस्य रक्षेत ॥४०॥ । सुधौस्युत(?)  
रक्तं पंसुकूलं भारयेत् ॥४१॥ । नाशुचिप्रक्षितं चीवरम् ॥४२॥ । शोषणं साधुतायै-  
संगुत्व(?) रक्तस्य छापातपे ॥४३॥ । विना वीलैका(?) ध्वनम् ॥४४॥ । आट्टतीपाद्  
विशिष्टत्वम् ॥४५॥ । तस्माद् बहुनान्वित्वे(?) विरादानम् ॥४६॥ । हीनतरत्वं  
परस्य ॥४७॥ । तस्मात् पृथक्स्थापनम् ॥४८॥ । लेखनमयं प्रथममित्यादि ॥४९॥ । पूर्वस्य च  
प्रथममुपयोगः ॥५०॥ । संगृहितचीवरस्य च ॥५१॥ । तस्मादपनीय कुण्डालके तन्मा-  
त्रमोल्लेकस्य दानम् ॥५२॥ । प्रथरणं द्रवे ॥५३॥ । चित्तलत्वमतिशुष्के ॥५४॥ । तस्मात्

मध्यस्य <sup>(१०)</sup> । कान्तारिकायां साधुशोषणम् <sup>(११)</sup> । ततापां अन्तलगने(?)न-  
 चर्षट्कैः <sup>(१२)</sup> । दुर्धराणां कक्षप्रज्ञा <sup>(१३)</sup> । अनेकपार्श्वरुतापैरङ्गस्य संपरिवर्तनं  
 पुनः पुनः <sup>(१४)</sup> । नवरङ्गस्य नवेवैव साधु दानम् <sup>(१५)</sup> । पुराणस्य पुराणेषु <sup>(१६)</sup> ।  
 शोषणं नवानामातपे <sup>(१७)</sup> । पुराणानां छायायाम् <sup>(१८)</sup> । पानीयोच्छ्रकस्याचिचलतायै  
 दानम् <sup>(१९)</sup> । अपरेद्युः <sup>(२०)</sup> । न मेघ्यां(?) चक्रमे वा रङ्गकर्म कुर्युः <sup>(२१)</sup> । न  
 विहारे <sup>(२२)</sup> । उपर्यस्य करणम् <sup>(२३)</sup> । नाचामनिकासामन्तके <sup>(२४)</sup> । प्रलिप्ते तत्र  
 प्रदेशे दानम् <sup>(२५)</sup> । शुद्धाप्रवालित्त्रेच्छोचनम् <sup>(२६)</sup> । प्रस्तुते चेद् वातवर्षागमः  
 करणं शासादे <sup>(२७)</sup> । प्रलिप्तेस्तत्र प्रदेशे कृते करणम् <sup>(२८)</sup> । गोमयेन मृदा वा <sup>(२९)</sup> ।  
 नासंपन्नकल्पाकोटितप्रत्याकोटितचीवरं निक्षिपेत् <sup>(३०)</sup> । नाशुचौ प्रदेशे <sup>(३१)</sup> । न  
 गुरुणा सति पराक्रमे भारेणाक्रमेत <sup>(३२)</sup> । नान्यपरिभोगेन परिभुञ्जीत <sup>(३३)</sup> ।  
 नोच्चारप्रसावकरणाशुचिपरिकर्मणेषूचरासंघप्रावृत्तिं भजेत <sup>(३४)</sup> । नास्मिन्नि-  
 पयेत् <sup>(३५)</sup> । न पिण्डपातचर्याभोजनचैत्याभिवन्दनसामीचीकरणं संघसन्निपा-  
 ताववादधर्मश्रवणानुभवनान्यस्यां व्यापृतौ सांघाव्याः <sup>(३६)</sup> । नास्यां निपीदे-  
 निपयेत् वा <sup>(३७)</sup> । नाक्रम्येनाम् <sup>(३८)</sup> । नानपने यस्य कस्यचिद्विद्युञ्जीत <sup>(३९)</sup> । न  
 कायसंस्पर्शकं परिभुञ्जीत <sup>(४०)</sup> । कक्षघर्मेण दक्षिणस्यास्यां(?)नाननत्तपतिः <sup>(४१)</sup> ।  
 तदभूत्यै तत्र प्रदेशे वस्त्रस्यासां दानम् <sup>(४२)</sup> । अर्धहस्तवितस्तिकस्य <sup>(४३)</sup> ।  
 उभयोः पार्श्वयोरष्टद्वयेण लगनम् <sup>(४४)</sup> । कालेन कालमस्य शोचनं  
 रञ्जनञ्च <sup>(४५)</sup> । गैरिकेनास्यैतत् <sup>(४६)</sup> । धारयेत् मुखपोच(प्रोञ्छ)नम् <sup>(४७)</sup> ।  
 श्वत्कायः कायोद्वर्षणम् <sup>(४८)</sup> । अभ्यन्तरे चीवरादस्य आवरणम् <sup>(४९)</sup> । लग्नस्य  
 कसायोदकेन क्षोदमिश्रेण गते मयित्वा मन्दमन्दमपनयनं पूषशोणितस्य च <sup>(५०)</sup> ।  
 कालेन कालमस्य शोचनञ्चोपणं रञ्ज(ञ्ज)नञ्च <sup>(५१)</sup> । धातुनास्यैतत् साधु <sup>(५२)</sup> । न  
 परे कचन चीवराणि स्थापयेत् <sup>(५३)</sup> । वंशस्य तदर्थं समायोजनम् <sup>(५४)</sup> ।  
 श्लोणिकायास्तदर्थम् <sup>(५५)</sup> । क्रियमाणे विहारे <sup>(५६)</sup> । न कृते छिद्रणम् <sup>(५७)</sup> ।  
 निदर्शनं विहारे परिवेषेणोच्येतत् <sup>(५८)</sup> । लतारज्वोरस्य(?)संपचिः <sup>(५९)</sup> । धृषिकया  
 साधु वस्त्राणां नयनम् <sup>(६०)</sup> । कुर्वीतेनाम् <sup>(६१)</sup> । त्र्यध्वर्धहस्तकस्य द्विगुणीकृत्य  
 सेवनम् <sup>(६२)</sup> । मध्ये मुखकरणम् <sup>(६३)</sup> । जालकसात्र दानमसूत्रकेण <sup>(६४)</sup> ।  
 अपरेण चन्धनम् <sup>(६५)</sup> । उपरि परिभुज्यमानानां स्थापनम् <sup>(६६)</sup> । अथलोक्य  
 शोणामिष्यत्तायाम् <sup>(६७)</sup> । गुरुननुज्ञातो गच्छेत् <sup>(६८)</sup> । कृतस्यावाससेकादिः <sup>(६९)</sup> ।  
 पर्षया वा कथयाध्वनि गच्छेदार्येण वा तूष्णीम्भावेन <sup>(७०)</sup> । विश्रामस्थाने गाथां  
 मापेतापा(?)म् <sup>(७१)</sup> । पानीयप्रहणस्य च <sup>(७२)</sup> । यस्य तद् पायनीयं तद्गृह्णिय <sup>(७३)</sup> ।  
 अपरां च देवताम् <sup>(७४)</sup> । वासस्य त्रिदण्डकम् <sup>(७५)</sup> । धारयेत् कान्तारि-  
 कायाम् <sup>(७६)</sup> । तत्प्रमाणमध्यर्धं शतमुपादाय हस्तानामाशुवाद् <sup>(७७)</sup> । देशानु-

रूप्येणेत्यपरम् ॥१॥ । न विनैतया दुर्लभाकूपानीये देशे चारिकां चरेत् ॥२॥ ।  
 प्रस्फोटितचीररोऽध्वगः स्वातमां(?)त्वा) प्रखालितपाणिपादो वा गृहीतपानीयः  
 पोषितो(?)पानके(रु)स्त्रिचीरं प्रावृत्त्य शान्तेर्यापयो विहारं प्रविशेत् ॥३॥ । चतुरो  
 वृद्धान् वन्दित्वावतिष्ठेत् ॥४॥ । प्राकृते प्रदेशे न्यशब्दः ॥५॥ । प्रासादिकः  
 सुसंवृतेर्यः सप्रभवेनास्य प्रतिशामनम् ॥६॥ । नाज्ञायमानः[?]प्रतिशामयेत्  
 सतीर्थ्यमपि ॥७॥ । पिघ्नीतां(?) द्वारं न देयं मृगयते निवार्यो गृहान इति  
 प्रत्यायितस्य प्रतीच्छयाव्यु(?)लक्षितवतोपहतौ विश्वासस्तुताञ्चोपनीतेन ममै-  
 धायं सहाय इत्यादि प्रतिपादनया दास्यत्वम् ॥८॥ । अभिज्ञानसंश्रयणमविदि-  
 तस्यापरेण विशेषगतायुपायः ॥९॥ । अर्प्यमाणयातेनान्ते चेत् प्रमीलनम् ॥१०॥ ।  
 प्रशस्वानुप्रमादासंपत्तये करणम् ॥११॥ । नाशने याचितस्याशुचिनाऽसंपचो(?)शो-  
 चादिना चित्तग्रहणस्य मूल्यदानम् ॥१२॥ । पात्रचीवरग्रहणम् ॥१३॥ । आसनप्रज्ञप-  
 नम् ॥१४॥ । पादधारणेनोपनिमन्त्रणम् ॥१५॥ । उदकेन च ॥१६॥ । वन्दनम् ॥१७॥ । सुख-  
 चर्याप्रश्नः ॥१८॥ । यथाशक्ति संरञ्जनीयकरणम् ॥१९॥ । अनुरूपशयनासनदानम् ॥२०॥ ।  
 संघस्यविरमुपसंक्रामेत् ॥२१॥ । निःश्रयग्रहणे स चेदि[?]नभिषुञ्जीत ॥२२॥ । वृद्धयेत्  
 शयनासनस्यास्य दाने तद्वारिकम् ॥२३॥ । न सहसा शयनासनं याचेत् ॥२४॥ ।  
 परिषण्डादानमन्तस्य चीररे धस्तोऽप्रतिविधानं आरापदकैस्तत्संग्रहः ॥२५॥ । परिवा-  
 स्याम्यत्राशे वृक्षाद्युपरि सप्ताष्टान्यहानि पश्चाशीतोत्थपरं शोचयित्वा शवचीवरं  
 भुञ्जीत ॥२६॥ । प्रवेदिते श्मश[?]निकोऽहमित्युपनिमन्त्रितः प्रवेशं विहारकुलयोः  
 परिभोगञ्चानुसृष्टस्त्रीकारस्य श्मश[?]निको भजेत् ॥२७॥ । न सांधिकं शयनासनं  
 परिभुञ्जीत ॥२८॥ । आव्यामान्ताचैत्यं परिहरेत् ॥२९॥ । धारयेन्मशकवारणम् ॥३०॥ ।  
 ऊर्णां सणं कर्पासं नतुकं पत्रमञ्जरीञ्च ॥३१॥ । न हस्त्यश्वगोवालादिमयम् ॥३२॥ ।  
 सर्वत्राकमलमृष्टत्वं चित्रोपचित्रताचार्योशलिके दण्डे ॥३३॥ । मशककुटिञ्च ॥३४॥ ।  
 उपरि श्टकवितननम् ॥३५॥ । दण्डिकायां घन्धनेन ॥३६॥ । चतुर्धि(?)दिं)हस्तकस्य ॥३७॥ ।  
 पटकेन परिवारणं द्वादशहस्तकेन ॥३८॥ । सामष्टम्भम् ॥३९॥ । अथास्य शयनासने  
 ऽवष्टम्भः ॥४०॥ । द्वारस्य करणं विकर्णकस्य ॥४१॥ । वीजनं घर्मे प्रतिविधिः ॥४२॥ ।  
 धारयेद् विधमनम् ॥४३॥ । वारुटंटे(?)तालवृन्तं वा ॥४४॥ । न चित्रोपचित्रम् ॥४५॥ ।  
 संघोऽन्यदपि ॥४६॥ । चैत्ये मणिरालच्यजनस्योत्पन्नस्य दानम् ॥४७॥ । श्रावक-  
 स्यापि ॥४८॥ । धारयेद् वृषिबिम्बोपधानचतुरस्रकानि ॥४९॥ । पुत्रदारलाभे दातृव-  
 शेन प्रतिपत्तिः ॥५०॥ । मोचनं चेदसौष्टं तावतो निष्कपत्वम् ॥५१॥ । कल्पवे[?]व  
 पुनर्निर्यातनम् ॥५२॥ । वृक्षे निर्यातितस्यालङ्कारश्चेत् तस्यैवोत्सवेऽलंकरणोपस्था-  
 पनम् ॥५३॥ । भित्ती छ(?)पने चेच्चित्रणाय ॥५४॥ । न चेत् स्तम्भे च नवकर्मणे ॥५५॥ ।  
 भूमौ ॥५६॥ । अधिशालायां प्रज्वालनिकाकरणम् ॥५७॥ । खेहलाभस्य वा ॥५८॥

भाग्योपस्थापनं रत्नानकल्पिकशालायाम् ॥ भक्तशालायां भक्तकरणम् ॥  
 शनकस्य पानीयमण्डले ॥ जेन्ताकशालायां जेन्ताकस्य खेहलामस्य वा ॥  
 केदलामस्य मण्डलवाटे स्थापनशालायोः ( ? याम् ) ॥ जातकेन(?)  
 खनं वा ॥ मेढीचंक्रमद्वारकोष्टकप्र[?]ज्ञादेषु भाजनम् ॥ पुष्करिण्या[म्?] ]  
 च ॥ स्थापनमस्यां चातुर्दिशासांभिकत्वेनेत्ययम् ॥ कल्पते रत्नार्थं  
 निक्षणम् ॥ उद्योपणं च ग्रहणे ॥ चक्रस्य दर्शनार्थं करणं धर्मवातवर्षोपद्र-  
 वेणासृष्ट्यै रूप[?]गास्य द्वारखन्त(तः) ॥ एष(?)वतः ॥ महस्थान्ते  
 चक्रस्य धारणम् ॥ भाण्डगोपकेन लाभस्य गोपनम् ॥ नानुद्दिश्य द्वयं  
 शास्त्रज्ञायां दत्ते भिक्षुणीनां सांघिके प्रवेशः ॥ पृगासामत्रे(?) कस्यां  
 चक्रो श्रु(?)यणे स्थूलालयः ॥ भाजनं भाण्डभाजकेन ॥ संभतिरस्य ॥  
 नाधि(?)क्रीम्याणां ॥ संघसन्निपाते वर्द्धनेन ॥ तस्मैवात्र सन्निपातगत-  
 मनुष्टेयं संघस्थविरेण मूल्यस्य करणम् ॥ मध्यमस्य ॥ नातस्तस्य  
 शाल्यतम् ॥ निश्चित्य पुनरभूतिं बर्द्धनस्य पातनम् ॥ नाक्रयिको  
 र्धयेत् ॥ न स्त्रियम् ॥ नादत्तमूल्यं परम्परि भुञ्जीत ॥ संकुर्वति  
 वा ॥ दशाद्यह्नाभिप्रभृत्ये दयादानां भाजनम् ॥ दत्ते कस्यचिदधिभक्ते  
 वद्गान्मृतौ तद्गर्भ्यामित्वं तद्दशस्य ॥ अर्हति निर्वाणान्नयेन प्रव्रजितः शील-  
 वा(?) यान् ) शतसाहस्रं वस्त्रं शतरत्नं भोजनं पञ्चदशं कूटागारम् ॥  
 संपद्रव्यश्च ॥ आशुवाद् ॥ पृथग्जनोऽपि ॥ न दुःशीलः ॥  
 कणभूतं कुसीतस्य प्रतिग्रहोपजीवनम् ॥ अर्हः पौद्गलिकविहारवह्नाभोपजी-  
 व्यन्तस्सीमतायां संघलामे ॥ लयने च निपतस्य ॥ वारेणास्योद्देशः ॥  
 पात्रविपात्रकंकसिकाविन्दुलाकुञ्चिकाशस्त्रकस्यपीनखच्छेदनककटच्छुद्धारस्थापन-  
 कुटारीपचनिकासरकानामयोभाण्डेभ्यो भाजयितव्यता ॥ मृदाण्डेभ्यः पात्र-  
 विपात्रकपचनिकापटिकाकरककुण्डककुण्डिकापानीपस्थालकानाम् ॥ मंचस्य  
 रत्नमयादेरयोमयात्तस्य परिचर्या ॥ न काष्ठमपस्य रंगस्य मंचकादन्यस्य ॥  
 अक्रयितस्य ॥ कथितस्य रङ्गनीये विनियोज्यत्वम् ॥ संपस्य पत् ॥  
 अविक्रियतास्यागमविहारतद्गस्तुशयनासनानाम् ॥ अनापेयत्वम् ॥ अन-  
 धिष्ठेयता च ॥ योगं भक्ताच्छादनेन पित्रोर्ब्रह्मे ॥ न चेष्टामस्य  
 पात्रचीवरादतिरेकस्समादाय ॥ असंपत्तौ भोजनोपनतेरुपार्धसादानम् ॥

॥ [ इति ] क्षुद्रकादिचीवरखलुगतम् ॥ २ ॥

( ३ ) सपृच्छुद्रकादिगतम् ।

पपर्ण(?)विमानज्ञानाय चीवराणाम् ॥ उपचयानामेषु दानम् ॥

रूप्येणेत्यपरम् ॥ न विनैतया दुर्लभाकूपपानीये देशे चारिकां चरेत् ॥  
 प्रस्फोटितचीररोऽध्वगः स्नातवां(१)त्वा) प्रक्षालितपाणिपादौ वा गृहीतपानीयः  
 पोषितो(१)पानके(रु)स्त्रिचीवरं प्रावृत्य शान्तेर्यापथो विहारं प्रविशेत् ॥ चतुरो  
 वृद्धान् चन्दित्वावतिष्ठेत् ॥ प्राकृते प्रदेशे न्यशब्दः ॥ प्रासादिकः  
 सुसंबुतेर्यः सप्रभवेनास्य प्रतिशामनम् ॥ नात्रापमानः[ ]प्रतिशामयेत्  
 सतीर्थ्यमपि ॥ पिधीतां(१) द्वारं न देयं मृगयते निवार्यो गृहान इति  
 प्रत्यायितस्य प्रतीच्छयाव्यु(१)लक्षितवतोपहृतौ विश्वासमस्तुताञ्चोपनीतेन ममै-  
 धायं सहाय इत्यादि प्रतिपादनया दास्यत्वम् ॥ अभिज्ञानसंश्रयणमविदि-  
 तस्वापरेण विशेषगताबुपायः ॥ अप्र्यमाणयातेनान्ते चेत् प्रमीलनम् ॥  
 प्रश्नस्यानुप्रमादासंपत्तये करणम् ॥ नाशने याचितस्याशुचिनाऽसंपत्तो(१)शो-  
 चादिना चित्तग्रहणस्य मूल्यदानम् ॥ पात्रचीवरग्रहणम् ॥ आसनप्रज्ञप-  
 नम् ॥ पादधारणेनोपनिमन्त्रणम् ॥ उदकेन च ॥ बन्दनम् ॥ सुख-  
 चर्याप्रश्नः ॥ यथाशक्ति संरञ्जनीयकरणम् ॥ अनुरूपशयनासनदानम् ॥  
 संघस्यविरम्युपसंक्रामेत् ॥ निःश्रयग्रहणे स चेदि[ ]नत्रियुञ्जीत ॥ वृद्धेत्  
 शयनासनस्यास्य दाने तद्धारिकम् ॥ न सहसा शयनासनं याचेत् ॥  
 परिपण्डादानमन्तस्य चीररे ध्वस्तोऽप्रतिविधानं आरापदकैस्तत्संग्रहः ॥ परिवा-  
 स्नाम्यवकाशे वृक्षाद्युपरि सप्ताष्टान्यहानि पश्चाशीतीत्यपरं शोचयित्वा शवचीवरं  
 मुञ्जीत ॥ प्रवेदिने श्मश[ ]निकोऽहमित्युपनिमन्त्रितः प्रवेशं विहारकुलयोः  
 परिभोगञ्चानुसृष्टस्वीकारस्य श्मश[ ]निको भजेत् ॥ न साधिकं शयनासनं  
 परिमुञ्जीत ॥ आव्यामान्ताच्चैत्यं परिहरेत् ॥ धारयेन्मशकवारणम् ॥  
 ऊर्णां सणं कर्पासं नतुकं पत्रमञ्जरीञ्च ॥ न हस्त्यध्वगोवालादिमयम् ॥  
 सर्वत्राकमलमृष्टत्वं चित्रोपचित्रताचार्यौशलिके दण्डे ॥ मशककुटिञ्च ॥  
 उपरि शटकवितननम् ॥ दण्डिकायां चन्धनेन ॥ चतुर्धि(१)द्वि)हस्तकस्य ॥  
 पटकेन परिवारणं द्वादशहस्तकेन ॥ सावष्टम्भम् ॥ अथास्य शयनासने  
 षवष्टम्भः ॥ द्वारस्य करणं विकर्णकस्य ॥ वीजनं घर्मे प्रतिविधिः ॥  
 धारयेद् विधमनम् ॥ धारुटे(१)तालवृन्तं वा ॥ न चित्रोपचित्रम् ॥  
 संयोज्यदपि ॥ चैत्ये मणिवालन्यजनस्योत्पन्नस्य दानम् ॥ श्रावक-  
 स्थापि ॥ धारयेद् घृषिबिम्बोपधानचतुरस्रकानि ॥ पुत्रदारलामे दातृव-  
 शेन प्रतिपत्तिः ॥ मोचनं चेदस्यौष्टं तावतो निष्कयत्वम् ॥ कल्पये[त्]  
 पुनर्निर्यातनम् ॥ वृक्षे निर्यातितस्यालङ्कारश्चेत् तस्यैवोत्सवेऽलंकरणोपस्था-  
 पनम् ॥ मिर्चा छ(१)पने चेषित्रणाय ॥ न चेत् स्तम्भे च नवकर्मणे ॥  
 भूमौ ॥ अग्निशालायां प्रज्वालनिकाकरणम् ॥ स्नेहलाभस्य वा ॥



मैफज्योपस्थापनं ग्लानकल्पिकशालायाम् <sup>१०</sup> । भक्तशालायां भक्तकरणम् <sup>११</sup> ।  
 पानकस्य पानीयमण्डले <sup>१२</sup> । जेन्ताकशालायां जेन्ताकस्य स्नेहलाभस्य वा <sup>१३</sup> ।  
 स्नेहलाभस्य मण्डलवाटे स्थापनशालायोः ( ? याम् ) <sup>१४</sup> । जातकेन(?)  
 रत्नं वा <sup>१५</sup> । मेढीचंक्रमद्वारकोष्ठकप्र[?]सादेषु भाजनम् <sup>१६</sup> । पुष्करिण्या[म्?] <sup>१७</sup>  
 च <sup>१८</sup> । स्थापनमस्यां चातुर्दिशसांधिकत्वेनेत्ययम् <sup>१९</sup> । कल्पते रत्नार्थं  
 भिक्षणम् <sup>२०</sup> । उद्योपणं च ग्रहणे <sup>२१</sup> । चक्रस्य दर्शनार्थं करणं धर्मवातवर्षोपद्र-  
 वेणास्पृष्ट्यै कृप[?]गारस्य द्वारवन्त(तः) <sup>२२</sup> । एय(?)वतः <sup>२३</sup> । महस्यान्ते  
 चक्रस्य धारणम् <sup>२४</sup> । भाण्डगोपकेन लाभस्य गोपनम् <sup>२५</sup> । नानुद्दिश्य द्रयं  
 क्षास्त्रपूजायां दत्ते भिक्षुणीनां सांधिके प्रवेशः <sup>२६</sup> । प्रगाप्तमत्रे(?) कस्यां  
 चक्रो श्रु(?)यणे स्थूलात्ययः <sup>२७</sup> । भाजनं भाण्डभाजकेन <sup>२८</sup> । संमतिरस्य <sup>२९</sup> ।  
 नाधि(?)क्रीड्याणां <sup>३०</sup> । संघसन्निपाते वर्द्धनेन <sup>३१</sup> । तस्यैवात्र सन्निपातगत-  
 मनुष्ठेयं संघस्यविरेण मूल्यस्य करणम् <sup>३२</sup> । मध्यमस्य <sup>३३</sup> । नातस्तस्य  
 पाल्यत्वम् <sup>३४</sup> । निश्चित्य पुनरभूति वर्द्धनस्य पातनम् <sup>३५</sup> । नाक्रधिको  
 वर्धयेत् <sup>३६</sup> । न स्त्रियम् <sup>३७</sup> । नादत्तमूल्यं परम्परि भुञ्जीत <sup>३८</sup> । संस्कुर्वीत  
 वा <sup>३९</sup> । दशाद्यह्निप्रभृत्ये दयादानां भाजनम् <sup>४०</sup> । दत्ते कस्याचिदविभक्ते  
 बहुगान्मृतौ तद्दुर्ग्यगामित्वं तदंशस्य <sup>४१</sup> । अर्हति निराणाशयेन प्रव्रजितः शील-  
 वां(?)वान्) शतसाहस्रं वस्त्रं शतरत्नं भोजनं पञ्चशतं कृटागारम् <sup>४२</sup> ।  
 संघद्रव्यञ्च <sup>४३</sup> । आशैश्चाद् <sup>४४</sup> । पृथग्जनोऽपि <sup>४५</sup> । न दुःशीलः <sup>४६</sup> ।  
 ऋणभूतं कुसीतस्य प्रतिग्रहोपजीवनम् <sup>४७</sup> । अर्हः पौद्गलिकविहारतच्छामोपजी-  
 व्यन्तस्सीमतायां संघलाभे <sup>४८</sup> । लयने च नियतस्य <sup>४९</sup> । वारेणास्योद्देशः <sup>५०</sup> ।  
 पात्रविपात्रककंसिकाविन्दुलाकुञ्चिकाशसकम्चीनरस्येदन रूकटच्छुद्धारस्थापन-  
 कृटारीपचनिहासरकानामयोभाण्डेभ्यो भाजयितव्यता <sup>५१</sup> । मृद्भाण्डेभ्यः पात्र-  
 विपात्रकपचनिकाघटिकाकरकण्डककुण्डिकापानीयस्थालकानाम् <sup>५२</sup> । मंचस्य  
 रत्नमयादेरयोमयात्तस्य परिवर्त्या <sup>५३</sup> । न काष्ठमयस्य रंगस्य मंचकादन्पस्य <sup>५४</sup> ।  
 अकथितस्य <sup>५५</sup> । कथितस्य रञ्जनीये विनियोज्यत्वम् <sup>५६</sup> । संघस्य यद् <sup>५७</sup> ।  
 अतिक्रियतास्यागमविहारतद्रस्तुशयनासनानाम् <sup>५८</sup> । अनापेयत्वम् <sup>५९</sup> । अन-  
 धिष्ठेयता च <sup>६०</sup> । योगं भक्ताच्छादनेन पिबोद्दहेत् <sup>६१</sup> । न चेच्छाभस्य  
 पात्रचीररादतिरेकस्ममादाप्य <sup>६२</sup> । असंपत्तौ भोजनोपनतेरुपार्धस्वादानम् <sup>६३</sup> ।

॥ [ इति ] भुद्रकादिचीवरवस्तुगतम् ॥ २ ॥

( ३ ) समृद्धभुद्रकादिगतम् ।

षण्ण(?)विभागज्ञानाय चीवरणाम् <sup>१</sup> । उपचवानामेषु दानम् <sup>२</sup> ।

मपिटिप्य(?)कस्तदासः ॥५॥ उल्लपनकानाञ्च ॥६॥ दशापाशात् तयोर्वधिकार-  
करणम् ॥७॥ नासांघाट्यां छिन्नाधिष्ठाननियमः नासत्त्वे तद्रूपाणां प्रत्ययाना-  
मच्छिन्नया ग्रामान्तरृहपोरनयोपवेशः प्रवेशश्च ॥८॥ एवं तीर्थ्यावसथे ॥९॥  
नैव सत्त्वपवेशः ॥१०॥ न रोमविधं त्रिचीवरत्वेनाधितिष्ठेत् ॥११॥ नैतत् प्रावृत्ति-  
भोजने भजेत ॥१२॥ स्त्रीकरणं विरलिकायाः ॥१३॥ चातुर्विध्यमसाः ॥१४॥  
औष्णिका शौमिका दुर्लुलिका कार्पासिकेति ॥१५॥ अन्येषाञ्च लघूनां षट्प्रवाराणां  
निकटरोमप्रभृतीनाम् ॥१६॥ कोचवस्य च ॥१७॥ न लोमस्य विहेटेऽस्यान्यथा  
प्रावृत्तिं भजेत ॥१८॥ नानेनैवं प्रावृते चंक्रम्येत ॥१९॥ नार्याणीकोचप्रवाचारित्र-  
चिलिमिलिकास्त्रीकृतिं पुद्गलो भजेत ॥२०॥ प्रतीच्छेच्चक्रमे चिलिमिलिका-  
प्रज्ञपनम् ॥२१॥ न नित्यमेकयैव धारया चंक्रमणम् ॥२२॥ शक्यतायां प्रति-  
संस्करणम् ॥२३॥ सेवनदण्डकार्गडकदानैः ॥२४॥ अशक्यत्वे गोमयग्न(म्)दा तथैव  
चंक्रमे लेपनम् ॥२५॥ धारणमन्येषां दानपतिविश्वासेन ॥२६॥ धारयेत् प्रतिनिवसन-  
संकक्षिका-प्रतिसंकक्षिकाः ॥२७॥ परिस्कारचीवरञ्च ॥२८॥ नास्य शौक्ये सदशा-  
पाशतायां वा दोषः ॥२९॥ न सांघिकस्य ॥३०॥ अधिष्ठाय तत्त्वेनानुज्ञाता चीवरधारणं  
धारयेदुप(?)रां विकल्पा(?)नेकमपि ॥३१॥ नास्थिरचित्तस्य विकल्पयेत् ॥३२॥  
नानुपसंपन्नस्य ॥३३॥ न प्रत्यक्षम् ॥३४॥ न देशान्तरस्थतायां विकल्पस्य घंसः ॥३५॥  
घंसश्च्युतौ ॥३६॥ ज्ञातौ ॥३७॥ विकल्पकस्यात्र स्वामित्वम् ॥३८॥ न निःसृष्टं  
स्त्रीकुर्वीत ॥३९॥ भिक्षौ निःसृजेत् ॥४०॥ न संघे ॥४१॥ नाव्यक्ते ॥४२॥  
याचनमदाने ॥४३॥ ग्रहणञ्च बलेन ॥४४॥ गन्धः परिशुद्धस्य वाससः शोचयित्वा  
परिभोगः ॥४५॥ प्रस्फोट्य चूर्णैः ॥४६॥ स्नेहेन विरुक्षयित्वा ॥४७॥ न वर्षत्यभ्यव-  
काशे सांघिकस्य ॥४८॥ नधावनरङ्गनपात्रकर्मकाष्ठपाटनादिकर्म कुर्वताम् ॥४९॥  
सम्यक्त्वं संख्यमनुक्तौ साक्षस्य व्ययत्वायनिक्षेप्रे मनोनुन्मत्तका तजाति-  
तद्गृहादातुं प्रतिगृहीत(?)त ॥५०॥ प्रतिगृहीत प्रणापितात् पुत्रात् ॥५१॥  
श्मशानाच्च प्रतिनिर्वर्चितम् ॥५२॥ प्रतिगृगयते दानमस्य ॥५३॥ ग्रहणं पुनर्लब्धौ  
स्तौपिकस्य वृत्तेर्मूलफलेभ्योऽन्यस्य भक्तार्थसोदेशोपजीव्यस्य वा भाज्यत्वं  
स्त्रीकाराय ॥५४॥ वर्षिकेन सीम्ना लाभस्य प्रवेशः ॥५५॥ न छिन्नवर्षत्वेनर्त-  
त्वम् ॥५६॥ नोक्षिप्ततायाम् ॥५७॥ एकांशतैवावष्टम्भिद्रव्योऽपि तस्य ॥५८॥  
स्वसंख्यांशत्वमस्मिन्नवष्टम्भानाम् ॥५९॥ भूयस्त्वेनैवान्यत्रानेकत्रोपगतौ व्यव-  
स्था ॥६०॥ वि(?)द्वि)तृतीयांशत्वं श्रामणेरश्रामणेरिकयोर्लभे ॥६१॥ साम्यम-  
भ्यवहार्ये ॥६२॥ उपसंपत्प्रेक्षशिक्षमाणयोश्च ॥६३॥ पुद्गलशो भिक्षुणीनामंशहरता  
न संघशः ॥६४॥ नानवच्छिन्नं भोजनमनुलम्भे भिक्षुणीनां भुक्तवत्त्वे तत्रा-  
प्रवेशः ॥६५॥ नासनोदकपिण्डपातेषु भिक्षो[र] भिक्षुणीस्रोत्रे (?) ज्येष्ठत्वम् ॥६६॥

आसनस्य वृद्धान्ते भिक्षुणीभिः सन्निपादे मुक्तिः ॥ १ ॥ करणं सभिक्षुतायामञ्जकौ  
तेषां भिक्षुण्या दक्षिणादेशनस्य सामान्यं चारयिष्यतीति चारकमाहारस्य  
प्रत्युपस्थितपादौ दानाय संघस्यविरो नियुञ्जीत ॥ २ ॥ यथासंभजनमित्यनलोक्य  
पर्यदं प्रभृत्यल्पत्वे भक्तस्य तदाख्यानपूर्वकम् ॥ ३ ॥ यथाविभवने त्वन्य-  
यात्वे ॥ ४ ॥ न चानुद्बोधिते संग्राहमिति वृद्धान्त आदौ गृह्णीत ॥ ५ ॥ सञ्जीकृता-  
घाहारसोद्दिष्टेभ्योऽपरपामागतौ तदावेदनम् ॥ ६ ॥ न विचीरदाने भिक्षुं प्रवर्त-  
येत् ॥ ७ ॥ नैतज्जीवतायाम् ॥ ८ ॥ प्रतिदास्यत इत्यतोऽन्येन मनसा संघः प्रति-  
गृह्णीयात् ॥ ९ ॥ सान्तरौत्तरेण मृतच्छोरणम् ॥ १० ॥ मध्येन ॥ ११ ॥ नाव-  
शिष्टेन ॥ १२ ॥

॥ [ इति ] सप्तच्छत्रकादिचीवरवस्तुगतम् ॥ ३ ॥

॥ समाप्तं चीवरवस्तु ॥ ६ ॥

### § ७. चर्मवस्तु ।

मर्षादा मध्यदेशस्य ॥ १ ॥ पूर्वेण पुण्ड्रकच्छो नाम दावः पुरतः पूर्णवर्ध-  
नस्य ॥ २ ॥ शरावत्यास्तदुपाख्या नदी दक्षिणेन ॥ ३ ॥ पश्चिमेन स्थूणोपस्थूणौ  
ब्राह्मणग्रामकौ ॥ ४ ॥ उशीरगिरिरुत्तरेण ॥ ५ ॥ धारयेत् प्रत्यन्त उप[र]नहौ ॥ ६ ॥  
अथनासनगुस्यर्थं च ॥ ७ ॥ एरुपलाशिके ॥ ८ ॥ अर्गडिकदानेन प्रतिसंस्करणम् ॥ ९ ॥  
न पुरान्तरस्य ॥ १० ॥ सप्त पदान्यन्ततो गृहिणा परिशुक्ते बहुपुटौ अपि ॥ ११ ॥  
नाकल्पिकस्य कल्पिकमात्रार्थतायां तद्योग्यं ग्रहणमान्यता ॥ १२ ॥ न चित्रोप-  
चित्राम् ॥ १३ ॥ न वेशविपाणिकाम् ॥ १४ ॥ नाश्वत्थकरवीरपत्रिकाम् ॥ १५ ॥ न सुवर्ण-  
रूप्यसचिताम् ॥ १६ ॥ न कोचिकिचायन्तीम् ॥ १७ ॥ न किणिकिणायन्तीम् ॥ १८ ॥  
न खिणिकिणायन्तीम् ॥ १९ ॥ न श्लिणिकिणायन्तीम् ॥ २० ॥ अन्यद् वा शीटीर्य-  
मुद्ग्रहन्तीम् ॥ २१ ॥ न तिर्यग्वधिरुत्तराकल्पिकत्वम् ॥ २२ ॥ धारयेत् पुरः  
पार्ष्णिपुटके ॥ २३ ॥ लालाम्युजाम् ॥ २४ ॥ गुण्डपूलां वा ॥ २५ ॥ पिण्डीभजनै च  
जनपदे खेलां पूलां च ॥ २६ ॥ न मान्यस्य मन्निषागुपानस्रप्राप्तिं भजेत ॥ २७ ॥  
न सिहन्पाद्मद्वीपिहस्त्याजनेयाङ्गस्य किञ्चित्कायेऽभ्यितत्वम् ॥ २८ ॥ कक्षहस्ति-  
रुद्धं (?) काञ्च तदन्यचण्डमृगाणामप्येभिराक्षेपः ॥ २९ ॥ नोपानहमास्रोतयेत् ॥ ३० ॥  
उदकार्द्रेण नतुकेनैनां विरजीभावाय पोत्र(प्रोन्ड)येत् ॥ ३१ ॥ धारयेदेनत् ॥ ३२ ॥  
ग्रभीयादेनाम् ॥ ३३ ॥ प्रतिगुप्तप्रदेशेऽप्र[र]मादनन्तुनः करणम् ॥ ३४ ॥ धारयेत् तदर्थ-  
मारां वद्भञ्ज ॥ ३५ ॥ न शस्त्रीम् ॥ ३६ ॥ न काष्ठपादुकामगोदन्त्यप्रान्तगृहद(म ?)शुचि-  
बुद्(दियां) च ॥ ३७ ॥ न वंशपत्रगुंजमारीटर्भाणाम् ॥ ३८ ॥ रज्जो(रज्जो)श्च ॥ ३९ ॥  
अराजप्रो(?)णिते ॥ ४० ॥ निर्पीदेनर्मण्यभावेऽन्यम्यान्तगृहे ॥ ४१ ॥ अराप्यत्र तदूपे-

पि प्रत्येष्वनिपच्यता प्रतिगृहीत् (१) तर्क्षचर्म चक्षुषे (१) ॥ पादस्थाने प्रज्ञपनम् ॥ गन्धकुटीद्वारे बोधस्य ॥ उपानहोः प्रावरणम् ॥ वाते निपद्या निपद्या च सर्वमर्शःस्वेतदित्यस्योपभोगः ॥ रोमसंस्पृशेनोपकर्तृतां विद्यात् ॥ बहुपुटत्वेन चोपना (१)पान)होः ॥ अनेकोपरिष्ठेन चैकेनापि ॥ नानसा (१)श्मा)परान्तकेषु चर्म धारयेत् ॥ न सित्रहादेः ॥ स्नाय्वस्त्रिदन्तमांसवसा (वशा ?) नामापि तस्याफलपिकत्वं यस्य चर्मणः ॥ धारयेत् तृ (१)ट)तिम् ॥ कापायं माणकं वा ॥ न चित्रोपचित्रम् ॥ न नाभिशास्तरणे कृत्वा सविधानमगाधमम्भोऽनगाहेत ॥ शिषेत् (१)त) ततुं प्रविविक्ते प्रदेशे ॥ न तद्गाधे रुरोगा (१)मपाश्रयेत मुक्त्वर्षमम् ॥ अपाश्रयेत हस्त्यधमहिष्पचरान् ॥

॥ [ इति ] चर्मवस्तु ॥ ७ ॥

### § ८. भैषज्यवस्तु ।

( १ ) भैषज्यवस्तु ।

प्रतिसेवेत भैषज्यम् ॥ चातुर्विधमस्य ॥ ग्लानं प्रत्यप्रथमताम् ॥ सर्वं चोचमोचकोलाश्वत्योदुम्बरपरुषकमृद्धीकखर्जूरपानानाम् ॥ तद्वच्छुक्तशुलुकदधिमण्डोदध्विन्मण्डकानि दकभिन्नानि पट्टपरिस्तुतानि स्वच्छानि सुरदशीनि शरकाण्डवर्णानि ॥ अयुक्तिः प्रागेवं [प]थादुपसंपन्नेन स्पर्शनस्य समानव्यंजनेन ॥ हरीतक्यादेः पञ्चकस्य ॥ गुडस्य च ॥ अधिष्ठितस्यास्य भक्षणे ग्लानवचमच्चोद्धो (१)पधिचारिके नमकर्मिणाम् ॥ भक्तच्छिन्नकसात्र चाकालिकाभक्षणे च ॥ पानानियामिकम् ॥ स्वच्छानि ॥ अतच्चात् तद्द्रव्यस्य कालिकं चेदनुपसंपन्नेन मर्दनं परिस्रावणञ्च पटेन ॥ दाडिमबीजपूरकादन्त्येषु द्रव्यम् ॥ कालिकत्वेऽस्य यामान्तः पर्यन्तः ॥ अन्यत्वे यस्ति (१)स्त)सिन् ॥ अनतिवृत्तावेपो (१)तिवृत्तौ यतः सेत्येक (१) ॥ तदसदतिरिक्तकालाश्रितावरुडिग्रासे तसां वागम्यत्वाद् भविष्यतः प्राकृतानामनधिष्ठेयतापत्तेः ॥ प्रविष्टत्वमत्र रसचूर्णारिष्टयोः ॥ सौवीरकस्य च स्वच्छस्य ॥ पूलादिभैषज्यं शतपल्ल (१)श्च)मेतत् ॥ सर्पिलसैलमधुफाणितानि सप्ताहिकम् ॥ सर्वेषां गुडरण्डशक (क)रादीनां फाणितत्वेनाक्षेपः ॥ सर्पिर्गुसुधायाः ॥ तैलवत्त्वं वशानां पञ्च परिश्रतानाम् ॥ मत्स्यशुशिर (१)मारर्क्षस्रकराणाम् ॥ आसम्भूयात् ग्लान्य उपयोगः ॥ स्वस्यतायामासां ग्लान्यानिमित्तं पाचते दानम् ॥ अभावेऽस्य ग्लानकोष्ठिकायां कपा [यां] जनयोश्च ॥ यानजीविकं मूलगण्डपत्रफलमस्फुरित्राभिपार्यस्य ॥ तद्यथा मुस्तं

वंचा हरिद्रार्द्रकमतिविपा १०० । चन्दनं चविका पन्नकं गुडूची देवदारु हरिद्रा-  
 र्द्रकम् १०० । वासककोशातकीपटोलनिम्बसप्तपत्रपत्राणि १०० । पुष्पानि(१)णि  
 वासकनिम्बधातकीनागानां पद्मकेसरश्च १०० । हरीतक्यामलकं विभीतकं मरीचं  
 पिप्पली १०० । जतु १०० । तद्यथा हिङ्गुसर्जरसः १०० । स्तपः सप्तकर्णां स्तपा-  
 करः १०० । श्वारः १०० । तद्यथा तिलपलाशस्वर्जिकायवञ्जुकवासकानाम् १०० ।  
 क्षारक्षारश्च १०० । लवणम् १०० । तद्यथा सैन्धवं सौवर्चलं विटं सागुद्रं रोमकम् १०० ।  
 कपायः १०० । तद्यथा आम्रनिम्बकोपाम्बुशिरीषजम्बूनाम् १०० । यावदाप्तं दानं  
 खात्वा पुन(१)रसं स्वर्पं(१)शु) सकृत् खानमिति कपायदानम् १०० । न विकृत-  
 भोजनस्य भैषज्यग्रहणेनान्तता १०० । यावज्जीविकत्वमस्य १०० । तदारुणं पुन-  
 र्द्वारप्रस्रावां स्तन्ययानया(१)पानपा)यिनां वस्तकानां विषे तावुपकारौ १०० ।  
 छाविका १०० । काञ्चनपीतशालाश्वत्थोदुम्बरन्यग्रोधानां सा १०० । मृचतुरहुला-  
 दधोभूमेः साध्वी १०० । श्राद्धादस्वादानमुपासकात् १०० । तेन प्रतिग्रहणम् १०० ।  
 मांसभैषज्यस्य चामस्य १०० । ग्रहणं वस्तुना[म]वः सर्वस्य १०० । कार्यत्व-  
 मस्य १०० । जरकू(१)चोच्चारयवां(१)श्वेदकालोपयोज्यतायां पाचकृतभैषज्यस्य  
 तदर्थं स्फुरेयुः नान्यात् परिशुजीत १०० । पट्टपरिशु(सु)ता च दवसारी  
 नान्यत् १०० । कोकोचारसांसं(१)चैन्मांसभैषज्यस्य नान्यत् १०० । पट्टपरिशु(सु)  
 तैश्वेद्रसको नान्यत् १०० । सान्येऽपि सद्भावस्तदद्याचारस्य तस्माद् पूर्वकल्पन  
 क्त्वाहो प्रवृत्तिः १०० । नानापत्रस्य रूपान्तरमपूर्वरूपत्वं तस्मान्न विसंपचि(१)तस्य  
 परतः स्वकल्पेनाकल्पनम् १०० । सम्पद्यते प्रक्षालनेन शक्त(१)सक्त)तण्डुलेषु प्रवृ-  
 त्तावस्थानस्य स्वभात्रसंख्यता गुडस्य १०० । गुणत्वेन गुडवच्चे प्रतिपत्तिः १०० ।  
 अनुत्थानमधितिष्ठते सन्निहितस्याधितिष्ठेत् ग्लान्यनिमित्तपरिभोगार्थम् १०० ।  
 आश्वकालपर्यन्तात् १०० । पूर्वभक्ते १०० । प्रतिग्राहितम् १०० । रक्ष्योऽप्रतिग्राहित-  
 सन्निहितसम्पर्कस्तस्माद्रिमाद्य हस्तौ १०० । नोद्गृहीतसन्निहिताप्रतिग्राहिता-  
 न्तरूपितपक्वभिन्नुपकेष्वधिष्ठानस्य रूढिः १०० । सन्निहितत्वं रसाच्छता परि-  
 वृत्तौ १०० । नाधरेण सार्धमधिष्ठितं परिशुजीत १०० । निदर्शनं भैषज्यादु-  
 क्रमः १०० । प्रतिसेवेतांजनम् १०० । नाभैषज्यार्थम् १०० । योग्यमस्य भाजनम् १०० ।  
 रसाञ्जनस्य समुद्रकः १०० । गोणिकागुडिकांजनस्य १०० । पुष्पकलकं शूर्णांजनानां  
 नाडिका १०० । धारयेच्छलाकाम् १०० । ताम्रलोहयोस्ताध्वी मणिभूतयोः १०० ।  
 धारयेदात्राधिकः कच्छपुटं भैषज्यनिधानाय १०० । स्वसंभवतां तत्र भारीकृत्य  
 क्षतं वा निधानम् १०० । नोपणतः कालेन कालं निहितस्य पौत्यानुपगतिः १०० ।  
 छायातपे १०० । वीर्यस्य शोषे हानिः १०० । अनपनेत स्वयमुपपत्ते विनाशहेतोरभा-  
 वेऽनु[प]संपन्नस्य १०० । धारयेद् भैषज्यशरावकम् १०० । भैषज्यकटुच्छुकम् १०० ।

विपीदनके चानुपातपट्टकम् <sup>(१)</sup> । आवाधिको लवणम् <sup>(२)</sup> । नाडिकस्य साधु स्थानं साङ्गा(?) <sup>(३)</sup> । गोमयेन परिकथितस्य <sup>(४)</sup> । विधानकस्य तद्विरहादोषामात्राय दानम् <sup>(५)</sup> । अतनमयसैव <sup>(६)</sup> । गन्धपरिभाविनां मुदं(दां?) <sup>(७)</sup> । पानीयतापनार्थमयस्त्रिण्डम् <sup>(८)</sup> । उपयोजयेत् सर्वः <sup>(९)</sup> । शृङ्खलायास्तप्तोत्क्षेपार्थं तत्र लगनम् <sup>(१०)</sup> । आर्द्रमृत्तिकया तापनकाले तद्व्यष्टम्भः <sup>(११)</sup> । नास्त्यामिषोपदेहस्य भावेऽवस्थानम् <sup>(१२)</sup> । कल्पिकस्य पूर्वं तापनं पश्चात् प[रि]मोगिकस्य <sup>(१३)</sup> । मजनं वसिचिकित्सितस्य <sup>(१४)</sup> । स्थूलमत्रान्यथाशक्यतायां व्युत्थापनस्य <sup>(१५)</sup> । मणेलोहस्य वात्र नाडी साध्वी नायसः <sup>(१६)</sup> । तद्वत् शस्त्रचिकित्सितम् <sup>(१७)</sup> । नैतदन्यच्चिरावेधान्मुखे भजेत् <sup>(१८)</sup> । नार्शसां छेदम् <sup>(१९)</sup> । अन्येनापि शस्त्रात् <sup>(२०)</sup> । मर्त्रा-पघ्नाभ्यामेषां विचिकित्सनम् <sup>(२१)</sup> । न प्रदुष्टेन चिकित्सयेत् <sup>(२२)</sup> । न रात्रिरभ्यचहारे विचिकित्सायामप्रतिरूपा <sup>(२३)</sup> । अनाशक्यमत्राप्रतिग्राहितसन्निहितयो-रकल्पिकत्वम् <sup>(२४)</sup> । पानं विचिकित्सायै धूपवत्तैः नेत्रिकयास्य सम्पत्तिः <sup>(२५)</sup> । अयोमय्याः करणम् <sup>(२६)</sup> । ङादश्राहुला साध्वी न तीक्ष्णा परुषा वा <sup>(२७)</sup> । स्यविकायां निधानं ब्रक्षयित्वा सर्पिषा तैलेन वा <sup>(२८)</sup> । नागदन्तके धीवरवंशे वा तस्याः[ः] स्थापनम् <sup>(२९)</sup> । निर्मादनार्थमग्नौ प्रक्षेपः <sup>(३०)</sup> । करणं नस्तकर्मणः <sup>(३१)</sup> । नस्तकरणे नास्यसंपत्तिः <sup>(३२)</sup> । ब्य(?)तीक्ष्णचंचुकं साधु <sup>(३३)</sup> । कारणमस्य <sup>(३४)</sup> । प्रतिसेवेत तामनांसं भैषज्यार्थं <sup>(३५)</sup> । भुक्त्यै तस्यासक्तयत् उपायः <sup>(३६)</sup> । पिधानमश्लोः पट्टकेन <sup>(३७)</sup> । भावनं सुगन्धिनानुत्थानाय <sup>(३८)</sup> । अपेततायां पलि-गोध(?)स्य स्थितत्वे च मनोज्ञस्य पुरतः साद्यभोज्यस्य मोक्षः <sup>(३९)</sup> । स्थूलम-न्यार्थेऽस्यास्याम् <sup>(४०)</sup> । सर्वत्र मानुषमांसस्य <sup>(४१)</sup> । नोदिश्यकृतं ज्ञात्वा मांसं भुञ्जीत <sup>(४२)</sup> । न व्याघ्रशेषम् <sup>(४३)</sup> । न हस्त्यश्वनागानाम् <sup>(४४)</sup> । नैकरुरश-गालमर्कटकाकेटककाकगृध्रवलाकामपकालिकोलकतचदन्यकुणपरसादकपश्विवक-जान्तु(?)कफोपलद्ध(?)गण्डपककृमीणाम् <sup>(४५)</sup> । प्रतिक्षिप्तमयतामेति मांसं प्रति-ग्राहयन्तं पृच्छेत् <sup>(४६)</sup> । प्रथमोऽनेकत्वे <sup>(४७)</sup> । अन्तरोहापनायाम् <sup>(४८)</sup> । अपेयत्वं हस्तिमानुपक्षीरयोः <sup>(४९)</sup> । अद्रुष्टं त्वग्व(त्र?)णदेहनसदानाक्षयजनमभक्ष्येण <sup>(५०)</sup> । पेयत्वं ग्लानेन मूर्च्छितस्य <sup>(५१)</sup> । सर्पिषा तैलेन घामघस्य <sup>(५२)</sup> । निर्दोषमम-घत्वे <sup>(५३)</sup> । संपत्तिरस्य क्वाथात् <sup>(५४)</sup> । शक्षिप्तभर्जितयवस्यास्य भूमौ निहितस्य शुक्ते त्वोपगतिः <sup>(५५)</sup> । भवत्यनुपगतिः <sup>(५६)</sup> । मघत्वे क्वाथेन द्राक्षारसस्य <sup>(५७)</sup> । नाव्यवपृ(?)क्ततायामस्तित्वम् <sup>(५८)</sup> । सत्त्वं वासनाभूतत्वम् <sup>(५९)</sup> । पानं मघत-द्वि(?)भामाय मघगन्धपरिभाषितमूलगण्डपत्रपुष्पफलभैषज्यशुष्कचूर्णोदकस्य <sup>(६०)</sup> । समधे भाण्डे लम्बनस्थापनेन परिभाषनम् <sup>(६१)</sup> । रक्षयसंसर्गस्तस्माद्ने विगतवेग-त्तायाश्च <sup>(६२)</sup> । तथा विरसीकरणेनाकालपाने घामिषेण <sup>(६३)</sup> । प्रासादिकश्च साधु

तस्माच्छुद्धनत्रकैर्न सतीकरणम् <sup>६०</sup> । अपानं ग्लानेन मद्यस्य कुशाग्रेणापि <sup>६१</sup> ।  
 अदानञ्च सर्वेषोपासकात् <sup>६२</sup> । चिकित्सार्थतां मुक्त्वैत्यप्रकृतिसावधे सर्वत्र  
 शेषः <sup>६३</sup> । न लशुनं पलाण्डुं गृह्णनकं वा परिभुञ्जीत <sup>६४</sup> । प्रतिगुप्तिप्रदेशे  
 ग्लानः <sup>६५</sup> । नोपयुञ्ज[ ]नः परतश्च सप्ताहं लशुने पलाण्डौ त्रिरात्रमेकरात्रं  
 गृह्णनविहारं(?) परिभुञ्जीत <sup>६६</sup> । शयनासनम् <sup>६७</sup> । न वर्चकृटिं प्रवेशयेत् <sup>६८</sup> ।  
 न प्रसावकृटिम् <sup>६९</sup> । न संघमध्येऽवतरेत् <sup>७०</sup> । नोपविचारे चैत्यस्य <sup>७१</sup> ।  
 व्यामोघ्व (?) प्रमाणम् <sup>७२</sup> । न गृहिभ्यो धर्मं देशयेत् <sup>७३</sup> । न कुलाक्षय(?)भयं  
 संक्रामेत् <sup>७४</sup> । न जनाकीर्णान् प्रदेशान् <sup>७५</sup> । स्नानमन्ते <sup>७६</sup> । अपनयनञ्च  
 चीरराणां गन्धस्य <sup>७७</sup> । शोचनधूपनाभ्याम् <sup>७८</sup> । आयुष्करा दुर्भिक्षे <sup>७९</sup> ।  
 पाद्मवत् पाकवायसोरधिष्ठितं कल्पिकत्वेन <sup>८०</sup> । अधितिष्ठेन्न वृक्षमूलहस्तिशाल-  
 तीर्थिकावसथराजकुलवस्तु भिक्षुणी वर्षकविहारमेधी(?)द्वारकोष्ठकप्रासादजेन्ता-  
 कोपस्थानशालाम् <sup>८१</sup> । अभ्यवकाशाग्निशालाचैत्यवस्तु गृहपतिवस्तूनि चै(?)चै-  
 त्यपरः <sup>८२</sup> । साधनपचनस्याप्यात्राकारणम् <sup>८३</sup> । पश्रोपस्करगश्च <sup>८४</sup> । चत्वा-  
 राज(?)शालाः <sup>८५</sup> । प्रथमाष्टकान्यस्य मानत्वमूर्ध्व(?)ध्वं सनवकर्मत्वम् <sup>८६</sup> ।  
 अन्यदानपगत(?)भिक्षुविवासनत्वम् <sup>८७</sup> । निरेतदोधिवासनाम(?) भिक्षुणां  
 संप्राप्तिः <sup>८८</sup> । आकृत्यान्तरारम्भप्रतिशान्तिभ्यां तत्त्वम् <sup>८९</sup> । सर्वत्र संघः  
 कर्मणा <sup>९०</sup> । प्रथमयोः पुद्गलोऽपि <sup>९१</sup> । नवकर्मिकः <sup>९२</sup> । कैवल्योऽस्याद्या <sup>९३</sup> ।  
 सापणतः <sup>९४</sup> । अवधाने द्वितीये संवहलानां भिक्षुणाम् <sup>९५</sup> । यावन्तस्ता[व?]न्त  
 स्सन्निहिताश्चतुर्थे संमं(?)कल्पिकशालाम्वाह्(?) भावकवचनोदाहारतः <sup>९६</sup> ।  
 नान्ये कस्यैकस्य यानाया(?)विहारस्य कृत्यकरणमप्रासादिकम् <sup>९७</sup> । न पृथग्भूत-  
 सैतत् कल्पिकत्प्रमुक्तम् <sup>९८</sup> । भुञ्जीत भिक्षु[ ] पकोद्गृहीतप्रतिगृहीते <sup>९९</sup> । पुरो-  
 भक्तिकाम् <sup>१००</sup> । पेयान् सर्वदा <sup>१०१</sup> । प्रागप्रतिग्राहितं प्रध्यायो(?)तिथतः <sup>१०२</sup> ।  
 उत्तिष्ठेत् तदान्त्यै <sup>१०३</sup> । शिष्टम् <sup>१०४</sup> । अभिनिर्हृतम् <sup>१०५</sup> । निर्हरेदेनत् <sup>१०६</sup> ।  
 अनस्यिकानि <sup>१०७</sup> । तदात्यम् <sup>१०८</sup> । तद्यथा द्राक्ष्यदाडिमरज्जुराश्रोष्टौ(?) वाताम  
 उरुमानरामापिकाकुरुमाधिकानेकोचोबभूः(?) पिश्रितिकापुष्करञ्च तदात्यम् <sup>१०९</sup> ।  
 तद्यथा विम्मं(?)मृणालिकावेदुशालकं पत्रकर्कटिका <sup>११०</sup> ।

॥ [ इति ] भैषज्यवस्तु ॥ १ ॥

(२) धुद्रकादिगतम् ।

न राज्यमुपार्धस्य प्रतीच्छेत् <sup>१</sup> । प्रतिगृह्णीयात् संघार्थं ग्रामान् <sup>२</sup> ।  
 क्षेत्रञ्च <sup>३</sup> । नैतदम्बुपेशेरत् <sup>४</sup> । मागेनास्य दानम् <sup>५</sup> । मार्गणं मार्ग्यस्य <sup>६</sup> ।  
 कृष्टवतोऽस्य विरते नेयत्नम् <sup>७</sup> । प्रथमतस्तस्मात्मीयात् <sup>८</sup> । रक्षणाय भिक्षुणां  
 नियोगः <sup>९</sup> । नाप्रज्ञायमानाय व्ययो भयान्यवतरे गणनां सृगयेत् <sup>१०</sup> । अन्यत्र

स्मृतिसंभ्रजन्यपुरः]सरत्तत्र प्रवर्त्तत ॥१॥ । प्रतिगृहीयात् संघार्थमुपस्थाप-  
 कान् ॥२॥ । यतो नागतिः शब्दस्य विहारे तत्र कल्पकारमापनम् ॥३॥ । देयत्वं  
 भक्तस्य करणं चेत् कर्मणः ॥४॥ । गोमहिष्याजैडकहस्त्यद्योप्रगर्दभामधान्य-  
 भाजनं च न स्तूपस्यैपामकल्पनम् ॥५॥ । धारयेत् कलाविकालवणपातलि-  
 काञ्च ॥६॥ । नाम्यामनुपानपट्टकाद्यान्यत् कंसभाजनं पुद्गलो धारयेत् ॥७॥ ।  
 उपस्थापयेदारामिकम् ॥८॥ । ग्रहणं रक्षायै प्रतिपाद्यमानानामप्यन्यानां समान-  
 व्यञ्जनानाम् ॥९॥ । आसक्तकण्ठचीवरकत्वमेपां वेपः ॥१०॥ । कट्यां वा प्रतिपालन-  
 मनुकम्पारतेन ॥११॥ । ग्रहणं तत्(ज)ज्ञात् पु(सु)संस्कृतस्य ॥१२॥ । निपा (१)-  
 यत्वेन चान्ते ॥१३॥ । तैश्च कृतज्ञतया ॥१४॥ । नैतन्मूल्यं याचेत् ॥१५॥ । स्त्रीक्षुर्यात्  
 फललाभम् ॥१६॥ । घृततैलमधुफाणितघटान् ॥१७॥ । तद्भाजनञ्च ॥१८॥ । स्थापयेदेना-  
 माधारके ॥१९॥ । अनुपभोज्यत्वमुच्चारप्रस्रावमद्य (१) घटानाम् ॥२०॥ । प्रतिजाश्रयात्  
 संघार्थयोः साधनपचनयोः ॥२१॥ । नापार्थनिहितानां प्रागावात् पात्रस्य पिण्डाय  
 प्रवृत्तौ भजेत् ॥२२॥ । पिण्डोपधानं धारयेत् ॥२३॥ । अनाशंक्यमत्र लोहभाण्डाधारणे  
 चासाधारणत्वम् ॥२४॥ । अकल्पिकत्वं च ग्लानाय धेलाभरणस्य ॥२५॥ ।  
 नाविशरावकेण पिण्डाय कुलं प्रविशेत् ॥२६॥ । धारयेदेनम् ॥२७॥ । निष्काश-  
 (१)स) प्रवेशकौशले प्रयते[त्] ॥२८॥ । अभिज्ञानकरणेन पिण्डापाता (१) च करा-  
 दिना ॥२९॥ । न धर्मव[र्]णिज्यय[र्] जीवितं कल्पयेत् ॥३०॥ । शोचनमसंभवे जलस्य  
 दध्यादिमण्डेन पादयोः ॥३१॥ । निपदनं पिण्डके ॥३२॥ । स्थापनमेकान्तेऽम्बव-  
 काशे ॥३३॥ । राशीकृत्यापि ॥३४॥ । प्रमीलनमन्ते ॥३५॥ । करणं प्राभू(१)त्ये पाटिका-  
 नेकत्वस्य ॥३६॥ । शतपंचकशः ॥३७॥ । प्रतिद्वन्द्वान्तमुपन्वाहारः ॥३८॥ । अधिष्ठापका-  
 नामपहर्तृत्वे वा करणमुद्देशः ॥३९॥ । प्रथमतरं भोजनव्यापारिकैः भक्तिः ॥४०॥ ।  
 यथा घृदिकया विपादनाय दापनाय च महासन्निपाते भिक्षूणामुद्देशः ॥४१॥ ।  
 निपीदेयुः द्वित्रावर्जा (१) यथेष्टमत्र भिक्षुण्याः ॥४२॥ । अल्पशब्दोऽम्बवहाराग्रं  
 गच्छेत् ॥४३॥ । स्रपं वृतेर्यः ॥४४॥ । प्रासादिकः ॥४५॥ । एवं तिष्ठेत् ॥४६॥ । नाम्याव-  
 हार्यं पादेनाक्रामेत् ॥४७॥ । न पदा पात्राधिष्ठानं सृशेत् ॥४८॥ । स्मृतिमुपस्थाप्या-  
 विक्षिप्तचित्तः] पिण्डपातं गृहीयात् ॥४९॥ । अनवकिरन् पात्रामात्रकम् ॥५०॥ ।  
 असंमिश्रमन्वेव (१) ॥५१॥ । अनाम्बालयम् ॥५२॥ । सुप्रतिच्छन्नम् ॥५३॥ । अनि-  
 पातं कालमभिनिर्हरेत् ॥५४॥ । न येन मन्त्रितः ततोऽन्यस्य लब्धैः स्वीकारे  
 ऽस्त्ययुक्तत्वम् ॥५५॥ । निर्दोषतरं स्वभोजनेऽन्यप्रतीष्टेः ॥५६॥ । तदन्तर्गततरदन्योपनि-  
 मन्त्रणे निपण्णस्यानुज्ञातं तेनादत्तम् ॥५७॥ । अभिप्रेतेनार्थेन शब्दप्रयोगे व्यवस्थान-  
 प्रसिद्धेन ॥५८॥ । नान्तं विसर्जयेत् दृष्टिशीलसम्पन्नाम्पामान्तासान्यत्र यथासंख्यं  
 दानमतिरिक्तस्य चालोपाद् यात्राकारिणो ग्रहणम् ॥५९॥ । भोगश्च विनिपातनं



श्रद्धा[१]देयस्य ॥ मात[१]पितृग्लानपुत्रस्वा[१]पेक्षकुक्षीमतीम्यो विनेयाकां-  
 क्षापिण्डपातं स्पृष्टवते गृहिणे च संप्राप्ताय संविभागश्च ततः करणम् ॥  
 आलोपपिण्डां[१] स्थापयेत् ॥ अव्यवच्छिद्य भोक्तारम् ॥ तिरश्चे च  
 दद्यात् ॥ नानवशि[१]ते मत्त्यर्थमुपनिक्षिप्ताद् ददीत ॥ न निमत्रणके  
 श्रद्धा[१]देयत्वेन पात्राधिष्ठानेऽस्योच्छिष्टाशिलां[१]नां यथा सुखकरणम् ॥  
 नैवासिकानां बलिदानम् ॥ तत्कल्पानुगत्या पूर्वाह्नादौ ॥ मित्रकल्पत्वे  
 मेदेन ॥ नावर्धको किलिकभावस्यामात्रं भक्षयेत् ॥ नाकल्पिकत्वं मूल-  
 गण्डपत्रपुष्पफलाद्यादनीयौदनकुल्मापमत्स्यमांसापूपक्षीरदधिदधनीतमत्स्यवह्नी-  
 णाम् ॥ अनाशङ्क्यमुद्गसार्षपमूलगण्डपत्रपुष्पफलादियवागूनामनिषे-  
 ध्यत्वम् ॥ ओजस्करत्वं दू[१]तस्योदकेनापि ॥ नाकल्पिकत्वं इति  
 गतस्य ॥ कल्पते भाजने भोजनम् ॥ यायां[१]दिवा ॥ शिलामये  
 च ॥ कृतभोजनेऽपि निःश्रितव्यापारो निर्मादनम् ॥ भुक्तेऽपि ॥ नापरेण  
 सार्द्धमेकत्र भाजने भुञ्जीत ॥ भुञ्जीताद्यन्यसंभवे भाजनानां भिक्षूणाम् ॥  
 उद्धृतेऽन्यस्य हस्ते संप्रक्षिपेत् ॥ श्रामणेरे च सार्द्धं परवद[१]योगे कल्पकार-  
 कानां पिण्डीकृत्य दानम् ॥ ज्ञातिना सर्वत्र हार्दे[१]न प्रार्थितः ॥ प्रति-  
 गुप्ते प्रदेष्टे ॥ रक्षत्वमनपेय[१]प्रतिग्रहभस्तेनप्रतिग्राहितसंपृक्तेश्च ॥  
 न सौपानत्था[१]त्को भुञ्जीत ॥ आक्रम्य ग्लानः ॥ न नम्र एकधीवरो  
 वा ॥ अनापत्तिर्ग्लानस्योपस्थापकोऽस्य गुप्तिं कुर्यात् ॥ संकाशिकां शक्तौ  
 संश्रयेत् ॥ गुप्तश्च प्रदेष्टुम् ॥ नेदमित्तो वा देहीति भोजनार्थमुपविष्टः परि-  
 वेष्टारं बोधयेत् ॥ अनापत्तिर्ग्लानेऽनुक्तय[१]शुक्तस्य ॥ तद्यथा, मन्दाग्नौ  
 पक्वसामस्य दीप[१]तामौ ग्लानसंज्ञाम् ॥ स्वत्रोपस्थाप्य भुञ्जीत भैषज्यसंज्ञा-  
 माहारे ॥ स्मृतिञ्च ॥ समुदागमसाहस्यपरिणतप्रत्यर्थिकत्वनिष्यन्दं  
 प्रतीत्य विधिपरीष्टिपराधीनरम्म[१]व्यावाधिकत्वप्रत्येकगततातिरासितप्रति-  
 कल्पम् ॥ उपस्थितस्मृतिः ॥ अविक्षिप्तः ॥ संप्रज्ञानन्नल्पशब्दः ॥  
 अकुर्वन्नेनम् ॥ अनुत्थापयन् यवाग्वाम् ॥ अमटमटायमानः ॥ मृदुकरणं  
 शब्दकृतामुद्रकादिना ॥ न तद्भुक्त्यर्थं वाद्य[१]मानत्वे ॥ न देशना-  
 क्रियमाणतया प्रतिसंवेदितस्य ॥ अत्यये कालस्य द्वित्रयोमार्थयोः ॥  
 गार्थां भुक्त्वा भापेत् ॥ दक्षिणादेशन-धर्मदेशनयोः निमत्रणकं भुक्त्वा  
 करणम् ॥ निर्ज्ञाप्य भुक्तिवर्ता[१]सर्वेषाम् ॥ अरलोकनेन ॥ प्रथमेना-  
 नेकत्वे ॥ अशक्तावध्वेषणं प्रतिबलस्य ॥ अकृते चेद् गमनप्रत्ययः  
 परिवारदानं भिक्षूणाम् ॥ चतुर्णामन्तवः ॥ गमनप्रत्ययेऽत्र दन्तसाव-

लोक्य <sup>१०</sup> । नन्दोपनन्दयोर्दक्षिणादेशने नामग्रहणम् <sup>११</sup> । निगिलेष्व(?) नाडि-  
 फोक्कालोद्गरान् द्वित्रानार्दा छोरयित्वा सुखं निर्माद्य <sup>१२</sup> । नैतन्नामिपम् <sup>१३</sup> ।  
 तस्मान्मुसमकाले प्रवारितश्चोद्गारासामे निर्माद्येदन्यः <sup>१४</sup> । नाप्रज्ञेते प्रदेशे  
 श्लेष्मानं छोरयेत् <sup>१५</sup> । न परिकर्मिते <sup>१६</sup> । नैतत् छन्दं वा स्वविरस्य पुरत-  
 ष्कुर्यात् <sup>१७</sup> । न सुञ्जानस्य <sup>१८</sup> । न पुनः पुनः शिष्टस्यापि <sup>१९</sup> । अन्येनाशक्तौ  
 प्रक्रमणम् <sup>२०</sup> । नान्यस्यास्पर्शकरणम् <sup>२१</sup> । नक्ताघ्नकप्रशः <sup>२२</sup> । चक्रमणे  
 नान्येन वा प्रक्रमणम् <sup>२३</sup> । पात्रमस्य हस्तिपदबुध्नं साधारकस्य <sup>२४</sup> । तप[ः]  
 स्वापयेदेनम् <sup>२५</sup> । क्षोद्रकवालुरुहायिकानां धारणं मक्षिकानां प्रतिविधेः <sup>२६</sup> ।  
 अदुर्गन्धीभावप्राणकासंभवाय कालेन कालं शोचनं शोपणञ्च <sup>२७</sup> । तत्कालार्थ-  
 मरोपस्थापनम् <sup>२८</sup> । अविघातार्थं कोणस्तम्भपार्थं विहारस्य <sup>२९</sup> । चतुर्णामपि  
 श्लेष्मकटक(शिकानां) स्थापनम् <sup>३०</sup> । न सशब्दं वातकर्म कुर्वीत <sup>३१</sup> । नाधो वृक्ष-  
 स्योच्चारप्रस्तापनम् <sup>३२</sup> । मुक्तानिरवकाशत्वं तैरद्व(इट)व्याम् <sup>३३</sup> । कण्टकिनश्च <sup>३४</sup> ।  
 करणं वर्चष्कृतेः <sup>३५</sup> । विहारे चेदुत्तरपश्चिमे पार्थे <sup>३६</sup> । क्षोमस्य तमङ्गस्य  
 वा <sup>३७</sup> । कण्टकिनामधो वृक्षाणां रोपणम् <sup>३८</sup> । पादकयोरुपछिद्रमुपरि  
 दानम् <sup>३९</sup> । कुण्डिकास्थानकरणम् <sup>४०</sup> । विकर्णाकारया द्वारम् <sup>४१</sup> । कपाटस्य  
 दानम् <sup>४२</sup> । कटकार्गदयोश्च <sup>४३</sup> । शब्दनं प्रविविधता <sup>४४</sup> । सत्ते तत्र च प्रवि-  
 ष्टेन <sup>४५</sup> । मुसंशुहीतचीवरः प्रविशेत् संप्रज[ः]नन् <sup>४६</sup> । मध्ये निपीदेत् <sup>४७</sup> ।  
 शनैरालिपनदुटिपादुकं कुर्वीत <sup>४८</sup> । नानागतमागमयेत् <sup>४९</sup> । नागतं विधार-  
 येत् <sup>५०</sup> । न तत्प्रतिषट्कार्यादन्येनर्थ(न्यर्थेन?) तत्समीपे तिष्ठेत् <sup>५१</sup> । प्रतिदिनं  
 शोचनमुपयिनारिकेन <sup>५२</sup> । मृत्पात्रोपस्थापनञ्च <sup>५३</sup> । नाप्रज्ञेते प्रदेशे प्रस्त्रावं  
 कुर्यात् <sup>५४</sup> । नानेरुज <sup>५५</sup> । प्रोढौ गर्ताया खानयेत् <sup>५६</sup> । करणं प्रस्त्राव-  
 कुटेः <sup>५७</sup> । पार्थेऽस्याः <sup>५८</sup> । तमङ्गस्य <sup>५९</sup> । प्रनाडिकादानम् <sup>६०</sup> । समान-  
 मितरत् <sup>६१</sup> । करणं छिद्रपीठस्य चोदनारोगे <sup>६२</sup> । संरतनेन बालस्य <sup>६३</sup> ।  
 असंपत्तौ छेदनम् <sup>६४</sup> । सामन्तके दुःखनं चेत् पात्रवैभङ्गकानां दानम् <sup>६५</sup> ।  
 रस्यो भूमिनाशस्तस्मादुत्कर्ष(?)रसस्य <sup>६६</sup> । नान्यु(इत्यु)चासाशु <sup>६७</sup> । कालेन  
 कालमदुर्गन्धतापै शोचनम् <sup>६८</sup> । शोपणं ब्रक्षणञ्च कटुकतैलेन <sup>६९</sup> । तत्का-  
 लार्थमपरार्जनम् <sup>७०</sup> । असंपत्तौ पतलिकाधारत्वेनोपयोगः <sup>७१</sup> । कृत्योच्चारं  
 तत्करणशुद्धेत् (?) <sup>७२</sup> । न तीक्ष्णेप(इन)वृणकुर्विकेन वा <sup>७३</sup> । नतुकपत्तलिक-  
 पत्रवैभङ्गुरुलोष्ठकाष्ठानामत्र साधुत्वम् <sup>७४</sup> । द्वाभ्यां च मृज्यां शोचयेत् <sup>७५</sup> ।  
 प्राक् स्थापिताभिः प्रविभागेन मृद्धिरुत्तरः शोचः <sup>७६</sup> । सशनेर्मन्दमन्दमना-  
 शयताविस्क्रम्भिनाचमनिरूपापादुकाम् <sup>७७</sup> । सप्तभिर्वामस्य <sup>७८</sup> । सप्तभिरुभयोः  
 बाहोः शोचनम् <sup>७९</sup> । पुनः हस्तयोर्मृदा <sup>८०</sup> । अपराया[ः] कुण्डिकायाः पाद-

प्रक्षालनम् <sup>(१)</sup> । निर्दोषं शू(१)ते कुक्षेः प्रागन्तात् प्रोञ्छनमात्रं कृत्वासनं  
नातोऽन्यः <sup>(१)</sup> । सत्युदके नानान्ते निपीदेत् <sup>(१)</sup> ।

॥ [ इति ] क्षुद्रकादिभैषज्यवस्तुगतम् ॥ २ ॥

॥ समाप्तं भैषज्यवस्तु ॥ ८ ॥

१९, कर्मवस्तु ।

(१) कर्मवस्तु ।

विध्युत्क्रमे कर्मणो रुढिः <sup>(१)</sup> । नाश्राव्यश्रुतो(१) <sup>(१)</sup> । नारूढिं कुर्यात् <sup>(१)</sup> ।  
शक्तिराचनाप्रतिभोक्षोद्देशप्रवाराणास्तत् <sup>(१)</sup> । नाधर्मेण कुर्युः <sup>(१)</sup> । न व्यग्राः <sup>(१)</sup> ।  
न गणस्य <sup>(१)</sup> । नासंघभूताः <sup>(१)</sup> । निशतिप्रभृतीनामावर्चने संघत्वम् <sup>(१)</sup> ।  
उपसंपदि दशप्रभृतीनाम् <sup>(१)</sup> । विनयधरपञ्चमादीनां प्रत्यन्तेष्वसंपत्तौ <sup>(१)</sup> ।  
शिष्टे चतुःप्रभृतीनां हिरुक्त्वं भिक्षुणीनाम् <sup>(१)</sup> । कर्मणि प्रवारणं भिक्षुसंघेऽपि <sup>(१)</sup> ।  
पोषघसंपन्नतामउपाणां तेन <sup>(१)</sup> । छन्दयोषधहरणेन तत्संपादनम् <sup>(१)</sup> । द्वयोरत्र  
व्यापृतिः <sup>(१)</sup> । प्रतिबलत्वमनयोः <sup>(१)</sup> । अभाव एकस्याग्रहीतृभि(भिं)क्षुसंघेन  
नियोगो भिक्षोः <sup>(१)</sup> । द्वारकोष्ठके तेनावस्थानम् <sup>(१)</sup> । पलायमानस्य संज्ञापनम् <sup>(१)</sup> ।  
तेनास्यैतत् <sup>(१)</sup> । न पलायनम् <sup>(१)</sup> । अज्ञातो नाम गोत्रप्रश्नः <sup>(१)</sup> । मानास-  
वर्चणं(१) द्वयोस्साग्रे तयोः <sup>(१)</sup> । उपसंपादनञ्च <sup>(१)</sup> । द्वादशवर्गोऽज्ञासाम् <sup>(१)</sup> ।  
सपूर्वसंबृतिद्वयपर्यदनलपर्यदुपस्थानसंबृतिदानेऽन्तः संघस्य <sup>(१)</sup> । कल्पिक्रम-  
क्षत्तौ कर्मकारिकायानितीरितं तथा भिक्षुणा कृतं वचनम् <sup>(१)</sup> । यस्मात्  
तृष्णीमित्यवः प्राक् <sup>(१)</sup> । नासन्निपादस्य पूरकत्वम् <sup>(१)</sup> । न यस्य क्रियते  
तस्मात्सत्त्वं पूरकत्वस्य छन्दपरिशुद्धिर्निधेः <sup>(१)</sup> । अर्हन्मनयोः <sup>(१)</sup> ।  
जसम्मतिप्रकारकत्वेन <sup>(१)</sup> । नातुपसंपत्कश्चस्ता(१)नन्तर्पकृत्पापदृष्टिभूम्यन्त-  
स्थानानासंवाप्तिराक्षम् <sup>(१)</sup> । तत्सखलितस्य च <sup>(१)</sup> । संस्कारणीयेनापि <sup>(१)</sup> ।  
भवत्यधिष्ठानेन शुद्धत्वम् <sup>(१)</sup> । न शक्यतायाम् <sup>(१)</sup> । शक्यत्वं तदाने  
क्षुद्रप्रायश्चित्तिकप्रतिदेशनीयदुष्कृतप्रतिकरणस्य प्रतिग्रहीत्सद्भावे देशनामात्र-  
कत्वात् <sup>(१)</sup> । यथा संघमापन्ने प्रतिपद्येत <sup>(१)</sup> । न्याय्यमेवं नाशनं चैकस्य <sup>(१)</sup> ।  
प्रतिकरणञ्चानेकधा <sup>(१)</sup> । नैषां कर्तृत्वम् <sup>(१)</sup> । उदेष्टृत्वं साग्नेयं प्रतिक्रियायाम् <sup>(१)</sup> ।  
वर्चमानस्य नातोऽन्यै(१)भिः सश्रुतं कुर्युः <sup>(१)</sup> । उत्सृज्य वर्जितमनाश्रुतम् <sup>(१)</sup> ।  
उत्क्षिप्तञ्च स्वकर्मणि <sup>(१)</sup> । जत्र(१)न्तः पृच्छार्थं प्राप्तिप्रभृतां चोपघमानम् <sup>(१)</sup> ।  
दर्शनोपविचारस्यातायां सांग्रह्यस्य <sup>(१)</sup> । निवे(१)दनेनातुधारणस्य तत्कर्णीये  
संपादनम् <sup>(१)</sup> । असंमुखीभूतस्य विहारो उन्मचकारन्दनानालपनासंभोग-

संबृतयः ॥१॥ नाज्ञपिते तदर्थं वाचना ॥२॥ तत्सीमान्तर्गतस्याहस्य पूरणे  
 कापतः छन्दतो वा संनिपादेऽननुप्रविष्टत्वं प्रतिप्रोश्नन्ता च यस्य तत्कर्म ततो  
 ऽन्यस्य प्रतिकूलं चेत् धर्मं वाच्युतसेयापथात् प्रकृतिस्यस्य संयतस्य वा चोत्सृज्या-  
 नभिन्नसान्तराद् व्यग्रत्वम् ॥३॥ मृपावादप्रहृतत्वमसंयतिर्वाचा ॥४॥ पैशुन्ये पारुष्ये  
 संभिन्नप्रलापे च ॥५॥ अप्रकृतिस्यत्वमत्र चान्यत्र वा करणीये करणीयकृतौ  
 च ॥६॥ व्युतिरीयापथाद् विप्रक्रमणचित्तेन प्रवृत्तस्यास्योत्सृष्टिः ॥७॥ संघे  
 दृष्टिमाविष्कृर्वात ॥८॥ नान्यत्र ॥९॥ नानुपसंपत्कः ॥१०॥ अनर्हे वा  
 पूरणायाम् ॥११॥ नानुपशेषत्वे ॥१२॥ संमन्येरन् साधुतरवहुतरकारिणं संमतम-  
 पसार्य ॥१३॥ न नियम्य कालं पौनःपुन्येऽन्यत्र वा ॥१४॥ दध्युरन्यत्र यावदर्थ  
 परिहारम् ॥१५॥ शलाकृग्रहणेनाभावे संमतस्य भाजनम् ॥१६॥ यस्य पूरणेऽनर्हत्वं  
 शलाकाचारणेऽपि तस्य ॥१७॥ संघमेदेऽस्य रूढिरनर्हे न चारणे शलाकानाम् ॥१८॥

॥ [ इति ] कर्मवस्तु ॥ १ ॥

( २ ) कर्मपरिभाषा ।

नाधिक्ये वाचनानामकृतत्वम् ॥१॥ अकृतत्वं हापने ॥२॥ क्रियमाणतायां  
 प्रक्रान्तावपूर्वस्य पूर्वणो विकृषितत्वम् ॥३॥ पूर्णस्थानवशिष्टत्वे तत्कर्मसंघपरिमा-  
 णामव्युत्थितानाम् ॥४॥ नावशिष्टत्वे ॥५॥ पुनश्चेच्चिकीर्षाधिकोपनं  
 वा च ( ? ) ॥६॥ संघविज्ञपनेन ॥७॥ पुनर्भदन्ताज्ञप्तिं करिष्याम्यनुथावणश्चे-  
 ति ॥८॥ प्रतिनिःसृष्ट्यर्था ज्ञपननासन ( ? ) तत्त्वभावैपीयशिक्षासामग्रीतत्पोपघतीर्थ्य-  
 परिवासतदन्यमानास्यमूलापकर्षस्मृत्यमूदविन [ य ] दानोपसंपादनोपसंपादनसीम-  
 मोक्षप्रणिधिकर्मावर्हणेपु त्रिर्वाचना स्वार्थातिरिक्तमंत्रोक्तिः ॥९॥ पुद्गले च  
 पराऽर्थम् ॥१०॥ निपण्णोऽस्योत्कृडकिक्रया पुरतोऽतिरिक्तेश्च ॥११॥ रोचनं च ॥१२॥  
 इष्टके पाणिभ्यां विरहोऽनुशिष्टानुपसंपदि ॥१३॥ मद्यरिकादौ त्रिपाः वृद्धान्ते  
 ऽनन्यतत्रतायां संघे स्थितस्य परार्थे सप्रणतम् ॥१४॥ अनन्तरमार्गे समनुशिष्ट-  
 तायां रहसीत्येकम् ॥१५॥ द्रव्याधिष्ठानञ्च ॥१६॥ तत्त्वं विकल्पनस्य ॥१७॥  
 गृहीत्व [ ] तदेतत् ॥१८॥ पात्रभैषज्यं वामे पाणौ प्रतिस्थाप्य प्रतिच्छाद्य  
 दक्षिणेन पाणिना ॥१९॥ अग्रतः [ ] स्वस्याग्राक्षतायां कर्म ॥२०॥ असंयुतौ संघै-  
 कद्वयोः पुद्गलस्य विज्ञप्यत्वं भिक्षोः ॥२१॥ रोहन्त्यसान्निध्ये चीवरस्य मनसा  
 विकल्प उत्सर्गोऽधिष्ठानञ्च नानुत्सृष्टे पूर्वत्र ॥२२॥ वाग्भाषे ( ? ) चैकाधिष्ठानं  
 तदाशयोपसंपत्तिपूर्वकम् ॥२३॥ कृतकांशोचरासंगत्वम् ॥२४॥ समागतत्वे भिक्षु-  
 णाम् ॥२५॥ सामीच्यं तदर्हत्वेः ( ? ) वचनीयतायाः [ ] स्वार्थमन्त्रस्य ॥२६॥ अशिष्टौ  
 च रहसि ॥२७॥ ससांघाटितायामुपसंपत्संनिपादे ( पाते ? ) ॥२८॥ आदौ त्रिःप्रगृहीता-  
 जलित्वं तादर्थ्ये दिवसारोचनं च ॥२९॥ औपयिकमित्यन्ते स्वार्थं विज्ञप्तेन वचनं

बुद्धलक्ष्येत् ॥०॥ स्वार्थं तदन्वितरेण ॥०॥ छन्दद्वेषमोहमयगतिविरहितस्य शक्तस्य  
कृताकृतस्मरणे संमतिरुत्साह ॥०॥ कृताकृतवेदनं स्थिते ॥०॥ वर्धत्ववर्धव्य-  
मानतायां सीम्नि प्रतिपत्तिः ॥०॥ गण्ड्याकोटनष्टवाचिकासमनुयोगाभ्यां सन्नि-  
पादकेन सन्निपादानां बोधनम् ॥०॥ तस्य तदर्थमासनं प्रज्ञपनम् ॥०॥ संमतस्य  
तत्कार्यार्थतायामेतत्त्वम् ॥०॥ सर्वत्र यथा वृद्धिका (?) ॥०॥ रुच्याग्राह्ये-  
ऽग्रत्वम् ॥०॥

[ इति ] कर्मपरिभाषा ॥ २ ॥

॥ समाप्तं कर्मवस्तु ॥ ९ ॥

§ १०, प्रतिक्रियावस्तु ।

( १ ) प्रतिक्रियावस्तु ।

नाप्रतिकृताज्ञपनजपक(इजं क)र्म प्रत्यनुभवेत् ॥०॥ उत्सृज्य पोषधं प्रवारणाञ्च ॥०॥  
न सीमान्तरस्थस्य कस्मिंश्चिदङ्गत्वम् ॥०॥ ध्वंसस्तद्गतौ साह्य गतस्य ॥०॥ उभयस्य-  
त्वमेकस्मिन्नेकत्र पादे परस्मिन् परत्र ॥०॥ सर्षसिन्नवष्टम्बिनि स्थितस्यावष्टब्धे ॥०॥  
रुद्धिरेवमनेकत्रोपगतेः ॥०॥ अर्हत्वमनेकशयनासनग्राहे ॥०॥ यथेष्टमस्य वस्त-  
व्यता ॥०॥ न व्यग्रकारित्वं जिनस्य ॥०॥ न पूरकत्वम् ॥०॥ नाकर्मणा तत्कर-  
णीयस्योत्थानम् ॥०॥ कृतत्वं यद्भूयस्कृतत्वे वाक्यस्थानुत्तरस्य ॥०॥ नाकीर्चित्वे  
निमिच्चानां बन्धे ॥०॥ पारिवासिके नान्तस्योपस्थानसंबृतेः ॥०॥ उन्मत्तकेन  
चोद्देशस्य ॥०॥ ज्ञप्तिरद्भेदानुष्ठानम् ॥०॥ अनङ्गमत्र मित्रव्यंजनत्रम् ॥०॥ न  
हास्यभावेन कस्यचित् स्पृहलमरुद्धिवुद्ध्या भेदोत्क्षेपयोः ॥०॥ दुष्कृतमसंघ-  
भूतत्वे ॥०॥ नान्येषां नानासंवासिकेभ्यो वर्हाणां पूरणे गणेन ज्ञप्तिवाच-  
नयोः ॥०॥ नासंपन्नत्वेऽर्हः] स्वसंघेन प्रत्यनुभवस्य ॥०॥ संपन्नत्वं ज्ञप्तिश्रुतावस्य  
नाविधिर्मव्यरूपे प्रतिनिधिना दूतेन प्रराजनम् ॥०॥ उत्तरञ्चोपसंपादनात् ॥०॥  
नाप्रतीष्टो दत्तत्वम् ॥०॥ धंसोऽत्र याचनस्य ॥०॥ विधित्वं मेवकज्ञपनपूर्वक-  
त्वेऽस्य ॥०॥ उत्क्षेपेऽप्येतत् ॥०॥ अत्रधानं परेणासमन्वाहाराद्युक्तो तत्रः ॥०॥  
नार्थच्छेदानां क्रमव्यत्या(?) त्यया)दरुद्धिः ॥०॥ अकरणीयत्वं भ्रे(?)पस्य ॥०॥ न  
व्यञ्जनान्तरसंश्रयात् ॥०॥ न भिक्षुभिक्षुणीत्वयोरन्यकर्मवस्तुप्रतिज्ञापिते चोदकेन  
कल्पपति सांगुल्यं प्रणिधिकरणम् ॥०॥ प्रतीतिमात्रेण सन्निपातादाने ॥०॥  
अनङ्गमदर्शने व्याघातित्वात् सत्त्वस्य प्रतिज्ञानम् ॥०॥ अनकाशां करणे चायो-  
गात् ॥०॥ संपत्यास्वयमनुत्थाने चोदकस्योत्थापनम् ॥०॥ अ[?]कोप(?)रोपक-  
परिभाषकृतामलाभावासाभ्यां संपस्य चेतकत्वम् ॥०॥ राजकुलपुक्तकुलज्ञाति-  
पुद्गलप्रतिसरणतामप्रतिसर्द्धां संपसाविश्रतः ॥०॥ अकुर्वाणसासागारिकती-  
र्थिकृष्यजघारणतीर्थ्यसेवानाचाररणान्यशिक्षणञ्च भिक्षुशिक्षायाद्भूत्कचप्रकचस्य

संघे रोम पातपतो निःसरणं प्रनर्चयतः समीचीमुपदर्शयतो विरमतो निमि-  
 चादवसारणं याचिते ॥ । कर्मदानावर्हणोपसंपादनप्रतिप्रसन्नमन्त्रो(१)न्म-  
 ज्ञनञ्च ॥ । कलहकारकतस्(१) जयेयुः कर्मणा ॥ । निगर्हणममीक्षणसंघाव-  
 शेषापत्तिकस्याप्रतिकृत्य ॥ । कुलदूपकस्य प्रवासनम् ॥ । अदानाकरणयोश्च  
 तदर्थं संनिपाताप्रकाशयोः ॥ । उद्घातने च तददृष्टेः ॥ । प्रतिसंहरणमत्रम्(१)  
 पण्डितागारिकस्य ॥ । तत्क्षमणक्रमत्र कर्मणः स्थानेऽवसारणं प्रति प्रतीतायाम[1]  
 पत्तावप्रतिकृतायामप्रतिकार्यायां संवरेणादृष्टिमुद्घातयन्तमनिच्छन्तं प्रतिकृति-  
 मनुष्ठातुमनुत्सृजन्तं च पापिकां दृष्टिमुत्क्षिपेयुः ॥ । “इहैवैनामार्याणि प्रति-  
 कुर्वीथा अयमेव त्वासंघः प्रसन्नमपिष्यति” इत्येवं व्रुयुः ॥ । नापत्तिं प्रतिच्छा-  
 दयेत् ॥ । नाज्ञाऽन्ततः प्रवेद्यत्वम् ॥ । यथाऋयचित् दुष्कृतस्य ॥ । प्रकृ-  
 तिस्ये ॥ । अनन्यदृष्टौ सोपसंपदि ॥ । तुल्यव्यंजने ॥ । अत्रैवैतत्सो-  
 चरम् ॥ । कृतत्वमस्यैदधर्मके ॥ । सीमान्तरस्थे च ॥ । संघे सर्वत्राज्ञापन-  
 जानाम् ॥ । “सन्निहिते तत्रास्र(१)श्र)मे प्रतिदेशनीयस्य गर्हमायुष्मन्तःस्थान-  
 मापन्नो(१)न्नः) सात्स्यं प्रतिदेशनीयन्त (१)यं) धर्मं प्रतिदे[श]यामि” इति ॥ ।  
 नैतन्मन्त्रवत् ॥ । संवरकृतेरतो व्युत्थान मानसीतः ॥ । अन्य (१) तस्यै  
 तदो (१) देशनात् ॥ । एकत्र ॥ । अनन्यदृष्टो(१)ष्टौ) तत्र ॥ । असमावन्त्ये  
 निकायतः ॥ । अभावे आपचितः ॥ । निःसर्गावीचनपूर्वकानैः(१)-  
 कातः ॥ । संघे स्थूलात् सर्वत्र ॥ । पंचरादौ शशेषागताद् गुरुणः ॥ ।  
 अशेषागतादनवच्छिन्ने भूयसि ॥ । लङ्घोर(?)स्माद्यत्पुत्रादौ ॥ । कृतवदन्ते  
 ऽत्रोद्युक्तस्यासंपन्नप्र(१)यत्वे कर्म ॥ । दुष्कारवचनमूढकृतस्य प्रत्यापत्तौ संज्ञाय-  
 मानस्य तेन ॥ । नामगोत्रोपसंहितामापत्तित्वात् कीर्तनम् ॥ । इयत्कालप्रति-  
 च्छन्नतया वा संघावशेषायाम् ॥ । आवर्हणमतो व्युत्थानकृत (१) ॥ । चरि-  
 तमानास्यस्य ॥ । षडहमादाय संघात् ॥ । अर्द्धमासं भिक्षुण्याः ॥ ।  
 गुरुधर्मातिक्रमेऽप्यस्य चरित्वम् ॥ । असति प्रतिच्छाददोषे तद् रुटिः ॥ ।  
 परिवासेन तदपहतिः ॥ । तावन्तं कालमाद[1]य संघात् ॥ । क्रियमान्(१)ण)  
 तायामनयोस्तसंघावशेषापदाने (१) धंसः कृतादानयोः ॥ । तस्मान्मूलोप-  
 क्रमत्वं दानम् ॥ । निर्वाह्य तत्प्रस्तुतम् ॥ । तस्मादरूढस्यास्य पृथग् तदानी-  
 मुत्थाप्यता प्रथमं च ॥ । प्रतिकार्यं तदान्तरम् ॥ । तस्मात् तादर्थं(१)र्थ्य)स्यापि  
 संश्रयत्वम् ॥ । अवरोध्यता चातिरिक्तस्य तत्प्रतिच्छादकालस्य ॥ । कर्मणा  
 न्यो(१)दानम् ॥ । आवर्हणाञ्च ॥ । तर्जनं चात्र ज्ञप्तिप्रथमवाचनान्तराले ॥ ।  
 निपतितस्य तृणप्रस्तारकेण ॥ । समुद्रे(१)द्वि)जनञ्च ॥ । कृततोत्कीर्तना-  
 न्तरम् ॥ ।

## (२) क्षुद्रकादिगतम् ।

निष्काश(१स)नं दुःशीलस्य ॥१०॥ । संघस्यात्र प्रगमः ॥११॥ । नासावेनद्व्युपे-  
 क्षेत ॥१२॥ । अवसार्पत्वं नाशितस्य ॥१३॥ । नासां मन्ये प्रणिधातृणाभवसारणस्य  
 प्रणिहितौ रूढिः ॥१४॥ । अवस्तव्यता दूषितस्थाने प्रवासितस्य ॥१५॥ । सर्वत्रोत्क्षिप्तके  
 संवास्तत्वासंभोग्यत्वे ॥१६॥ । संज्ञयात्र व्यवस्थानम् ॥१७॥ । अधर्मपक्षस्य(१)तिभिन्न-  
 तायामितरेण ॥१८॥ । नान्यस्य ॥१९॥ । नान्यत्रैत(१) प्रणिहिते ॥२०॥ । अपाश्रयेणास्य  
 वस्तव्यता सप्रेमकस्य ॥२१॥ । विकृतेः क्रियमाणप्रणिधिना ध्वस्तेन च निष्कास्य  
 मानेन भजने भाण्डस्य छोरणम् ॥२२॥ । चला(१)निष्काशा(१सः) ॥२३॥ ।  
 अवलम्बनस्य छेदनम् ॥२४॥ । अपतनधर्मणा तत्रोत्पाटनम् ॥२५॥ । संघेन तस्य  
 प्रतिसंस्करणम् ॥२६॥ । संप्रदास्य (१) ॥२७॥ । असंपत्तौ वैहारात् ॥२८॥ । न कलह-  
 कारकं निष्कास्यमानम् (१नं) वारयेत् ॥२९॥ । अनिष्टौ कलेरुपशान्त्यै प्रयत्ना-  
 दुत्क्षेपः ॥३०॥ । विनिश्चयगते व्युपशमनेन ॥३१॥ । निःश्रिते निःश्रयः प्रयतेत ॥३२॥ ।  
 निमित्तस्यापि कलेरुपसंहारिणोत्क्षेप्यता ॥३३॥ । संसृष्टविहारिणमपि भिक्षुणीभि-  
 रुत्क्षेपेयुः ॥३४॥ । अवन्दनार्हसंबुद्धिमत्रोत्क्षिप्तस्य भिक्षुण्याप्(१ः) कुर्युः ॥३५॥ ।  
 उद्भवोऽन्यस्य प्रणिधिः निमित्ते तदर्थाभिसन्धिनान्यप्रकृतौ ॥३६॥ । अरुहिरन्य-  
 धात्वं परत्र ॥३७॥ । अनुत्थानमुत्क्षेपे ॥३८॥ । स्थूलं ज्ञातमाहुप्यसत्रविनयमातृका-  
 धरवहुश्रुतपक्षमनिवाराणां निर्दोषनागारिकभिक्षुनादिपञ्चकायस्पण्डनेऽपि प्रतिसं-  
 हरणम् ॥३९॥ । नाक्रोशयेनावस्पण्डनम् ॥४०॥ । अनाशंक्यं स्वसाधारण्यम् ॥४१॥ ।  
 अनुपसंपत्कस्यैषां प्रयत्निते कर्तव्यता ॥४२॥ । न गृहिणि ॥४३॥ । पात्रस(१)-  
 खाख्यातारं प्रति भिक्षोरभूतेन पाराजयिकेन ॥४४॥ । क्रोशकं परिभाषकं च  
 निकृञ्जयेत् ॥४५॥ । व्यवस्थाकरणतः ॥४६॥ । प्रज्ञप्त्या ॥४७॥ । न निकृञ्जितया तस्य  
 गृहान् गच्छेत् ॥४८॥ । नासनं परिभुञ्जीत ॥४९॥ । न प्रज्ञप्तान् देयधर्म(१) ॥५०॥ ।  
 न पिण्डपातं प्रतिगृहीयात् ॥५१॥ । न धर्मं देशयेत् ॥५२॥ । यत् कर्म करणं  
 तद्गतानां निकृञ्जितत्वम् ॥५३॥ । अनुत्थानमस्यास्यपक्षकुलं प्रत्योत्क्षिप्तकात् ॥५४॥ ।  
 तैत(१)नमस्य केनचित् ॥५५॥ । क्षमितवत्पुन्मज्जनं क्षपनेन ॥५६॥ । भन्युत्थान-  
 मनुत्पन्नप्रतिच्छादचित्तस्यान्तिमातः ॥५७॥ । शिक्षाचरणेन ॥५८॥ । तद्वभाषाः  
 संपतः ॥५९॥ । कर्मणा दानम् ॥६०॥ । यान्जीव[म्] ॥६१॥ । शुद्धिरेकस्य पुरतो  
 देशनेन संघावशेषतो हीमतः ॥६२॥ । उत्रधरस्य विनयस्य मातृकायाः ॥६३॥ ।  
 ज्ञातस्य च ॥६४॥ । अशपतापत्तिव्युत्थानेन दण्डकर्मतः ॥६५॥ । निकायतो नामा-  
 शापचेर्नाम ॥६६॥ । समुत्थानं गौत्रम् ॥६७॥ ।

॥ समाप्तं प्रतिक्रियावस्तु ॥ १० ॥

## § ११, कालाकालसम्पातवस्तु ।

( १ ) कालाकालसम्पातवस्तु ।

अप्रतीतत्वे संघावशेषान्तर्धानिऽन्तास्थितप्रतिच्छादचिचस्याशक्तवतायां कृतं  
 ने वा किं वा कीदृश्यं चेति स्मर्तुमनुपसंपत् कतोत्क्षिप्तपोशानुत्थानं प्रतिच्छा-  
 दस्य ॥ । अष्टसावहारिकसंज्ञतायामापचेरसापराजयात् ॥ । अप्रज्ञप्ततायां  
 च ॥ । नाज्ञातत्वेन स्र(श्र?)द्वितत्वे वा ॥ । अनभिज्ञतासंज्ञिनोऽपि ॥ । भूम्य-  
 न्तरस्थितायां प्राचोऽपि ॥ । ज्ञानवत्प्रतिच्छादे विमतिः संघावशेषत्वम् ॥ ।  
 अ[?]वरणस्यापि साभूति(?) या प्रतिच्छादानुत्थानस्य ॥ । दुष्कृतमनादत्यैः(?)  
 चरणोत्सर्गे ॥ । तत्रैकायिकाया(?)चारे चात्र ॥ । संभवे चाप्रतिकृतौ ॥ ।  
 तदवस्थत्वं प्रत्यागतवचरणभूमेः ॥ । शोधिते वस्तुनि सा(?)पानुष्ठानमनिर्ज्ञाने  
 प्रतिच्छादकालस्यासंभ्यमान(?)न्यूनत्वस्य संश्रयणम् ॥ । चरितव्यतायां शुद्धा-  
 न्तिकत्वोत्तरस्य ॥ । चतुरो मासां(?)सान् शुद्धान्तिकमिति ॥ । अपरिमात्वस्या-  
 प्रतिच्छादे ॥ । संचिन्त्य शुक्रविष्टृष्टिसमुत्थानपरिमाणमिति ॥ । यावतीष्व-  
 प्रायस्तावत्कीमित्रमत्रानुष्ठितैः ॥ । अपरिमाण इत्यनिर्ज्ञानेऽस्य संश्रयसंबहुलाः  
 परिमाणवत्य इति प्राभूत्ये ॥ । अतिरिक्तेन कालानाम् ॥ । प्रभृ(?)तिमत्वेन  
 नाम्नाम् ॥ । गुरुत्वतीव्राशयकृतत्वाभ्यामादित्वेन ॥ । चरतोऽपरप्राक्सम्पन्न-  
 प्रतिचिकीर्षोत्पत्तौ शृ[?]र्ण दानमेकं चरणम् ॥ । नास्य प्रतिच्छन्नतायां  
 मानासे संभवः ॥ ।

॥ [इति] कालाकालसंपातवस्तु ॥ १ ॥

( २ ) पृच्छागतम् ।

नानन्त्येन्द्रे(?)ऽंशेऽहोरात्रस्य प्रतिच्छादोत्थानम् ॥ । नामादेऽह्वास्योद्भा-  
 नायात्मचिचानां प्रतिच्छादः ॥ । अभावत्वममत्यप्रक्रान्तिशस्य ॥ ।  
 तदर्थवशतयापि कृतौ ॥ । विनाशेन दुष्कृतम् ॥ । प्रात्कान्हा(?)त् ॥ ।  
 अनुत्सृष्टत्वं प्रतिच्छादचिचस्य तद्(?)चित्तानदोर्ष(?)भापत्तेः पराजितस्या-  
 प्रकृतौ ॥ ।

॥ समाप्तं कालाकालसंपातवस्तु ॥ ११ ॥

ॐ

## § १२, भूम्यन्तरस्थचरणवस्तु ।

( १ ) भूम्यन्तरस्थचरणम् ।

पारिवासिकमानास्यचारिभ्यामभिवादनवन्दनप्रत्युत्थानांजलिसामीचीकर्मणां  
 प्रकृतिस्वाद् भिक्षोरस्वीकरणम् ॥ । यस्याभ्यामकरणमितरैरपि तत्र तद्वत्स्य ॥ ।



यदपरिहाणिकातोऽन्यथाऽनेन सार्द्धमचंक्रमणम् ॥ नीचतरासनकत्वादिनि-  
 पादः ॥ पश्चाच्छ्रमणात्मकतात्पर्य(१)कुलानुपसंक्रमणम् ॥ अकल्पनमेकछन्दने  
 शय्यायाः ॥ प्रत्राजनोपसंपादननिःश्रयदानश्रमणोद्देशोपस्थापनानामकरणम् ॥  
 प्रज्ञप्तिवाचनयोश्चाप्रतीष्टिः ॥ कर्मकारकभिक्षुण्यववादकसंघवैथासिकस-  
 म्मतेः ॥ अब्यापारण(णं) प्राक्सम्मतेनापि ॥ अनववदनश्च भिक्षुणी-  
 नाम् ॥ अनुदेशः पोषधे प्रतिमोक्षस्य सत्यन्यत्रोद्देशरि ॥ अचौदनं विपस्या  
 भिक्षोः ॥ अनपसारितस्य संघात् ॥ अकरणं सवचनीयतासकील-  
 त्वयोः ॥ अस्थापनमववादपोषधप्रवारणाज्ञप्तिवाचनानाम् ॥ असंप्रयोगो-  
 ऽनेन ॥ वर्जनं कृतदण्डनिमित्तस्य ॥ अन्यस्य चापराधस्य ॥ नापरा-  
 ध्यता सम्रह्यचारिणु ॥ व्रतस्य (१) निःसारः प्रवर्तितो भवतीति मनसि  
 करणम् ॥ काल्यमुत्थाय द्वारमोक्षो दीपस्थालकोद्वरणविहारसेकसंमार्गसुकुमारि-  
 गोमयकार्प्यानुप्रदानानि ॥ धावनं प्रसावोच्चारकुट्याः ॥ पोच(प्रौल्ल)-  
 नमृतकालानुरूपपानीयोपस्थापनम् ॥ प्रणाडिकामुखानां धावनम् ॥  
 आसनप्रज्ञापनम् ॥ कालं ज्ञात्वा धूपतत्कटच्छ्रुयोरुपस्थापनम् ॥  
 प्रतिबलता चेच्छास्तुर्गुणासंकीर्तनम् ॥ न चेद् भाषणकाध्वेषणम् ॥  
 उप[ ] न्वाहते गण्डीदानम् ॥ घर्मश्चेद् भिक्षुणां वीजनम् ॥ अन्त्यत्वमस्य  
 सर्वोपसंपन्नानाम् ॥ कृते भक्तकृत्ये शयनासनस्य छन्ने गोपनम् ॥ पात्रा-  
 धिष्ठानछोरणम् ॥ कालं ज्ञात्वा स्तूपानां संमार्जनम् ॥ सुकुमारिगोमय-  
 कार्प्यनुप्रदानम् ॥ सामग्रीविलायां प्रज्ञपनाद्या(१)गुणगतात् ॥ प्रतिबलता  
 चेद् दिवसारोचनम् ॥ न चेदन्यस्य भिक्षोरध्वेषणम् ॥ पादशोचनं भिक्षुणां  
 चैकालिकं कालानुरूपेणाम्बुना ॥ अक्षणश्चानिच्छायां स्नेहोपसंहारः ॥  
 विहारेऽस्य प्रत्यन्तेऽर्हत्वम् ॥ अर्हत्वं सर्वत्र लाभे ॥ प्रतिजाग्रियात् शुशुल-  
 पक्षे ॥ तद्वदत्र तत्रभावैपीयशिक्षाचरणानाम् ॥ असंघे च ॥ परि-  
 च्छिन्नेषु च तदाश्रमपदोपगम्यः ॥ न बहुतां परिहरेत् ॥ स स्वविर-  
 प्रातिमोक्षतायै प्रयतेत् ॥ न यस्यान्ये त्रिःप्रभृतयः सर्वथा तदाल्पचरणा-  
 स्तत्र तच्चरेत् ॥ नान्यत्र प्रथमावरणेणा(१)नुद्गमयेत् (१) ॥ वस्त्वद्  
 पृथमारोचयेताम् ॥ संनिपाते संपस्य ॥ प्रत्यहं न चेद्विरं चरितव्य-  
 त्वम् ॥ अत्र त्रिचतुरैः ॥ नैरानेनार्थेनारस्पण्डयेत् ॥ कलहकारका-  
 गमनश्च श्रुत्वा भयश्चेद्वदतः प्रतिनिः[ ] सृजेतां संपसन्निधौ पुद्गले वा ॥  
 अपगतौ मीतेरादानं तत्रैव ॥

॥ [ इति ] भूम्यन्तरस्थचरणवस्तु ॥ १२ ॥

( २ ) पृच्छागतम् ।

छेदस्तदहोरात्रस्य प्रकृतित्थेन सार्धमेकछन्दने प[रि]रिवासिक्रमानास्यचारिणोः शय्यायां वह्निः[ः]सीम्नि च ॥१॥ । अनारोचने च ॥२॥ । नासन्निधौ तत्तीक्ष्णि धान्याणामस्योत्थानं निर्दोषं तदहरागतौ सीमान्तरे गमनम् ॥३॥ । न प[रि]रिवासिकेन सार्धमेकछन्दने पारिवासिकः शयीत ॥४॥ । न तीर्थ्युपनिवासस्यस्य तेन सार्धमत्र दोषः ॥५॥ ।

॥ [ इति ] भूम्यन्तरस्यचरणवस्तुपृच्छा ॥ १२ ॥

§ १३. परिकर्मवस्तु ।

नाप्राप्तिद्विकस्य मूलत्वम् ॥१॥ । अरुदिरवसितप्रवारणोक्तौ प्रवारणास्थापनस्य ॥२॥ । तथा ग्लानकर्तृकतायाम् ॥३॥ । दूतेनापि ॥४॥ । ग्लानगतायाञ्च ॥५॥ । नैतत् प्रतीच्छेयुः ॥६॥ । आगमय त्वमायुष्म(१)ग्लानस्तत्रप्रयोज्यम् (१) इत्यायुसं (१)भूतेति ग्लानोऽसावननुज्या इति प्रतिवेदयेयुः ॥७॥ । अनवगतस्वरूपतायां कृतस्य कर्तृत्वा चोदनस्य ॥८॥ । शिष्टेऽपि नाकाले प्रवर्तेत ॥९॥ । नानुपस्थास्य स्मृति-संप्रजन्ये ॥१०॥ । नानेकान्ते ॥११॥ । नाकारितावकाशे ॥१२॥ । तत्रं प्रवारणस्य ॥१३॥ । अस्तृत्वौ स्मारणम् ॥१४॥ । अकरणेभ्यः वचनीयतामस्य कुर्यात् ॥१५॥ । सवचनीयं त्वायुष्मन् करोमि न त्वं योऽस्मदादानासादनबलोक्य प्रक्रमितच्यमस्ति मे धायुष्मति प्रणिहितं वचनायेति ॥१६॥ । आगच्छत्येव दमनधमन (१) चोद्यताम् ॥१७॥ । आलपनादेरस्यनुविनिवर्तनम् ॥१८॥ । तथापि पोषधस्थापनम् ॥१९॥ । ततोऽपि प्रवारणायाः ॥२०॥ । करणमस्य त्र(१)स्थापकैः स्थापितस्य तेन सार्धमुपसाारणम् ॥२१॥ । कृतत्वेऽवकाशस्यासृदुत्वं चेत् सकीलकरणम् ॥२२॥ । वक्ष्याम्यत्रामुत्र वा वसेऽमुत्र वा वस्तुनि यत्र चेष्टमित्यारोप्य चाम(प१)त्तिं दर्शयित्वापराधमुत्सृजनेन ॥२३॥ । शीलदृष्ट्या चाराजीव विपत्या सर्वसास्य चोदनादेः क्रियायां रूढिः समूलकम् ॥२४॥ । न दुर्दु(१)लेन कुर्यात् ॥२५॥ । अकरणमत्र वस्तुनः सत्यत्वम् ॥२६॥ । क्रियानिमिष्ठानां परसंज्ञापस्य सानुभावणसेति त्रिविधं श्रुतम् ॥२७॥ । अमूलत्वमश्रुदितस्य ॥२८॥ । कामोऽनेकत्वे ज्ञातुश्चोदनादौ ॥२९॥ । नाप्रवारणे तत्स्थापनम् ॥३०॥ । नापोषधे तस्य न न कृतौ कृतत्वे वा स्त्रीत्वे स्थापकस्यै[क]तरस्य पुंस्त्वे स्थापितत्वं स्थापितता ॥३१॥ । न नष्टप्रकृतिना ॥३२॥ । नाशीलैक्येन ॥३३॥ । नानयोः ॥३४॥ ।

॥ [ इति ] पारिकर्मण(१)वस्तुपृच्छा ॥ १३ ॥

§ १४. कर्मभेदवस्तु ।

( १ ) कर्मभेदः ।

न नानात्वाय संघस्य प्रमा(१)म)विशुभकामं चोदयेदुन्मोदयेद् वा चोद-

यत्वम् १० । न यत्र प्रतिविरोधस्तेन सार्धमभिनमने समासीत ११ । द्वित्रासनान्त-  
रिमन्वत्र १२ । एवमितरस्तेन १३ । अन्तरितस्थानयोर्विहारस्य देयत्वं ग्राह्यता  
च १४ । धर्मं विनये चैतद्वतामधर्मे चेदग्निनिवेशो ज्ञात्वा संघसामग्रीञ्च विद्यते १५ ।  
तस्मान्न तदन्यानां संभूय कृतौ कर्मणो रुद्धिन्न परस्परैणाव्यग्रत्वम् १६ । कलि-  
परावणत्व एषा तद्विपक्षस्य चावन्धत्वमिदं धर्मभिः १७ । प्रत्युत्थानासनोपनिम-  
श्रणासंलपनालपनसंमोदनव्यवलोकनालोकनानामप्यकरणम् १८ । लहशयनास-  
नानुप्रदानं हस्तसंव्यवहारकेन(१ण) १९ । वचनेनान्यत्र सद्यतमित्यपरम् २० ।  
प्रत्यन्ते विहारस्य २१ । मृद्धद्वा(२) वयमिति वदत्सु यूय(३वय)मपि श्रमणाः  
ज्ञाप्यपुत्रीयाः स्म इत्यात्मानं प्रतिजानीध्वे २२ । येषां चेदं वृत्तमियं वार्ता  
कालणिको वः शास्ता येनैतदनुज्ञातमेतदपि वो न प्रापद्यत इति प्रतिबदेयुर-  
न्यत्र २३ । न भिक्षुण्यासनमोक्षं हापयेत् २४ । ददीतोपासकपिण्डपातम् २५ ।  
नापसारितानामेषां सामर्थ्यस्य विना सामग्रीलाभेनोत्थापनम् २६ । न विना  
षोषधेन प्रकृतिस्वताप्राप्तिः २७ । दत्त्वपिनं(१) कुर्युः २८ । कर्मणोत् २९ । पूर्वं  
च ३० । कल्पते सामग्रीमङ्गलार्थमापदि योषधः ३१ । तस्यैव चात्र कालस्य  
निमित्तत्वम् ३२ ।

॥ [इति] कर्मभेदवस्तु ॥

(२) पृच्छागत ।

कर्मणः कृतावधर्मवादिभिरन्तःसीद्धि पृथक् तद्भेदोऽतद(१)चित्तेन ३३ ।  
रुद्धिरस्तिन्न प्रतिस्वं कर्मणः ३४ । नास्वपथं प्रति ३५ । धर्मवादि कृतता संघस्य  
कृत्वत्वम् ३६ । स्थलस्थैत्र सन्नि(१) चेद् भिक्षुणीनामचोद्यत्वम् ३७ । न्यग्रत्यमेषां  
धर्मपक्षैः ३८ । ध्वंसोऽनुविधौ तत्पथस्य ३९ । नैनं कुर्यात् ४० । अचोद्यत्वं पक्षा-  
परपक्षव्यवस्थितस्य भिक्षुणीसंघस्य ४१ । नैवं भिन्नस्य ४२ । समग्र्य(१)याच-  
मानानां नियोज्यत्वम् ४३ । धर्मवादिनि गामित्वं वार्षिकस्य ४४ । उभयसन्निपाते  
चाविमज्याप्रतिपाति(२दि)तस्य संघे वैभाज्यस्य ४५ । संघपरिमाणता चेत् तत्र  
तेषाम् ४६ । जनता चेति रे(१)षाम् ४७ । तच्चदा यदीयस्योत्(१) संघे प्रति-  
पादनं द्वयोश्चेदुभयत्र ४८ । पुद्गलमो(१श्रो)ऽत्रांशित्वं न संघशः ४९ ।

॥ [इति] कर्मभेदवस्तुगते पृच्छा माणविके ॥ १४ ॥

११५. चक्रभेदवस्तु ।

ज्ञपनतो वा पृथग्भावस्य धर्मात् संघभेदः ५० । शलाकाग्रहणतो वाने-  
नार्थेन ५१ । अरुद्धिरस्यासंघपरिमाणत्वे भिद्यमानानामसत्त्वे चान्येषामन्तः-  
सीद्धि संघपरिमाना(१ण)नामधर्मधर्मयोः तथात्वेन प्रत्यनगतत्वानन्तर्यम् ५२ ।  
धर्मसंज्ञिनोऽपि भेदे ५३ ।

॥ [इति] चक्रभेदवस्तु ॥ १५ ॥

## § १६. अधिकरणवस्तु ।

( १ ) अधिपकरणम् ।

चत्वारि संक्षो(धो)पकरणानि <sup>(१)</sup> । पदार्थतयात्वे विप्रतिपत्तिर्वर्जनं सापत्तिका  
 सामग्र्यदानं कर्मणि <sup>(२)</sup> । प्रथमनिमित्तस्यैकोतीकरणेन व्युपश्रमनम् <sup>(३)</sup> । अनेन  
 च शुद्धिदाने च द्वितीयनिमित्तस्य <sup>(४)</sup> । तृतीयनिमित्तस्य प्रतिकरणे निवारण-  
 नियुक्तत्वादानेन च <sup>(५)</sup> । दापनेनान्त्यस्य <sup>(६)</sup> । सम्यै(ः) स्वयमशक्तौ विचदित्रोः  
 संप्रतिपादनम् <sup>(७)</sup> । मिश्रमिरभिरुचितैः <sup>(८)</sup> । तयोरेकतः स्थलस्थानारोचनम् <sup>(९)</sup> ।  
 सम्मतिरेषां संघेन साततिकानाम् <sup>(१०)</sup> । अनुत्(ः) तद्योजितफलहेऽत्र संमन्तव्य-  
 ता <sup>(११)</sup> । लज्जिनः शिक्षाकामस्य <sup>(१२)</sup> । सुविनिश्चितस्य विनये <sup>(१३)</sup> । कुशलस्याधिपर-  
 णवृत्तेऽध्याचारे च <sup>(१४)</sup> । विनिविष्टस्य <sup>(१५)</sup> । धीरस्यासंरन्ध्रव्यं प्रस्थानस्य <sup>(१६)</sup> ।  
 समस्य <sup>(१७)</sup> । अवगन्तुः <sup>(१८)</sup> । प्रत्यायकस्य <sup>(१९)</sup> । विदुषः <sup>(२०)</sup> । अनुपश्रमने  
 तैः <sup>(२१)</sup> । संघे निक्षेपः <sup>(२२)</sup> । असक्तौ तेन व्यूढानां संमतिः <sup>(२३)</sup> । अनूतानां  
 संघपरिमाणात् <sup>(२४)</sup> । समन्तु(ः)त्वं वर्गस्य स्वतोऽसक्तौ व्यूढकेषु <sup>(२५)</sup> ।  
 अक्रि(ः) कृतावुत्तरस्यासक्तौ यत् आदानतन्निक्षेपः <sup>(२६)</sup> । प्रत्यागते मूलसंघे  
 नाधिकरणसंचारकसंमतिः <sup>(२७)</sup> । तेन सख्यविरे संप्रतिभोक्षेऽन्यत्र संघ उपनि-  
 क्षेपः <sup>(२८)</sup> । त्रिमास्यात् कालस्य दानं वृत्तारोचनपूर्वकम् <sup>(२९)</sup> । य(ः)स्यैतत् <sup>(३०)</sup> ।  
 प्रत्यर्पिते तेन स्रग्धरविनयधरमातृकाधरेषु <sup>(३१)</sup> । पण्मास्याः <sup>(३२)</sup> । तैः  
 प्रभाविते स्वविरे अपर्यन्तस्य <sup>(३३)</sup> । वर्जयेदसौ ततः स्वीकरणं कस्यचित् <sup>(३४)</sup> ।  
 ओपादुकदन्तकाष्ठात् <sup>(३५)</sup> । एकासननिपदनैकचक्रमणालापसंलापाथ <sup>(३६)</sup> ।  
 अनुप(ः)धृत इदं वदेत् तेषां च आयुष्मन्त अलाभानालाभादुर्लभो न सुलभा ये  
 स्युं [स्ता]प्यते धर्मविनये प्रवज्य कलहजाता विहरत भण्डनजाता विगृहीता  
 विवादमापन्नामायुष्मन्तः कलहो मा विग्रहो मा विवादः । नास्ति द्वयोर्युध्यतो  
 जयः । एकस्य जय एकस्य पराजयः । नास्ति द्वयोर्धावतो जयः । एकस्य जय एकस्य  
 पराजय इति <sup>(३७)</sup> । बहुतरमतेन संस्थापनमित्यपरः संप्रतिपादनप्रकारः <sup>(३८)</sup> ।  
 धर्मविनिश्चितावश्यसंभवो न वृत्तिविनिश्चितौ <sup>(३९)</sup> । विचदित्गतत्वात् तद्-  
 तायाः प्रत्यवगतेः <sup>(४०)</sup> । खरमधिप्रत्यर्थिकैर्गृहीतत्वे प्रगाढं च व्याह(ः)त्वे तेषां  
 भेदाशंकितायामस्य संस्रयणम् <sup>(४१)</sup> । असंवरणकरणीयं(ः) यत्वेऽर्थस्य <sup>(४२)</sup> ।  
 परिशिष्टेषु स्वविरपर्यन्तेषु <sup>(४३)</sup> । मूलसंघेन <sup>(४४)</sup> । शलाकाप्रहणेनात्र मतस्य  
 गृहीतव्यता <sup>(४५)</sup> । शलाकाचारकसंमतिः <sup>(४६)</sup> । शलाकानां तेनोपस्थापनं  
 द्विप्रकाराणाम् <sup>(४७)</sup> । अजिह्वानङ्गाकुटिलसुवर्णसुगन्धस्पर्शवच्चे धर्मशला[का]-  
 खिह रस(ः) विपर्ययः <sup>(४८)</sup> । सन्निपादायारोचनं "संघे सर्वैः सन्निपति[त]व्यं

शलाकाधारयिष्यामि" इति <sup>१३३</sup> । तथा चेद्धर्मशलाकाधिक्यसंपत्तिं मन्येत न छन्दानुप्रदानेन सामर्थ्ये(?) म् चारयेत् <sup>१३४</sup> । दक्षिणेन पाणिना धर्मशलाकानां चारणकाले ग्रहणं चामेनेतरासाम् <sup>१३५</sup> । प्रतिच्छाद्यैनाश्(?) म् पूर्वाः प्रकाशि-  
 (१ शी)कृत्योपपाचनम् । स्वविरेण धर्मशलाका अजिता अर्धका अकुटिल[?] सु[?]र्णा मुगन्धा सुखसंस्पर्शा गृहाणेति द्वयोर्वाचोरितरां मृगय तेन प्रय-  
 च्छेत् <sup>१३६</sup> । यथा धर्मोद्भवं मन्येत तथा चारयेच्छ्रं वायुतं वा <sup>१३७</sup> ।  
 "आयुस्स(?) ष्मन्, उपाध्यायेन ते धर्मशलाका गृहीता आचार्येण समानो-  
 पाध्यायेन समानाचार्येण । आल[?]केन न संलसकेन संस्तुतकेन सप्रेमकेन  
 त्वमपि धर्मशलाकां गृहाण । मा ते एतैः सार्धं विरुक्षणं भविष्यति" इति  
 वा कर्णामूले तन्तुनायम् <sup>१३८</sup> । नामधर्मशलाकां गृह्णीयात् <sup>१३९</sup> । नाष्ट्रा घ्नधर-  
 विनयधरमातृक[?]धरान् <sup>१४०</sup> । न मेदोद्भवक्षान्त्या नाधर्म्यस्य न जानन्नयो  
 भविष्यन्ताम् <sup>१४१</sup> । समत्वे महाश्रा[?]कमुद्देश्यैकधर्मशलाकाग्रहणम् <sup>१४२</sup> । नाध-  
 र्मेणाप्येवमुपशान्तं खोटयेत् <sup>१४३</sup> । निरवद्यचोदनशुद्धिदानम् <sup>१४४</sup> । चतुर्धा तचोद-  
 नावस्तुमन्यानुष्ठानवशात् । प्रतिकृत्यनपेक्षणादुन्मचकृतेन च <sup>१४५</sup> । त्रिष्वधेषु  
 स्मृतिविनयदानम् <sup>१४६</sup> । अमृदविनयस्यान्ते <sup>१४७</sup> । त्रयः सापत्तिकत्यात्  
 संक्षोभाः <sup>१४८</sup> । निर्विक्रियसविक्रियश्च द्विप्रकारः प्रादेशिकः सकलसंघगतश्च <sup>१४९</sup> ।  
 पक्षापरपक्षव्यवस्थानेन <sup>१५०</sup> । प्रथमतः प्रतिकरणं प्रतिज्ञाकारकः <sup>१५१</sup> । संमुख-  
 विनयो द्वितीयस्मात् <sup>१५२</sup> । तृतीयस्मात् कृष्णप्रस्तारकः <sup>१५३</sup> । बहूनामर्थेऽत्रासंधे  
 देयानामेकेन प्रतिकरणम् <sup>१५४</sup> । सह चानेकासाम् <sup>१५५</sup> । यामिति चो(?)लिङ्गनतो  
 ज्ञानोद्भासनेन <sup>१५६</sup> । पक्षान्तरे च समेते <sup>१५७</sup> । नाप्रतिज्ञातस्य वृथा वा प्रति-  
 देशनायारूढिः <sup>१५८</sup> । कल्पते सहेन चोद्यतम् <sup>१५९</sup> । तथा चोदकत्वम् <sup>१६०</sup> ।  
 अनियमोऽत्र संख्याविशेषाणाम् <sup>१६१</sup> । संवृतत्वं कायवाग्भ्यां पिठकानां वेत्तृत्वम-  
 धीयत्वम् <sup>१६२</sup> । विपर्ययतो धर्मविनयतद्विपर्ययाणां संघमप्ये संचिन्त्येति  
 त्रिकान्वितं चोदकमाह(?) द्वि)वेरन् <sup>१६३</sup> । उन्मोटनदुःशीलविपर्य[?]दीपिनोः <sup>१६४</sup> ।  
 संज्ञपनमवे(?) संज्ञपनमरे(?)न्तः पिठकानां धारयितुरनेवविधस्य समनुयुञ्जीर-  
 क्षेनं भावः प्रतिबोधाय स्थानस्थापनेन <sup>१६५</sup> । कालदेशोर्पाथानुष्ठानानि स्थानम् <sup>१६६</sup> ।  
 अरूढिस्थानान्तरसंचारे कालप्यो(खो?)पसंपत्तौ च चोदनस्य <sup>१६७</sup> । प्रतिज्ञानं  
 चोदितेन निष्ठा दृष्टसत्यत्वे प्रकृततरत्वे च गुणतोऽन्यस्य चतुष्प्रमाणीकरणं  
 गृह्णिषोऽपि <sup>१६८</sup> । संवादनं सात्य(?)त्वे <sup>१६९</sup> । न संदिग्धतायापचौ ज्ञातत्वम् <sup>१७०</sup> ।  
 प्रतिज्ञानवदतो निश्चयः <sup>१७१</sup> । अप्रत्यवगतिरवज्ञानम् <sup>१७२</sup> । प्रतिज्ञापय संघेऽजानता  
 निर्धारणनियोगदानम् <sup>१७३</sup> । तत्समावैपतत(?)पित)त्वादस्य तत्रमावैपि(?)पी)य-  
 त्वम् <sup>१७४</sup> । प्रणिधिकर्मरूपेणास्य के(क?)धिदाज्ञातम् <sup>१७५</sup> । असाधु तन् (?)त् घ्न-

विरोधात् ॥ अनिष्टेष्वव्युपशमधे(ऽभार्धे)नापवर्गाकरणस्य ॥ तर्जनीयादीना-  
मेतच्चेनाव्यवस्थापनात् ॥ प्रतिपतो(ऽ)र्ज्यैतदवज्ञानमिति च प्रत्यवगतावदर्श-  
कत्वप्रतीतायाजातत्व(ऽ)भावात् ॥ न व्युपशमार्थमौत्सुक्यं नापधेरत् ॥

॥ [ इति ] अधिकरणवस्तु ॥ १ ॥

( २ ) पृच्छागतम् ।

सर्वशमयानां कृत्याधिकरणेष्वतारः ॥ नानर्हस्य पूरणे संघन्यवहृतौ  
सम्पत्त्वम् ॥ सोपसंपत्कानामितरे(ऽ)मेतैर)धिकारः ॥ अर्हत्वं पुंसां  
स्त्रैणे ॥ व्युपशान्तत्वं च्युतौ जीवितादुपसंपदो वा ॥ वर्ज(ऽ)र्ज्यैतापचा-  
धान्यपक्षयता (ऽ)त्वात् ॥ अक्रान्तावन्येन दीर्घरोगजातस्य स्पृष्टौ वा ॥  
अर्थादापिनोऽभिपुक्तस्य वा ॥

॥ [ इति ] अधिकरणवस्तुपृच्छा ॥ २ ॥

॥ समासश्चाधिकरणवस्तु ॥ १६ ॥

§ १७. शयनासनवस्तु ।

( १ ) शयनासनवस्तु ।

( १ ) वन्द्याः ।

परः प्रातिमोक्षसंवरेण प्रव्रजितस्य वन्द्यः ॥ समानश्च बुद्धः ॥ अनन्य-  
व्यंजनः ॥ पुमांश्चाहीनः] स्त्रियाः (ऽ) यः) ॥ भूम्यन्तरस्यष्वस्तभिभुष्णी-  
दूपकाधर्मपक्ष्य नानासंवाप्तिकानन्तर्यच्छपितसमापन्नव्यग्रान्यचित्तपृष्ठाभिमुखान-  
न्तर्गृहभक्ताश्रयवर्जम् ॥ आगारिकस्य प्रव्रजितः ॥ बुद्धः सर्वस्य ॥

( २ ) विहारकरणम् ।

कुर्वीत विहारम् ॥ एकस्य गन्धकुटेर्मध्ये पक्षस्य कर्तव्यता ॥ तदभिमुखं  
द्वारकोष्ठकस्य ॥ चतुरस्रस्य साधुत्वम् ॥ त्रिशालस्य च ॥ प्रति-  
गृहीत ॥ वसेद् विहारे ॥ अनुजानीयुरन्येषां साधिके वस्तुनि संघाय  
पुद्गलाय वा भिक्षवे वासवस्तुकरणम् ॥ संश्रे(ऽ)द् दानपतिरनुज्ञातेन ॥  
कल्पन्ते प्रतिक्रमणकचद्विरन्तर्वा नगरस्य ॥ व्यवध्यर्थ(र्थे) भित्तिकरणेन  
स्वरूपे संरागप्रत्ययं विहन्त्युः ॥ जंजलिपूरणिकया पापनेन मातृग्राममनु-  
गृहीत नाच्छिन्नधारदानेन ॥ अर्हस्तु कालत्वेऽन्तर्वर्षमागतौ लामे ॥  
बहुतरत्वं वर्षकालस्य तच्छाभकालः ॥ न कर्मण्यलाभो भोक्ता ॥ देयत्व-  
मप्राप्तवच्छाभे भक्तस्य ॥ नान्ये लामे सन्निपत् (ऽ) ॥ निर्दोषमवदर्थं गतस्य  
बेलाप्राप्तौ विहारान्तरे भोजनम् ॥ दुर्भे(ऽ)भिक्षे चानन्तस्य स्त्रे ॥ अतिरि-  
क्ततायां मिधुः] मात्रार्थाद् ग्रहणञ्च विहारमव्युपेरत् (ऽ) ॥ दानपतेः प्रति-

संस्करणायोत्सारणम् १०० । असंपत्तौ सांघिकस्य यावच्छक्तिविनियोगः १०१ ।  
 खयञ्च प्रतिसंस्करणम् १०२ । लाभग्राहिणो विहारस्य सम्मार्जनम् १०३ । न  
 प्रसादलाभस्य वैहारत्वम् १०४ । बद्धा द्वारं विहारात् प्रवरे(ऽस्ते)युः १०५ । पालञ्च  
 स्थापयित्वा १०६ । पिण्डकस्यासत्त्वोऽस्मै दाना(ऽनम्) १०७ । नानिर्याय चौरतत्त्वा-  
 भावं सद्धारमनुप्रयच्छेत् १०८ । दर्शनमतिरुक्षशरणपृष्ठं मा त्वं ज्वरित इति  
 संज्ञया ख्यापनमित्यत्रोपायः १०९ । निवासानामपितृमात्रादेः प्रत्यभिज्ञाने ११० ।  
 नाप्रत्यभिज्ञाताय सभयताया(यां) द्वारं दद्युः १११ । धारयेदारण्यकच्छुक्करम् ११२ ।  
 उत्थायैवासी काल्यमवलोकयेद् विहारं चैत्याङ्गनं च ११३ । उच्चारयेत् तत्कृतः  
 छोरयेत् प्रस्त्रावथेदुद्भयेन्नखरिकाभिलिखितं चेत् समं कुर्यात् ११४ । मण्डलक्रमेषां  
 स्थानेषु ११५ । पात्रशेषस्यास्मै दाने(ऽनम्) ११६ । घृहिष्येत्सविहारोपविचारतः ११७ ।  
 यथेष्टमीर्यापथा उद्देशदाने ११८ ।

( ३ ) सामीच्यादि ।

धातुसाम्यं पृष्ठा सामीचीकरणपूर्वकं नवकस्य ग्रहणायेर्ध[ऽ]पथभजनं  
 (ऽनं) ११९ । बद्धकतोः १२० । अनवनतकायचिचस्य १२१ । रि(ऽक्र)जोः १२२ ।  
 चंक्रम्यमाणो पदपरिहाणिका चंक्रम्यस्य १२३ । स्थानस्य तिष्ठति १२४ । निपण्णे  
 निपन्ने च निषादस्य १२५ । नीचतरासने १२६ । उक्ते नवकस्य १२७ । उक्ते ङु (ऽ)  
 किक्यासुक्ते १२८ । बहुत्वे ग्राह्यस्यावलोकनम् १२९ । सुक्त्वो(ऽक्त्वा)श्रमणोपविचारं  
 स्वाध्यायनम् १३० । दर्शनोपविचारे स्थित्वा १३१ । अववादेमेकान्ते प्रक्रम्य संवा-  
 दयेत् १३२ । सुस्वाध्यायितं सुपरिमृष्टं निःसंदिग्धं कृत्वोद्देश(ऽ)धारणं च १३३ ।

( ४ ) मन्त्रोद्देशकादिसम्मतिः ।

संमन्येरन् विहारभक्तौ(ऽक्तो)द्देशकयवागूखाद्यकफलभाजकम् १३४ । अवरमा-  
 त्रकस्य १३५ । शिष्टमन्येह(ऽ)ध्वर्यं तदारूपम् १३६ । भाण्डगोपकम् १३७ । वर्षा-  
 शाठ्याः कठिनस्य चीवराणां भाजकञ्च १३८ । उपधिवारिकप्रेषकौ १३९ । भाजन-  
 चारिकम् १४० । चारणेऽस्यैषां व्यापारो भुक्ते च गोपने १४१ । पानीयवारिकम् १४२ ।  
 प्रासादकवारिकम् १४३ । अवलोक्य तेनाच्छटाशब्दकरणपूर्वकमुं संस्था(ऽ)-  
 भजमानानां प्रव्रजितानाम् १४४ । संस्थायां विनियोजनम् १४५ । तद्यथा अन्य-  
 शब्दतया भोजने सुसंब्रूततया सुप्रतिच्छन्नतया चैत्यवन्दने यथाशुद्धिकया च १४६ ।  
 परिषण्डाघा(ऽ)वारिकम् १४७ । तत्प्रथ[म]तो भुक्त्वा वंस(ऽ)मादाय काक-  
 चटकपार[ऽ]वतादीनां भुङ्क्ष्वनेषु तेन वारणम् १४८ । शयनासनवारिकम् १४९ ।  
 मण्डशयनासनवारिकम् १५० । लोकप्रवेशसकल्पिकतयोः भोजने १५१ ।  
 छण्डिक (ऽ) वारिकम् १५२ ।

॥ [ इति ] शयनासनवस्तु ॥ १ ॥

(२) पश्चिमक्षयनासनवस्तु ।

(१) वन्दनम् ।

सप्रणामां वच[न]मन्धकारवन्दनस्थाने निश्चारयेत् ॥१॥ । लोपचारप्राप्तप्रसू-  
तोऽप्यस्य वन्दनेन वन्देत ॥२॥ । कृतत्वमस्य ब्राह्म्या सामीच्यम् ॥३॥ । न सान्त-  
रस्य सामीचिं कुर्यात् ॥४॥ । न वन्दमानं नारोग्ययेत् ॥५॥ । नावन्द्यत्वमतीता-  
या[त]तप्रत्ययाः ॥६॥ । न पल्लिगुधं वन्देत ॥७॥ । न पल्लिगुध(धं) चरेत् ॥८॥ ।  
नैनां स्वीकुर्यात् ॥९॥ । न पल्लिगुधम्(?) ॥१०॥ । द्वयं पल्लिगोधो भक्ष्यमाणेन वा  
दन्तकाष्ठादशुचिना वा तद्धूमिपरिकर्मणात् ॥११॥ । पल्लिगोधतद(?)त्र नाप्यमेक-  
चीवरता चदे(?)वेद)वन्दने पञ्चमण्डलकेन जंघप्रपीडनिक्रिया च ॥१२॥ । न ध्वजन्तं  
जीवेद्य(?) भिवन्देद्दु(?) तो)त्सृज्यान्त्याद्ययसमागारिकां च ॥१३॥ । नवकमेनमा-  
रोग्ययेत् ॥१४॥ । वन्देद्(?) त) वृद्धम् ॥१५॥ ।

(२) नामगोत्राग्रहणम् ।

क्षुत्वा च ॥१॥ । नायुष्मन् नामगोत्रादेन तथागतं समुदाचरेत् ॥२॥ ।  
नास्य निरू(?)ह)पपदं नाम गोत्रं वा गृह्णीयात् ॥३॥ । न वृद्धस्य ॥४॥ । प्रतिरूप-  
मत्र स्वविरायुष्मतोरुपपदत्वम् ॥५॥ । न पूर्वत्र ॥६॥ ।

(३) नवकर्म ।

गमनागमनसपन्नवस्तुनि नवकर्मिको विहार प्रति स्थापयेत् ॥१॥ । वृक्षवा-  
पीचंक्रमैः ॥२॥ । उपविचारेण ॥३॥ । अव्याकीर्णविलापयञ्जनिवोषे ॥४॥ । कारण-  
मनुज्ञाते दायाविहारकरणार्थाद्(?) वस्तुनस्तत्करणभाण्डस्य ॥५॥ । लपनस्यास्य  
स्थापनाय दानम् ॥६॥ । क्रयस्तदुपयोज्यस्य तैलादेः मात्रया ॥७॥ । भोजनं नवकर्म-  
(?) मि)क्रेण तादृशस्य यादृश्य यवने ॥८॥ । निर्विहारस्य तस्य स्थानस्य ॥९॥ ।  
प्रग्रहणं स्नेहलाभस्य ॥१०॥ । सामन्तरुविहारे पञ्चपुरत्वं विहारेषु पर्यन्तः ॥११॥ ।  
त्रिपुरत्वं भिक्षुणीनाम् ॥१२॥ । अतिरेचन गन्धवृट्टिवाताग्रपोतिकयोः पुरद्वयेन ॥१३॥ ।  
निरवधमेया पुरोजित्वे भरस्य पुरोद्वेष्टनम् ॥१४॥ । प्रारब्धस्य च वृहचो(?) तो)ऽल्पस्य  
वा करणार्थं भञ्जनम् ॥१५॥ । वृहत्कार्यं स्तूपप्रतिमयोः ॥१६॥ । स्त्री(?) स्त्री)र्णता-  
निमित्तं तुल्ययोरपि निष्ठितयोश्च ॥१७॥ । प्रदेशस्य च प्रतिसस्करणार्थम् ॥१८॥ ।  
अवतारणं च वज्रादीनाम् ॥१९॥ । अन्यारोपना(?)यापि ॥२०॥ । नैतदर्थमनुष्ठापिता  
नयेत् ॥२१॥ । जातकादिचित्रबुद्धवचनलेखयोश्च ॥२२॥ । भंग्यस्यैव विशेषस्य  
क्रियायै ॥२३॥ । करणमकृतावारभ्यान्वेन शेषस्य ॥२४॥ । देयत्वमर्घोत्थिते सधार्थञ्चे-  
दुत्थानकस्य ॥२५॥ । पश्चाद्भक्तं तद्दाने कालो हेमन्तश्चेद् व्रीष्मश्चेति पूर्व-  
भक्तम् ॥२६॥ । भक्तकरणीयकालस्य शेषणम् ॥२७॥ ।



## (४) यात्रप्रवर्तनम् ।

नासजीभूय ततो यत्रायां प्रवर्त्तन् ॥ प्रक्षालितं(?) हस्तपाचं तदन्तः ॥  
पुरोभक्तिकमुत्थानकारकः समादापयेत् ॥ पथ[१]ङ्गते पानकहस्तपादा-  
भ्यंगम् ॥

## (५) द्वारादिकरणम् ।

नयनानां द्वारकरणम् ॥ कवाटदानम् ॥ आयामकटकचर्मरुण्डि-  
कयोः ॥ वातायनकरणम् ॥ मध्येबहिःसंघृतस्याभ्यन्तरे विशालस्य  
समुद्राकृतेः ॥ जालिकादानम् ॥ कवाटिकायाश्चक्रिकाघटिकाश्च(?) सू-  
चीनाम् ॥ अजपादकण्डधारणम् ॥ अरामथैत(?) वाननम् ॥ करणं  
प्रासादस्य व्य(?)यनाग्रतः ॥ सप्ताष्टेष्टकास्तरदानम् ॥ तदुपरिन्यास-  
पट्टस्य ॥ तस्य स्तंभपंक्तेः ॥ तेषां त्रिकटपत्राणाम् ॥ तेषां सिकानाम् ॥  
तासां धरणीनाम् ॥ तासां पट्टानाम् ॥ तेषामिष्टकास्तरस्य ॥ तस्य  
श्लोदकस्य ॥ अप्रपातार्थं वेदिक[१]करणम् ॥ अकम्पनायामस्यामवसंग-  
दानम् ॥ लोहकीलकैरस्य संपर्षणम् ॥ सोपानस्वातिरोहार्थं करणम् ॥  
अधःशैलमयस्य ॥ मृन्म(?)मयस्य ॥ मध्ये ॥ उपरि दारुमयस्य ॥  
अधिरौहेन्निःश्रयण्या ॥ दाह्वंसं(?)शरञ्जुमप्यामपि ॥ इष्टकास्तरण-  
पुष्करिणिकायां द्वारकोष्ठके चाकर्दमीभावाय दानम् ॥ तदुपरि श्लोदकस्य ॥  
सुधायास्तस्य ॥ अभावे काष्ठपट्टस्य षट्त्राणार्थम् ॥ अन्तरेऽन्तरे वेष्ट-  
कायाः ॥ चैत्येऽप्येतत् ॥ कृतत्वमस्याव्याममात्रे कृततायाम् ॥

## (६) सिंहासनादिकरणम् ।

सिंहा[स]नस्य करणञ्चतुरस्रकस्य ॥ सिंहसुरत्वं पादकेषु ॥ ग्रहणाय  
संचारणे लोहकण्टकानां चतुष्केऽप्येषु दानम् ॥ पट्टिकाभिः दानम् ॥  
मखकर(रक?)सादानम् ॥ उपरि वितानस्य ॥ लम्बनानां सोपानरुस्य  
करणमिष्टकामयस्य स्थिरे ॥ संचार्थं काष्ठमयस्य ॥ असंपत्तौ निःश्रय-  
णिकायाः ॥ पादपीठस्य करणम् ॥ पत्रवैभङ्गकानामुपरि दानम् ॥  
कक्षपिण्डकस्य वा ॥ पादयोरालम्बनमत्रार्थः ॥ संपत्तिरस्य शिखा(?)काक-  
चटकयोः ॥

## (७) जालादिदानम् ।

पारावतेभ्यो भुञ्जानानामि(म?) विहेठाय जालदानम् ॥ चातुर्विध्यमसं ॥  
मौञ्जे(ञ्जे) वानव्यजः साणकः कार्पासिक इति ॥ चक्रिकाणां चतुःपु  
कोने(?)षु दानम् ॥ तासु वन्द्यः ॥ स्फुटनं क्लेदश्च काष्ठस्य तस्मादयोम-

यीनाम् "। छिद्रस्यासैकदेशे करणम् "। शुक्ते प्रवेशाय "। वेलायामस्य पिधानम् "। पानीयेन प्रासादस्याप्लवनाय वर्षासु पट्टानां दानं स्तम्भान्तरेषु "। आलोकाय प्रदेशमुत्सृज्य "। अभावे कि(ईकी)टकानां किलिञ्जानां वा "। वार्षिकमासचतुष्टयान्तेऽपनयनम् "।

(८) मण्डलवाटादिकरणम् ।

करणं मण्डलवाटस्य "। सीतलस्थानतायै वहिः भित्तिदानम् "। स्तम्भपंक्तेः "। वात[?]यनमुक्तिः "। आसनोचमसमानकक्ष्यापरिमाना-(?णा)न्तानाम् "। जालिकाकवाटिकयोः दानम् "। करणं भक्ताश्रयुपस्थापनचक्रमणशालानाम् "। अबच्छादनकानाञ्च कण्ठादेशपरिक्षिप्तानाम् "।

(९) भूमिगृहकरणम् ।

कल्पते भूमिगृहकम् "। प्रासादवदत्र वेदिकागतम् "। वेष्टिकत्वञ्च कन्ध्यायां प्रव्रजितारामस्य "। मुक्तोदकभ्रमत्वञ्च भित्तेः "। वाटपरिखाभ्यां च "। पुद्गलस्य च विहारः सपरिकरः "। करणं नीलादिकृत्तनिमित्तामुखीभावाय नीलादिचतुर्विधस्य लयनभित्तीनाम् "।

(१०) चित्रणमारामस्य ।

कल्पते चित्रितत्वं प्रव्रजितारामस्य "। द्वारे यक्षाणां चित्रणं वज्रधरादिहस्तानाम् "। द्वारकोष्ठके संसारचक्रस्य "। गण्डपञ्चकस्य करणम् "। ऊर्ध्व(ई ध्वं)देवमनुष्याणाम् "। चतुर्णां द्वीपानाम् "। औपपादुकानां सचवानां घटि(ई टी)यंश्वच्यवमानानामुपपद्यमानानां च रागद्वेषमोहानां पारावतभुजंगस्य(ई शू)कराकारेण "। ग्रथ्यमानयोर्मोहेन पूर्वयोः "। प्रतीत(ईत्य)समुत्पादस्य सामन्तके द्वादशाङ्गस्य "। सर्वस्थानित्यतया ग्रस्तस्य "। ऊर्ध्वं बुद्धस्य शुक्लं निर्वाणमण्डलमुपदर्शयेत् "। गाययोरारब्धमिति द्वयोरधस्तात् "। आख्यातुरस्य स्थापनम् "। सामन्तकेनास्य महाप्रातिहार्यमारभ्ययोः "। प्रासादे जातकानाम् "। मालाधराणां यक्षाणां गन्धकुटिद्वारे "। उपस्थानशालायां स्वविरपंक्तेः "। गन्ज(ई)द्वारे[?]इरहस्तानां यक्षाणाम् "। राघहस्तानां भोजनमण्डपे "। जेन्ताका(ईक)शालापामङ्गुरक(ईकु)शहस्तानां कु[?]भाण्डानां चाग्निद्वी(ई मि दी)पयताम् "। अग्निशालायां मेचकादि कुर्वतामग्निं च ज्वालयतां कुम्भण्डपुत्राणाम् "। दानपतेर्दीपं धारयतो देवदूति(ई)यस्य च "। नानालंकारविभूषितानां कलशहस्तानां नागकन्यकानां चोदकं धारयन्तीनां पानीयमण्डपे "। ग्लानकल्पिकशालायां तथागतस्य ग्लानमुपतिष्ठतः "। बर्चःप्रसावकुट्योः शिवपथिकायाः शिरस्करोटेर्वा "।

## (११) विहारसम्भारजनादि ।

न विहारे न[वि]भ्यवकाशे सधूममग्निं कुर्याद् धारयेद् धारकुट्टिमे सर्वम् <sup>१७</sup> ।  
 धारयेत् तदर्थं भ्रष्टिकाम् <sup>१८</sup> । समावर्तनार्थञ्चायमयं दण्डतपकम् <sup>१९</sup> ।  
 द्विसुकेनापि (?) दारुमयेनैतत्कार्यसम्पत्तिः <sup>२०</sup> । विहारमुपधिधारिकः संमृज्यात्  
 प्रत्यहम् <sup>२१</sup> । असक्तावुपयुज्यमानं प्रदेशम् <sup>२२</sup> । अवशिष्टमष्टम्यां चतुर्दश्यां च  
 सर्वसंघे गण्डीमाकोदृष्य धर्म्या वा कथयार्येण वा तूष्णीम्भावेन <sup>२३</sup> । धर्मो-  
 त्तवे सेकः सुकुमार्याश्च गोमयकार्पाप्रदानम् <sup>२४</sup> । खानमन्तरे (?) <sup>२५</sup> ।  
 हस्तपादप्रक्षालनं वा <sup>२६</sup> । मात्रस्वोदकदिग्धेनानुपरिमार्जनम् <sup>२७</sup> । स्नेहलाभस्य  
 करणम् <sup>२८</sup> । रत्नार्थं संमृष्टामृष्टयोर्गन्धकू(?)टिप्रतिमाचैत्ययष्टिच्छयानां  
 चार्यां गार्थां पठ्वा लंबणं(?) नं <sup>२९</sup> । शयनासनस्नानयोरेवाहोः प्रत्यवेक्षणं  
 संस्करणं निसृतैः <sup>३०</sup> । सेकसंमार्गसुकुमारिगोमयकार्पाप्रदानानि वासवस्तूनि  
 कुर्वति <sup>३१</sup> । शयनासनं मलिनं प्रस्फोटयेत् <sup>३२</sup> । अतीव चेद् धावेत् <sup>३३</sup> ।  
 ऊर्ध्वं(?) सेकात्संसृष्टिः <sup>३४</sup> । ततश्च प्रज्ञपनम् <sup>३५</sup> । न प्रस्फोटिते सरजस्क-  
 तायामाधारे <sup>३६</sup> । प्रज्ञपनीयेभ्यो वस्त्रसैकस्य प्रस्फोटने विनियोगः <sup>३७</sup> ।  
 लूहस्य <sup>३८</sup> । प्रतिसंस्करणमस्य <sup>३९</sup> । अशक्यतायां चीरीकृत्य यथासुपनिवप्य  
 प्रस्फोटनम् <sup>४०</sup> । तथाप्ययोग्यत्वे गोमयमृदास्तम्भसुशि(?)पिरे कुप्य(?)स्य वा  
 लेपनम् <sup>४१</sup> । पुण्याभिष्टुद्विचिरतायै दात्रः (तुः?) <sup>४२</sup> । न द्वारकोष्ठके प्रासादे  
 वा शय्याप्रज्ञप्तिं कृत्वा वा धारणं कुर्यात् <sup>४३</sup> । कुर्यादशत्रुव (?) प्रतिपक्षेणार्थ-  
 भटमीचतुर्दशै(?)शयोः) प्रासादे <sup>४४</sup> ।

## (१२) मंचपीठादिधारणम् ।

धारयेत् मंचपीठम् <sup>४५</sup> । कुटिमाविनाशार्थं मण्डलमद्यःपादकच्छेदं  
 कारयेत्(?)पमृष्टके चैनं स्थापयेत्तुकेन वा वेष्टयेत् <sup>४६</sup> । नासंधो लेख्यपादक-  
 पीठकास्वीकृतं भजेत <sup>४७</sup> । न भद्रासनमापाङ्गसनयोः <sup>४८</sup> । न दीपष्ट-  
 क्षस्य <sup>४९</sup> । अनेकलतकसोत्पन्नपरम् <sup>५०</sup> ! धारयेत्तुरसकं धृपीम्बोपधानकं  
 च <sup>५१</sup> । चतुर्दिगुणद्विगुणीकृत्य सेवनम् <sup>५२</sup> । तूलेन पूरणम् <sup>५३</sup> । नाकृतं  
 प्रत्यवेक्षणे शय्यां कल्पयेत् <sup>५४</sup> । नानुपस्थाप्य स्मृतिम् <sup>५५</sup> ।

## (१३) सहासिपीदनम् ।

नापरेण सार्द्धमेकत्र मंचे संस्तरेऽन्यत्र वा <sup>५६</sup> । कल्पयेदसंभवे लजी पृथक्  
 प्रत्यासीयोन्तरे वृषिकापात्रस्याविकादि दत्त्वा स्मृतिमुपस्थाप्य <sup>५७</sup> । न शया-  
 दूर्ध्वं(?) प्रचितिः सात्वेन मंचरूढतां भजेत <sup>५८</sup> । न द्वया (?) दीर्घपीठि <sup>५९</sup> ।  
 नासंस्त्यामनेकः <sup>६०</sup> । न त्रिवर्षाः परेणान्तरितेन सार्धमासनस्य <sup>६१</sup> । भजे-

दान्तर्गृहे उपाध्यायेनाप्यासनाभावे स्मृतिमुपस्थाप्य " । न क्वचिद् गृहि-  
णानुपसंपन्नेन वा " । न पण्डपण्डकमातृघातकादितीर्थ्यतीर्थ्याक्रान्तकस्तेय-  
संवासिकनानासंवासिकासंवासिकैः " । न शिक्षादत्तकः " ।

( १४ ) सांघिकपरिष्कारेषु वर्तनम् ।

शिक्षादत्तकेनासनत्वं चिलिनिमि(मिनि?)कायाः सोपसंपत्तंघसन्निपाताद-  
न्यत्र " । न स्थलिकायाः संकटसंवाधप्राप्तावनापत्तिः " । संचारणे शयनास-  
नस्य द्वौ चेदेकेन मंचपीठस्य वा ग्रहणमपरेण वृक्ष्या(प्या)देः " । नैतत्सां-  
घिकमद्यमाकर्षेन्निक्रमपेदधीन(?) तथा कुर्याद् यथास्य धून(?)त)मलरजोभियोगः  
संपद्येत्(?) त) " । नास्याशुचिकुट्योः सान्निहित्यम्मजेत " । न विनस्य (?)  
छोरयेत् " । आतपनं स्ये(?) शोषणं प्रस्फोटनं छिद्रेर्गडकदानम् " । दण्ड-  
कस्य स्फोटो (?) " । क्षीणमध्यस्थान्तयोर्मध्यताकरणम् " । रंजनं  
तदर्हस्य " । अशक्यप्रतिसंस्करणतायां दीपेषु विनियोगो धर्तिकात्वेन रत्नोप-  
योगेषु पुद्गलदातृकेष्वपि " । अनुपय(?)ज्यमानस्यात्र कर्दमेन भित्तिस्तम्भ-  
कवाटसुपिरेषु रत्नेषु लेपनमित्यनुप्रतिपत्तिः " । अदेष्टस्ये(?)गृहीत्रा " ।  
शिष्टस्य संघेन संनिपत्य गण्ड्याकोट्टनेन " । न शक्यं सांघिकमपहरन्तं दंष्ट्र(?)  
न निवारयेत् " । नो त्रासे सांघिकमच्युपेक्षेरन् " । अतंप्राप्तस्य स्थानम् " ।  
नेतरूपत्रै(?)योज्यत्वम् " । परिभुक्तिरसंभवे स्वस्थानोपनयनस्य स्थानान्तरे  
परिभोगेन " । न स्थानान्तरीयं भक्तोपकरणलाभं स्थानान्तरे परिभुञ्जीत " ।  
तेनम(?)न्यसै दद्युः " । दासत्वं ग्रहीतुः " । दातृप्रगमे " । निरवधौंसि-  
भिः सांघिकस्य स्वस्यैव निरुपयोज्यस्य तृणकाष्ठस्योपयोगः " । यथागतिकानु-  
दिष्ट अष्टस्योपयोज्येन यथावृद्धिका " । साहे याचनसंपाम् " । नातो  
विप्रयुक्तं वियोजयेत् " । शुद्धत्वमुदकेन पादस्यैतत् तद्वावने " । प्रविष्टत्वं  
कुटौ तत् " । न निपद्यायोनिपद्यापण्ण(?)मुपस्थापयेत् " । नास्यां यथा-  
वृद्धिका " । न कर्दमामिपपरिशुद्धं मिश्रम् " । नागभ्या निपीदेत् " ।  
न सत्यार्थिनि कृतकृत्य आवृद्धि भोज्यं धारयेत् " । अकृतकृत्यत्वमन्तरालार्थ-  
तन्नतायां मुक्तावासनस्य " । चीवरैरुपेनदायपट्टेन वा तदधिष्ठितं कुर्वीत " ।  
नार्थिसद्भावे सत्यां गतौ सांघिकस्य पल्लियुद्धतां भजेत " । निरवद्यमेवंविधाद्  
वियोजनं सत्यर्थं " ।

( १५ ) नापितभाण्डादिधारणम् ।

धारयेत् संघो निपदां पुत्रकं(?) चा(वा?)स्याः " । नापितभाण्डञ्च सु(?)तयां  
प्रक्षिप्य भित्तौ(?)चौ) स्थापनम् " । वासी च सपरशुनखादनादि तद्  
भाण्डम् " । दानमनेनामृन्म(?)यस्य भिक्षोः याचितकत्वेन " । न

मिक्षुणीकाचभाण्डं धारयेत् ॥१॥ । धारयेत् सर्वं तैलमाजनम् ॥२॥ । कौर्ड(ईड)वात्  
प्रभृत् (३)त्यर्धकौडवात् ॥३॥ । स्थालीमामसीञ्च ॥४॥ । असाः पर्यङ्किकाम् ॥५॥ ।  
मृन्म(शम्)धञ्चेद् धानम् ॥६॥ । लब्धसंवृतिः दण्डां (१) ॥७॥ । सिक्क्यं चैकव-  
र्णम् ॥८॥ । दधुरेने (१) ॥९॥ । जीर्णग्लानयोः ॥१०॥ । संभवत्यनयोरेकेन वचसा  
दानम् (१) ॥११॥ । धारणं सशब्दस्य श(ईस)रीसृपादिप्रतिक्रियार्थं दण्डस्य ॥१२॥ ।  
बन्धनं यटे[र]मूलास्फोटे कृटेन ॥१३॥ । प्रान्तादङ्गुलेन ॥१४॥ । धारयेच्छत्रं वा रुढं  
वर्णमपम्या ॥१५॥ । पञ्जरप्रमाण(णं) दण्डम् ॥१६॥ ।

( १६ ) ग्रामादिचर्या ।

नानेक (१) ग्राममध्ये गच्छेत् ॥१७॥ । मार्गवशतः[ ] चेत् पार्श्वान्वनतेन ॥१८॥ ।  
प्रचरेत् प(पि)ण्डाय वर्षतायां देवस्य ॥१९॥ । नाकल्पिकत्वम् ॥२०॥ । दण्डे निली-  
नस्य ॥२१॥ । स्थिते गृहेषु स्थापनम् ॥२२॥ । निर्गच्छता ग्रहणम् ॥२३॥ । न घोषवेश-  
पानागारराजकुलचण्डला(ण्डाल)कठिनस्यतां भजेत् ॥२४॥ । नाशुचिकुटिसमीपेष्व-  
स्थानम् ॥२५॥ ।

( १७ ) आरण्यककर्मणीयम् ।

न रत्नभूतेन वस्त्रेना(श्या)रण्ये निवसेत् ॥२६॥ । न मेरुकाचचूर्णेन प्रणाकासं(१)  
जातः ॥२७॥ । हिंशोः ॥२८॥ । निम्बावासकप्रत्रा(१)णाम्वा ॥२९॥ । तत्पुटस्य तत्रोप-  
करणतद(१)त्वम् ॥३०॥ । शोषणमसे(१)स्य तदर्थम् ॥३१॥ । दिग्मार्गतिथिदिवसन-  
क्षेत्रेष्व[ ]रण्यकः[ ] कुशलः स्यात् ॥३२॥ । नित्य[म्] सन्निहिताग्निपानीयः ॥३३॥ ।  
सक्तुत् (१)कृतुत्) संनिदध्यान्नतुकानि मधुसर्पिपि (१)पिपि) यथाशक्ति ॥३४॥ ।  
शेषं भोजना (१) ज्ञायते चेत् ॥३५॥ ।

( १८ ) मिश्रुण्यक्रमणीयम् ।

न मिश्रुण्यरण्ये वसेत् ॥३६॥ । करणं वर्षकस्य नगराम्बन्तरे ॥३७॥ । नास्तेपाय (१)  
द्वारे तिष्ठेत् ॥३८॥ । नावलोकनके ॥३९॥ । न चतुष्पथे ॥४०॥ । नाप्रायृतवती ॥४१॥ ।  
प्रावरणत्वमत्र संकक्षिकायाः ॥४२॥ । नापिधापिनो वासेद् (१) गृहिसंनिधाने ॥४३॥ ।  
अर्धपर्यङ्कोऽसाः पर्यङ्कस्थाने ॥४४॥ । दरीत प्रसावकरणद्वारे प्राणकाप्रवेशाय  
वस्त्रप्रभृति ॥४५॥ । न प्रवेशावरणं विहारे मिश्रुणीनाम् ॥४६॥ । मिश्रुण्युः ॥४७॥ ।  
अनालापाने अववादपोषधप्रवाराणांस्वापनैरेनाः परिदमधेयुः ॥४८॥ । नाननु-  
द्यास्ये(१)षा मिश्रुं विहारं प्रविशेत् ॥४९॥ । सत्यसिनसा(१)न्तरेऽभ्यनुज्ञानम् ॥५०॥ ।  
प्रस्त्रे (१) निर्जयोऽप्रदुष्टताम् ॥५१॥ ।

( १९ ) सूच्यादिसमायोजनम् ।

शु(१)षीघटिकाचक्रिकाटाकाशुश्रितानां बन्धनाय विहारे समायो-  
जनम् ॥५२॥ ।

( २० ) उपधिवारककरणीयम् ।

प्रदोषवध्वा (?) प्रत्यवेक्षणंमुपधिवारिकेन विहारस्य <sup>१००</sup> । जागरणं सभय-  
तायां प्रा(?)हरिकत्वेन <sup>१०१</sup> । तव्यु(?)तेन वर्जनं स्वप्नसमापत्त्योः <sup>१०२</sup> ।  
कृततामत्र संविधानस्य उपधिवारिकं संघस्वविरः पृच्छेत् <sup>१०३</sup> । विहारमोषे न  
चेद् बहुत्वं समायुक्तैरुपधिवारिकस्य दास्य (?) <sup>१०४</sup> । हापने यावतामेतत्ताव-  
तामंशानाम् <sup>१०५</sup> । धारयेत् कुञ्चिकां ताडकं च <sup>१०६</sup> । नावद्धा यावद् भावं  
बन्धनैः द्वारं प्रक्रामेत् <sup>१०७</sup> । शून्यावासं चेत् श्विशो[त्] सेकाद्यनुकुर्यात् <sup>१०८</sup> ।  
भाण्डं विप्रकृतं प्रतिशमयेत् निर्मृज्य(ज्ये?) दक्षमं चेत् <sup>१०९</sup> । सं(?)थेत् कल्पका-  
रोऽल्पहरिततां कारयेत् <sup>११०</sup> । गृहिणथेदत्रागच्छेद्युर्धर्म्यमेभ्यष्कथामन्यच्च शक्य-  
धर्मः कुर्यात् <sup>१११</sup> ।

( २१ ) वृक्षरोपणम् ।

नाकल्पिकं वृक्षरोपणम् <sup>११२</sup> । नैनमुत्त्वा न पालयेत् <sup>११३</sup> । आयुष्मणा(?)न्त-  
र्वृक्षम् <sup>११४</sup> । अन्यमाफलनात् <sup>११५</sup> । चिरत्वे पंचकं वर्षाणाम् <sup>११६</sup> । स्वत्वान्नि-  
युक्तस्यात्र भिक्षोः <sup>११७</sup> । हस्तयोः श(?)शो)चनम् <sup>११८</sup> । पादयोः दन्तकाष्ठवितर्ज-  
नम् <sup>११९</sup> । पात्रनिर्मादनं स्नापनमिति यापनम् <sup>१२०</sup> ।

( २२ ) गर्भगृहकरणम् ।

गर्भगृहस्य शीतवारणार्थं करणम् <sup>१२१</sup> । गवाक्षानां(?)णा)मस्योच्छ्वासाय  
मोक्षः <sup>१२२</sup> । अवच्छादनदानम् <sup>१२३</sup> । गृ(?)ग्री)ध्मेऽस्याच्छेदार्थमपनयः पूर्वस्यापि  
वर्षास्वक्रेदान्तम् <sup>१२४</sup> । निर्वाहस्य चाम्भस(?)सः)करणम् <sup>१२५</sup> । न मूलवृत्तिमव्युपेक्षे-  
रन् <sup>१२६</sup> । वर्षद्विभागेन विभज्य परिकर्मणाम् <sup>१२७</sup> । क्वचिदन्तकाष्ठभक्ष्य(?)क्ष)णं  
क्वचिन्मुखशोचनं क्वचित् पादयोरित्येवं न तत्प्रसृततया <sup>१२८</sup> ।

( २३ ) पुष्पफलादिरक्षा ।

पुष्पफलरक्षणाय भिक्षूणामुद्देशः <sup>१२९</sup> । भक्तकालाध्वमपरेषाम् <sup>१३०</sup> । प्रथम-  
तरं भुक्त्वा तैर्गमनम् <sup>१३१</sup> ।

( २४ ) पठनम् ।

पृथक् प्रवृत्त्यापि पाठको बहुतरोपस्थापनकारिणामशक्त(?) सानुकम्पे-  
त् (?) <sup>१३२</sup> । अनुकम्पेतोद्दृष्ट तद्विनयं तदुद्देशस्याप्यायनिकपरिपृच्छानिकदानैः  
भिक्षुणीः <sup>१३३</sup> ।

( २५ ) लेखनम् ।

लिखेच्छेत्सम् <sup>१३४</sup> । असमर्थश्च स्मर्तुं धारणाय विनयम् <sup>१३५</sup> । अलेख्यत्व-  
मस्य <sup>१३६</sup> । तद्वदत्र प्रातिमोक्षः <sup>१३७</sup> । तत्प्रतिसंयुक्तम् <sup>१३८</sup> । पैङ्गलिकस्य च <sup>१३९</sup> ।

( २६ ) परिष्कारेषु निमित्तकरणम् ।

अदोषं निमित्तकरणम् <sup>(१)</sup> । सांघिके नाम्नः शयनासने लेखनम् <sup>(२)</sup> । देय-  
धर्मोयमशुक्लसेदनाग्नि विहार इति <sup>(३)</sup> । वस्त्रेषु च <sup>(४)</sup> । अन्यत्र चैवंविधे <sup>(५)</sup> ।

( २७ ) बुद्धवचनस्य छन्दस्थनारोपणम् ।

न बुद्धवचनं छन्दसि पदे क्रमे वा तत्परायणतयाऽऽरोप्य पठित उद्गृही(ह्री)त  
द्वहिः (?) शास्त्राणि समर्थः परसंज्ञपने अनुत्सृजन् बुद्धवचनाभियोगम् <sup>(१)</sup> ।  
तृतीयो दिवसभागस्तत्कालो [१५] प्रणा(१भा)तः <sup>(२)</sup> । रात्रेश्च <sup>(३)</sup> । उद्गृहीता-  
नुग्रहिणो मन्त्रान् <sup>(४)</sup> । प्रयुञ्जीत <sup>(५)</sup> । नोपघातिनः <sup>(६)</sup> ।

( २८ ) रत्नत्रयभिन्ना नमस्कृता ।

रत्नत्रयस्यैषु नमस्कृत्याने व्याहारः <sup>(१)</sup> । नान्यदेवतां नमस्वेत् <sup>(२)</sup> । न  
पूजयेत् <sup>(३)</sup> । नासत्कुर्यात् <sup>(४)</sup> । आपा(पां) गाथां भाषणेनैनामभिमुखं स्थित्वा  
संघोध्य(?) छटाशब्देनायनप्राप्तो न गृह्णीता (१ त) <sup>(५)</sup> ।

( २९ ) शिल्पानुद्ग्रहणम् ।

न शिल्पमनुतिष्ठेत् <sup>(१)</sup> ।

( ३० ) उपस्थानादिकरणीयता ।

शिक्षेयुरुपस्थापयेद् (?) वा <sup>(१)</sup> । तद्भाण्ड[म्] समुत्सृज्य शस्त्रकोशं सूची-  
गृहकं मेलंद्रुकं च <sup>(२)</sup> । उपतिष्ठेत् कुशलशक्तिसया (?) तीर्थं पुण्य[?]भिप्रा-  
येना(?)नभृतिकया <sup>(३)</sup> । न विवेकं दत्त्वा अन्यत्र गच्छेत् <sup>(४)</sup> । गच्छेत् तद्दूषेपु  
प्रत्ययेषु प्रतिविहारेऽस्वाद्युपद्रवे व्यपदिश्य <sup>(५)</sup> । कुर्यान्नापितकरणीयं सन्नह्यचारि-  
णस्तुल्यव्यञ्जनस्य प्रतिगुप्तप्रदेशे <sup>(६)</sup> । घटनं च भयं मञ्चाङ्गस्य <sup>(७)</sup> । ग्रन्थ-  
(१थ)नञ्च रत्नार्थं मालागुणानाम् <sup>(८)</sup> । लेखनश्च रत्नपूज[?]भूतस्यासत्त्वकृतेरा-  
लेख्यस्य <sup>(९)</sup> । तत्त्वं तदर्थलेखायाः <sup>(१०)</sup> ।

( ३१ ) मृतनक्रिया ।

मृतस्य सन्नह्यचारिणः शरीरपूजाकरणम् <sup>(१)</sup> । दहनमस्य न चेत् सप्राणक-  
त्रणत्वम् <sup>(२)</sup> । प्रत्यवेक्षणेन निश्चयः <sup>(३)</sup> । निखन[न]माह्लावनम्या नद्याम् <sup>(४)</sup> ।  
अयुक्तो दवमध्ये स्थापनम् <sup>(५)</sup> । निषद्योदक्षिरसो (?) दक्षिणपार्श्वेन <sup>(६)</sup> ।  
कक्षपिण्डकस्य शिरसि दानम् <sup>(७)</sup> । तृणैः पत्रैः वा प्रतिच्छादनम् <sup>(८)</sup> । धर्म-  
श्रवणदक्षिणादेशनयोः करणम् <sup>(९)</sup> । स्पृष्टवद्भिः सचेलत्नानस्य <sup>(१०)</sup> । अन्यैर्हस्त-  
पादप्रक्षालनम् <sup>(११)</sup> । चैत्यमभिनन्द्य प्रवेशः <sup>(१२)</sup> ।

( ३२ ) स्तूपनिर्माणम् ।

द्वैविध्यं स्तूपे <sup>(१)</sup> । सहगतत्वं स्तम्भभूतता च <sup>(२)</sup> । अर्हत्वमस्य प्रवृत्ति-

तानां कल्याणञ्चेत् ॥१॥ । सर्वाकारस्य बुद्धानाम् ॥१॥ । जगतीचतुष्कं जह्म[ः]।  
 षण्डकहर्मिकायष्टयस्त्रयोदश छत्राणि वर्षस्थालकनित्याकाराः ॥१॥ । विचर्ष-  
 स्थालकस्य प्रत्येकबुद्धानाम् ॥१॥ । फलपरिमाणैः छत्रैरेकाधिकैरस्य श्र[ः]वका-  
 नाम् ॥१॥ । तथागतपार्श्वदेशवैष्टतता चेत् तस्यां दिशि करणं यत्रैषां तत्परि-  
 वारदाने च स्थानमभूत् ॥१॥ । नान्यस्मिन्न यथावृष्टिका ॥१॥ । मुण्डकस्य  
 पृथग्भ[ः]जनानाम् ॥१॥ । चहिरेषां संचारामात् कर्तव्यत्वम् ॥१॥ । अर्हत्पार्ष-  
 स्तूपमहम् ॥१॥ । सत्रह्यचारिणां श्र[ः]वस्तूपे निर्पातितस्येति(१ शि)त्वम् ॥१॥ । धर्म्यं  
 बुद्धस्य लोहमयं स्तूपकरणम् ॥१॥ । सुवर्णरूप्यवैदूर्यस्फटिकमयानां केशनख-  
 स्तूपानां च ॥१॥ । अनुपरिवारस्यात्र करणम् ॥१॥ । तुपितभवनवासादिपरिनिर्वा-  
 णान्तं वृत्तं तदाख्यम् ॥१॥ । सुधादानम् ॥१॥ । श्वेतनम् ॥१॥ । दीपप्रतिग्रह-  
 णम् ॥१॥ । वेदिकया वेष्टण(१नम्) ॥१॥ । तोरणस्योत्सयणम् ॥१॥ । ध्वजानां  
 दानम् ॥१॥ । चातुर्विध्यमस्य ॥१॥ । सिंहध्वजो मकरध्वजो नागराजध्वजो वृषभ-  
 ध्वज इति ॥१॥ । गहनेऽपि करणम् ॥१॥ । तोरणस्योत्सयणम् ॥१॥ । चैरकस्य करण-  
 म्वेदिकयास्य परिक्षेपः ॥१॥ । स्तम्भानां मे(१र्ग)रिकेन(१ण) लेपनम् ॥१॥ ।  
 भित्तिः(१ च्तेः) लाक्षया चित्रणं गन्धाभिषेकदानम् ॥१॥ । तैलालचन्दनकुंकुमशे(१)  
 कानाश्च ॥१॥ । न कण्टकानां रोपणं नागदन्तकानां माससंयोजनाय दानमुत्ति-  
 ष्ठति ॥१॥ । न छिद्राणां (१) ॥१॥ । नोपरिदीपदानं आगारिकैष्पूजनार्थमधि-  
 रोहणमभावे श्रमणोद्देश्येऽप्यादो(१ दौ) प्रक्षाल्य गन्धोदकेन ॥१॥ । न चेदनेन  
 गन्धैरुद्धृत्य वस्त्रेण वा वेष्टयित्वा शास्तु[ः] संज्ञामामुखीकृत्यार्थमभिधाय  
 स्मृतैः ॥१॥ । तेषामपि भिक्षुभिरैवमेव ॥१॥ । तदर्थं रज्ज्वासंजनम् ॥१॥ । अवच्छेदन-  
 गर्भेण नासकं(१) प्रतिबन्धाय छादनम् ॥१॥ । द्वाराणामनन्धकारायास्य भोचनम् ॥१॥ ।

( ३३ ) बुद्धप्रतिमाकरणम् ।

बुद्धप्रतिकृतै(१ते)स्करणम् ॥१॥ ।

( ३४ ) बुद्धप्रतिमामहः ।

महस्यास्याप्प्रस्थापनम् ॥१॥ । जातिजटाचूडावोधिमहानाश्च ॥१॥ । नगर-  
 प्रवेशे चास्याप्करणम् ॥१॥ । कल्पतेऽत्र मिथोस्तद्वहनम् ॥१॥ । नवकेष्वस्य  
 प्राप्तिः पंचभिः निकायैः परिवारदानम् ॥१॥ । आर्षेयस्य वृद्धेर्ग्रहणम् ॥१॥ । वादित्रेणै-  
 तद्वाद्यमानेन च महता सत्कारेण निरा(१र)वर्घं धादनाय कुरु कुरु भोष् (१भोः)  
 पुरुष ! शास्तुः पूजामित्युदीरणम् ॥१॥ । उद्घोषणं रथ्यावीथिचत्वा(१स्वर) सृ(१ष्ट)ङ्-  
 गाटकेषु ध्वः परश्वो वा भविष्यत्तायां लिखितस्य इति बुद्धप्रवेशो भविष्यतीति  
 भुजादावारोपितस्य हस्तिस्कन्धे छत्रध्वजपताकापरिवृतस्य ॥१॥ ।



( ३५ ) बोधिसत्त्वप्रतिमाकरणम् ।

धर्म्यं बोधिसत्त्वप्रतिमाकरणम् ।<sup>(१)</sup> धजैरस्याः परिवारो वेदिकावेष्टनं  
 लोहस्तम्भे ( ? म्भै ) च ।<sup>(२)</sup> पताकानां तेषु बन्धः ।<sup>(३)</sup> अनुमानकरणम् ।<sup>(४)</sup>  
 आभरणप्रतिधुक्तिरुत्सृज्य पादाभरणं कर्णपूरं च ।<sup>(५)</sup> गन्धाङ्गददानम् ।<sup>(६)</sup>  
 शिविक ( का ) याम्वा हिण्डनम् ।<sup>(७)</sup> रथेन च ।<sup>(८)</sup> छत्रध्वजपताकानां तत्रो-  
 रत्नपत्र ( ? ण ) म् ।<sup>(९)</sup> पुष्पन्ततन्स ( ? पुष्पावतंस ) कस्य शिरसि दाने ।<sup>(१०)</sup>  
 अर्धपाद्ययोश्च ।<sup>(११)</sup> अमिसारस्य निःश्रितैस्तरुणवृद्धैश्च नयनम् ।<sup>(१२)</sup> चक्षुष ( ? )  
 स्वविरैः ।<sup>(१३)</sup> बालसमुद्रकस्य रथे करणं गन्धसमुद्रकेन सम्बिधानम् ।<sup>(१४)</sup> माला-  
 मुक्तिः ।<sup>(१५)</sup> समाप्तायां पूजायां निर्वृतेषु वाद्येषु विप्रक्रान्ते जनकाये मण्डनापन-  
 मनम् ।<sup>(१६)</sup> नात्रौ ( ? न रात्रौ ) ।<sup>(१७)</sup> धर्म्यं प्रव्रजितवासमर्हं ( ? ) प्रस्थापनं ।<sup>(१८)</sup>  
 भक्तकल्पिकस्य कल्पिकस्य प्रतिबोद्धि ( ? मोद्ध ) त्य कल्पिकसमासः ।<sup>(१९)</sup> उत्तरस्य  
 मकट ( ? ) प्रतिपूर्वसेति कल्पिकस्य ।<sup>(२०)</sup>

॥ ( इति ) शयनासनवस्तु धुद्रकादिगतम् ॥

॥ समाप्तञ्च शयनासनवस्तु पश्चिमम् ॥ १७ ॥



## विनयकर्मसंग्रहकारिकाः ।

धारणं विप्रवासं च स्पर्शमग्नेर्निवारिते ।  
 भोजनं बीजाघातं च देशे च हरिते शुचिः ॥  
 उत्सर्गं घृक्षारोहश्च शैक्षा उद्देशयोस्सह ।  
 रत्नस्पर्शनभुक्त्या च जातस्तांनिध्यानान्तयोः ॥  
 भूमिप्ररोहघाताभ्यामुत्सृज्यान्त च सूत्रगतं (?) ।  
 प्रवृषे ( प्रावृष्ये ? ) कत्र वसनं पोषधस्सप्रवारणाः ॥

इत्याद्यस्यान्तभाग लिङ्ग याश्चा भाण्डोपभुग्द्रव कामोपभोग संवा-  
 सानादराशोधकवस्तुकम् ।

स्पर्शपञ्जरनिक्षेपौ प्रतिष्ठा(च्छा)दो निवारणम् ।  
 त्रयं किञ्चित्कचतुष्टयं गणमृतसीम्नि रत्नतः ॥  
 छन्दसंमृष्टसंस्पर्शाच्चतुष्टयं भवति पश्चिमम् ।  
 विधारणं सप्तकं द्वे चान्ये धारणाधिष्ठानोद्धारानुद्धार इति ॥

हिरण्यान्यचीवरासनवर्षकजनसंधार्थं वचनपलसंचतः निष्प्र-  
 योजने हित्वानुद्धृतो नानुशादी च द्वादशपर्य्य (?) नलपहकं  
 चीवरं संक्षेपस्यान्वननुष्पभिशोकभण्डनम् ।

अन्वयाशिक्षणानुस्था (?) नात् ।

जत्वहुलितलोमछ(च्छ)त्री च कर्णकग्रहणे भिक्षोश्च विद्यापा-  
 ठनमोचन संतन्न(?) धारणं ।

गृहे छप्ते लयने मञ्चे उद्धर्तनमंचक उन्मुरोदिका गन्धपिण्या-  
 कतः ।

स्नानोशीरफलकुर्वत्रिशीर्षाणं कार्णङ्कारवृद्धादि ।

छत्रोपानह आसन्दी निपादारिकर्तनं । चोडा विक्रयगृहपति-  
 ष्युत्वा लसुन रजादक धावन दानपरिवर्त्तनतः । वर्णकुलानिष्का-  
 सनन्तरुईष्ट स(?) श)पथ षपथनाथस्यण्डनफोशनसेकाव्युपशयनतः ।

छन्दाववादपोषधवर्षप्रावरणकठिनोद्धारभाजनवर्षाका[ ल ? ]च-  
 र्पावरणवादः ।

पृच्छा वहिश्छोरणे तिरः ।  
 ॥ भिक्षुणीविभङ्गोद्दानम् ॥  
 ज्ञपनं सेकवाक्यञ्च सत्यवाक्यञ्च तद्यथा ।  
 रोहन्तः प्रस्रयोरर्थपोषधस्यात्र सा यदि ॥  
 संघे वैमतिके चांस्यां (?) विवादनित्ठितत्वयोः (।)  
 प्रवारणगते चात्र सर्वस्मिन्नर्घपञ्चके ॥  
 वर्षोपगमने चैव मृतार्थे प्रतिवस्तुना ।  
 दाने कठिनवस्त्रस्य दुष्टुलारोचने पि च ॥  
 दाने वस्त्रस्य गणन् (ने ?) चतुष्के कुलसम्भृति ।  
 तत्प्रस्रब्धयो (?) कुब्जे च सोन्मज्जे ज्ञप्तिमात्रकं ॥  
 मुखसीमद्वयाविप्रवासोन्मत्तप्रवारक (?) ।  
 शय्यासनगृहगणां कल्पभूमेश्च सन्मति ॥  
 कठिनस्य तदास्तर्चुरुद्धारो स्यावसारणं ।  
 विहारो देशिकादीनां स्थलस्यव्यूढनायकं ॥  
 शालाकम्बारकानां विहारकुटिदेशने ।  
 चोदकस्याप्रवासाय सन्मेतज्या (सम्वेतस्या ?) च चारिणः ॥  
 अप्रसादप्रवेदाद्यदित्रोर्यनवेदिनः ।  
 अवन्दनानलार्थं च दण्डशिक्षार्थमेव च ॥  
 एकलाभक्रियायाञ्च शिक्षणा न समुपस्थिते ।  
 पुत्रे ज्ञातौ वहिर्याने ज्ञपनं शैक्ष्यावासनं ॥  
 उपसंपादनं तीर्थयासदानं [च] मोचनं ।  
 सौम्रः साम्र (?म)ग्र दानं च पोषधस्य च सप्तकं ॥  
 पट्टकं च स्मृत्यसंमूढ तत्स्यभावगमष्टकं ।  
 आज्ञप्तध्वस्तदानं च ज्ञपनं सध्रिवाचनं ॥

॥ विनयकर्मसंग्रहकारिकाः समाप्ताः ॥

॥ समाप्तं विनयसूत्रम् । कृतिराचार्यगुणप्रभस्य ॥

॥ अनेन पुण्येन सर्वेषां लोकपिटकभाजनम् ॥

शाक्यभिक्षु धर्मकीर्तिना सत्त्वार्थे लिखितं श्रीमद्विक्रमशिला-  
माश्रित्य फाल्गुणमासे ॥

गुरु-छोस्-किय-ग्रग्स्-पस्-त्रिस-प । व्पल्-ल्दन्-ऽ-त्रि-क्रम-शि-ल्-दप्ते  
ऽस्ल र-व-ल् (=गुरु-धर्मकीर्तिना श्रीमद्विक्रमशिलायां फाल्गुणे मासे)

प्रथम मुखपत्रे-

शी-ल-अ-क-र-स-त्रिस-प (= शीलाकरेण लिखितम् )

विग्रहव्यावर्त्तनी पुस्तकान्ते-

गुरु-ध-र्म-कि-र्-तिस-त्रिस-प-जो-च-म्पिडि-मखन बुयिन् ।

एतस्य धर्मकीर्त्तिवर्णनं देव्लेर-स्रो-पो ग्रन्थे ।